मास्टर ऑफ सोशल वर्क
(M.S.W.)
प्रथम वर्ष

समाज कार्य अभ्यास- प्रथम
Social Work Practice - I
(चतुर्थ प्रश्न पत्र)

दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय,
चित्रकूट (सतना) म.प्र. - ४८५३३४

समाज कार्य अभ्यास–I
(Social Work Practice - I)

ई–संस्करण 2023–24 / M.S.W. –I - 04

प्रेरणा एवं मार्गदर्शन :
प्रो. भरत मिश्र
कुलपति
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

पाठ्यक्रम निर्माण

डॉ. अजय आर. चौरे, म0ग0चि0ग्रा0 विश्वविद्यालय चित्रकूट

पाठ्यक्रम संयोजक

डॉ. अजय आर. चौरे,

पाठ्यक्रम अभिकल्पना एवं सम्पादक मण्डल :

डॉ. कमलेश थापक डॉ. विनोद शंकर सिंह

डॉ. नीलम चौरे डॉ. राजेश त्रिपाठी

मुद्रण प्रस्तुति

डॉ. सन्तोष अरसिया, उपकुलसचिव (दूरवर्ती परीक्षा)

सन्तोष राजपूत, सहायक कुलसचिव (दूरवर्ती परीक्षा)

शिवांगी त्रिपाठी

सम्पर्क सूत्र :
डॉ. कमलेश थापक, निदेशक, दूरवर्ती शिक्षा
दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

दूरभाष– 07670–265460, E-mail – directordistancemgcgv@gmail.com, website : www.mgcgvchitrakoot.com

प्रकाशक :
दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत् शिक्षा केन्द्र
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

प्राक्कथन...

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की तपोस्थली, मंदाकिनी नदी के सुरम्य तट पर स्थापित महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय भारतरत्न नानाजी देशमुख के शैक्षिक चिंतन और संकल्पों की जीवंत अभिव्यक्ति है, जो म.प्र.शासन द्वारा 12 फरवरी, 1991 को विशेष अधिनियम 09, 1991 द्वारा स्थापित हुआ।

विश्वविद्यालय का ध्येय वाक्य है–'विश्वं ग्रामे प्रतिष्ठितम्' अर्थात ग्राम विश्व का लघु रूप है। विश्वविद्यालय चित्रकूट में स्थित है, जो एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थल है। नई पीढ़ी के लिये यह स्थान आदर्श एवं प्रेरणा का केन्द्र है।

विश्वविद्यालय में कृषि, प्रबंधन, अभियांत्रिकी, लोक विज्ञान, ग्रामीण विकास एवं स्थानीय स्वशासन, लोक शिक्षा, कला, संस्कृति एवं साहित्य सहित सभी अकादमिक धारायें प्रभावी रूप में उपस्थित हैं। विश्वविद्यालय, ग्राम को समाज जीवन की मूल इकाई मानकर शिक्षण, प्रशिक्षण, शोध और प्रसार कार्यों से सर्वांगीण विकास के लिए विगत 3 दशकों से अधिक समय से समर्पित प्रयास कर ग्रामोदय से राष्ट्रोदय के संकल्प में लगा हुआ है। विश्वविद्यालय ने अपनी गतिविधियों और कार्यक्रमों के माध्यम से कौशल विकास के उन्नयन एवं प्रमाणन तथा सतत विकास लक्ष्यों की प्राप्ति में महत्वपूर्ण योगदान कर रहा है तथा शासन के सहयोगी के रूप में उल्लेखनीय भूमिका का निर्वहन कर रहा है।

प्राचीन एवं सनातन भारतीय ज्ञान की परम्परा के आलोक में आई, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 चिरवांछित जन आकांक्षाओं की सम्यक् अभिव्यक्ति है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के युगान्तरकारी प्रावधानों को लागू करने में मध्यप्रदेश अग्रणी राज्य रहा है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने नवाचारों के लिए सकारात्मक और अनुकूल वातावरण उपलब्ध कराया है। विद्यार्थियों की पठन–पाठन की स्वतंत्रता, कौशल विकास के समुचित अवसर तथा राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के अनुसार आने वाले भविष्य के लिए तैयार करने की प्रतिबद्धता राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रावधानों में स्पष्टतः दिखाई देती है।

विश्वविद्यालय ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रावधानों को दूरवर्ती के विभिन्न पाठ्यक्रमों में अर्थपूर्ण रूप से जोड़कर इन्हें सत्र 2023–24 से पुनः संशोधित/परिवर्धित रूप में प्रारम्भ किया है। विश्वविद्यालय उच्च शिक्षा के प्रसार एवं रोजगार के अवसर बढ़ाने हेतु दूरवर्ती माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष प्रयास कर रहा है। दूरवर्ती पद्धति से संचालित विभिन्न पाठ्यक्रमों में नियमित संपर्क कक्षाओं के आयोजन, उच्च शिक्षा की स्व–अध्ययन सामग्री एवं नई शैक्षिक प्रौद्योगिकी का उपयोग करते हुए शिक्षार्थी को बेहतर शैक्षणिक अनुभव प्रदान करने की व्यवस्था सुनिश्चत की जा रही है।

विश्वविद्यालय के दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत शिक्षा केन्द्र द्वारा सत्र 2024–25 में संचालित परास्नातक, स्नातक तथा डिप्लोमा स्तरीय दूरवर्ती पाठ्यक्रमों के शिक्षार्थियों हेतु ई–स्वनिर्देशित अध्ययन सामग्री प्रस्तुत करते हुये मुझे हर्ष का अनुभव हो रहा है।
पाठ्यक्रम से जुडे सभी शिक्षार्थियों, अभिभावकों, प्रशासकों, समन्वयकों और अन्य सभी को मेरी मंगलकामनायें

प्रो. भरत मिश्रा
कुलपति

समाज कार्य अभ्यास–I
(Social Work Practice-I)

1.1 परिचय एवं भारत में सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य की ऐतिहासिक विकास

1.2 सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य के विभिन्न तथा अहं, सामाजिक भूमिका, तनाव अनुकूलन

1.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य का अन्य उपचारात्मक पद्धतियों से सम्बन्ध : मनोचिकित्सा, परामर्श

2.1 सामाजिक वैयक्तिक कार्य के सिद्धांत

2.2 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की तकनीकिया : आलम्बन, स्पष्टीकरण, अन्तदृष्टि, तादात्मीकरण, संसाधनों का उचित उपयोग, मूल्यांकन, पर्यावरण परिमार्जन

2.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के चरण : अध्ययन, निदान और उपचार

2.4 सेवार्थी– कार्यकर्ता सम्बन्ध

3.1 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य अभ्यास में मनोसामाजिक उपागम

3.2 साक्षात्कार एवं साक्षात्कार लेने की प्रक्रिया

3.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में अभिलेखन

3.4 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का समाज कार्य की अन्य विधियों से संबंध

3.5 विकासशील देशों में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य अभ्यास, भारत में सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य के क्षेत्र एवं सीमाएं

4.1 सामूहिम कार्य की अवधारणा

4.2 पश्चिम एवं भारत में सामूहिक कार्य का ऐतिहासिक विकास

4.3 सामूहिक कार्य के सिद्धांत, सामूहिक कार्य के चरण

4.4 सामूहिक कार्य का समाज कार्य की अन्य विधियों से संबंध

4.5 सामूहिक कार्य प्रक्रिया में सामूहिक कार्यकर्ता की भूमिका एवं आवश्यक निपुणताएँ

4.6 सामूहिक कार्य प्रक्रिया में कार्यक्रम– अर्श, महत्व एवं कार्यक्रम नियोजन और विकासीय प्रक्रिया

4.7 सामूहिक कार्य अभ्यास में अभिलेखन

5.1 वैयक्तिक एवं सामूदायिक विकास में सामूहिक कार्य की भूमिका

5.2 सामूहिक कार्यक्रम सम्बन्ध में भूमिका

इकाई–प्रथम

1.1 परिचय एवं भारत में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की ऐतिहासिक विकास

1.2 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के विभिन्न अहं, सामाजिक भूमिका, तनाव अनुकूलन।

1.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का अन्य उपचारात्मक पद्धतियों से संबंध : मनोचिकित्सा, परामर्श।

भारत, इंग्लैण्ड एवं अमेरिका में सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य

सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य समाज कार्य कार्य की एक प्रणाली है, जिसके द्वारा एक समस्याग्रस्त व्यक्ति की सहायता निश्चित तरीकों द्वारा की जाती है। इसका मूल उद्देश्य व्यक्तियों की समस्याओं को सुलझाकर इस योग्य बनाया जाता है कि उचित समायोजन स्थापित कर सके। विकास की प्रारम्भिक अवस्था सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य का मुख्य रूप से आर्थिक समस्याओं पर केन्द्रित था। परन्तु कालक्रम के साथ इस उद्देश्य में परिवर्तन तथा विस्तार आया और इसका उद्देश्य व्यक्ति की आंतरिक समस्याओं तथा व्यक्तिगत कठिनाइयों के उपचार पर केन्द्रित हो गया।

सभी प्राचीन धर्मा ने सहायता करने के कार्य को प्रोत्साहन दिया। सा. वैयक्तिक सेवाकार्य का भी उद्विकास समाज कार्य के समान ही धर्मों तथा धार्मिक भावना से प्रेरित होकर हुआ।

इंग्लैण्ड में सा. वैयक्तिक सेवाकार्य का विकास

मध्यकाल में इंग्लैण्ड में गरीबों की सहायता का कार्य चर्च का था। धार्मिक भावना से प्रेरित होकर लोग असहायों, अंधों, लंगड़ों तथा रोगियों की सहायता करते थे। दान वितरण के कार्य की सहायता अधिक महत्व देने के कारण चर्च तथा राज्य में असहमति उत्पन्न हुई जिसके फलस्वरूप सोलहवीं शताब्दी में निर्धनों की सहायता का उत्तरदायित्व राज्य पर हो गया।

एलिजावेथ का धनहीनों के लिये कानून

सन् 1601 में एलिजाबेथ पुअर ला बना जिसके द्वारा पुरखों तथा अभावग्रस्त माता–पिताओं की सहायता करना अनिवार्य कर दिया गया। इस कानून ने निर्धनों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया, समर्थ निर्धन, असमर्थन निर्धन तथा आश्रित बालक।

समर्थ निर्धनों को हाउसेज ऑफ करेक्शन्स या वर्क हाउसेज में रखने की व्यवस्था भी तथा उन्हें दान देना निषिद्ध था। रोगी, निराश्रित, वृद्ध, अन्धे, लंगड़े, गूंगे, बहरे, पागल और वे मातासें जिनके पास छोटे–छोटे बच्चे थे, असमर्थ, निर्धन की श्रेणी में आते थे। अनाथ, पिताहीन, परित्यक्त बालक या निर्धन माता–पिता के बालक आश्रित बालक कहे जाते थे।

पुअर ला अमेंडमेंड ऐक्ट

कार्यग्रह निवासियों के दुर्व्यवहार, उचित व्यवस्था का अभाव, अनैतिकता तथा भ्रष्टाचार के कारण सन् 1982 में पुअर ला अमेंडमेंड ऐक्ट बना। जिरासे अवैतनिक निरीक्षकों के स्थान पर वैतनिक संरक्षक नियुक्त किये गये। आश्रमों की सहायता समाप्त कर दी गयी और न मिलने की अवधि में इच्छुक व्यक्तियों को सहायता दी जाने की व्यवस्था की गयी।

थॉमस चाल्मर्स का योगदान

थामस चाल्मर्स ने अपने अनुभव के आधार पर वैतनिक संरक्षक नियुक्त किये। इन्होंने दानपद्धति की कटु आलोचना की क्योंकि यह व्यवस्था निर्धनों आचार भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन देती थी। स्वावलंबन की इच्छा को निर्बल बनाती थी। इस संबंध में थामस चाल्मर्स ने सुझाव दिया कि–

1. दुर्गति के प्रत्येक मामले की जांच भलीभांति की जाय, कष्ट के सभी कारणों का निश्चय किया, क्योंकि यह व्यवस्था उनमें आचार भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन देती थी। उनमें आत्मनिर्भरता की भावना को विकसित किया जाना चाहिये।

2. यदि आत्मावलम्बन सम्भव न हो तो सम्बन्धियों, मित्रों और पड़ोसियों को अनाथ, वृद्ध, बीमार और अपंगों की सहायता के लिये प्रोत्साहित किया जाये।

3. यदि निर्धन परिवारों की आवश्यकता इस प्रकार भी पूरी न की जा सके तो कुछ धनाढ्य नागरिकों के लिये सम्बन्ध स्थापित किया जाये।

4. केवल जब इन प्रस्तावित तरीकों में से एक भी सफल न हो तो तभी जिले का डीकन अपनी धार्मिक परिषद से सहायता से प्रार्थना करे।

जान हावर्ड तथा एलिजाबेथ फ्राई

सत्रहवीं तथा अठारहवीं शताब्दी में इंग्लैण्ड के कारागारों की व्यवस्था तथा बहुत अस्त–व्यस्त थी। बंदियों के साथ दुर्व्यवहार किया जाता था तथा उनके आवास एवं भोजन तथा वस्त्र की उचित व्यवस्था न थी। जान हावर्ड जेल सुधार के दृढ़ समर्थक थे। उनका विचार था कि अपराधियों को अपराध विशेष के आधार पर दण्ड दिया जाये तथा अपराध के कारणों की खोज की जाये तथा बंदियों को आवश्यक आवश्यकतायें प्रदान की जाये।

श्री ऐलिजाबेथ फ्राई शांति प्रचारक समिति की सदस्य होने के कारण न्यूगेट जेल जिसें धरती पर नरक कहा जाता था, का निरीक्षण कर जेल में ही बच्चों के लिये एक विद्यालय को प्रारम्भ कराने में सफलता प्राप्त की।

हेनरी सोली तथा चार्ल्स स्टुअर्ट लोच चौरिटी आर्गनाइजेशन सोसायटी की स्थापना सन् 1869 में सोसायटी फॉर आर्गनाइजेशन रिलीफ एण्ड रिप्रेसिंग से बदलकर की गयी।

फैनन सैमुअल अगस्टस बारनेट

बारनेट तथा उनके साथियों ने निर्धनता की समस्या को सुलझाने का दो प्रकार से प्रयास किया। अविवेकपूर्ण दान पद्धति बंद करें पुअर ला के अधीन सहायता केवल वर्क हाउस में दी जाय तथा दूसरे इस बात की कोशिश की जाये कि व्यक्तियों को पुनः आत्मावलम्बी बनाय जाये।

थॉमस चाल्मर्स का योगदान

थामस चाल्मर्स ने अपने अनुभव के आधार पर वैतनिक संरक्षक नियुक्त किये। इन्होंने दानपद्धति की कटु आलोचना की क्योंकि यह व्यवस्था निर्धनों आचार भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन देती थी। स्वावलंबन की इच्छा को निर्बल बनाती थी। इस संबंध में थामस चाल्मर्स ने सुझाव दिया कि–

1. दुर्गति के प्रत्येक मामले की जांच भलीमांति की जाय, कष्ट के सभी कारणों का निश्चय किया, क्योंकि यह व्यवस्था उनमें आचार भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन देती थी। उनमें आत्मनिर्भरता की भावना को विकसित किया जाना चाहिये।

2. यदि आत्मावलम्बन सम्भव न हो तो सम्बन्धियों, मित्रों और पड़ोसियों को अनाथ, वृद्ध, बीमार और अपंगों की सहायता के लिये प्रोत्साहित किया जाये।

3. यदि निर्धन परिवारों की आवश्यकता इस प्रकार भी पूरी न की जा सके तो कुछ धनाढ्य नागरिकों के लिये सम्बन्ध स्थापित किया जाये।

4. केवल जब इन प्रस्तावित तरीकों में से एक भी सफल न हो तो तभी जिले का डीकन अपनी धार्मिक परिषद से सहायता से प्रार्थना करे।

जान हावर्ड तथा एलिजाबेथ फ्राई

सत्रहवीं तथा अठारहवीं शताब्दी में इंग्लैण्ड के कारागारों की व्यवस्था तथा बहुत अस्तदृ व्यस्त थी। बंदियों के साथ दुर्व्यवहार किया जाता था तथा उनके आवास एवं भोजन तथा वस्त्र की उचित व्यवस्था न थी। जान हावर्ड जेल सुधार के दृढ़ समर्थक थे। उनका विचार था कि अपराधियों को अपराध विशेष के आधार पर दण्ड दिया जाये तथा अपराध के कारणों की खोज की जाये तथा बंदियों को आवश्यक आवश्यकतायें प्रदान की जाये।

श्री ऐलिजाबेथ फ्राई शांति प्रचारक समिति की सदस्य होने के कारण न्यूगेट जेल जिसें धरती पर नरक कहा जाता था, का निरीक्षण कर जेल में ही बच्चों के लिये एक विद्यालय को प्रारम्भ कराने में सफलता प्राप्त की।

हेनरी सोली तथा चार्ल्स स्टुअर्ट लोच चौरिटी आर्गनाइजेशन सोसायटी की स्थापना सन् 1869 में सोसायटी फॉर आर्गनाइजेशन रिलीफ एण्ड रिप्रेसिंग से बदलकर की गयी।

फैनन सैमुअल अगस्टस बारनेट

बारनेट तथा उनके साथियों ने निर्धनता की समस्या को सुलझाने का दो प्रकार से प्रयास किया। अविवेकपूर्ण दान पद्धति बंद करें पुअर ला के अधीन सहायता केवल वर्क हाउस में दी जाय तथा दूसरे इस बात की कोशिश की जाये कि व्यक्तियों को पुनः आत्मावलम्बी बनाया जाये।

इडवार्ड डेनिसन

इडवार्ड डेनिसन सन् 1887 में माइल इण्ड रोड की फिलपाट स्ट्रीट में रहने लगे। यहां पर इन्होंने एक स्कूल की स्थापना की तथा रात्रि में इस स्कूल में वे पढ़ाने लगे। दिन के समय रोगियों की देखभाल, स्थानीय निकायों का निरीक्षण तथा गरीबों की आवश्यकताओं को जनता व सरकार तक पहुंचाने का कार्य करते थे।

मनोचिकित्सीय वैयक्तिक समाज कार्य

सन् 1850 से 1950 तक का काल औषधि का यांत्रिक युग कहा जाता है, क्योंकि इसमें अनेक चिकित्सा सम्बन्धी कार्य हुए।

सन् 1880 में मनोरोगियों की उत्तर रक्षा के लिये जिससे कि रोग की पुनरावृत्ति न हो, सा. सेवाओं की आवश्यकता मानसिक चिकित्सालयों में अनुभव की गई। चिकित्सीय वैयक्तिक सेवा का दूसरा महत्वपूर्ण आधार महिलादान दाताओं का कार्य था।

अमरीका में सा. वैयक्तिक सेवाकार्य का विकास चौरिटी आर्गनाइजेशन आंदोलन

वैयक्तिक सेवाकार्य का प्राचीन रूप वैज्ञानिक न होने का मुख्य कारण उस युग की धार्मिक, नैतिक, राजनैतिक तथा आर्थिक स्थिति थी। इंग्लैण्ड के समान ही अमेरिका में भी दस संगठन आंदोलन का सूत्रपात सन् 1877 में इपिस कोपल पादरी जो कि लंदन सोसायटी की एक जिला कमेटी में काम कर चुके थे, बुफैलो में हुआ।

19वीं शताब्दी के अंतिम वर्षों में चौरिटी आर्गनाइजेशन सोसाइटीज के कार्यकर्ताओं ने अपना ध्यान विशेष रूप से कम मजदूरी पाने वाले श्रमिकों, बीमारों तथा बड़े शहरों के बेकार लोगों की ओर आकर्षित किया।

चौरिटी आर्गनाइजेशन प्रणाली के विकास तथा आंदोलन से सम्बन्धित जनमत को बदलने में 5 नाम मुख्य रूप से उल्लेखनीय है–

1. राबर्ट ट्रीट पाइने, बास्टर

2. जिल्फा डी. स्मिथ, वास्टन

3. जोसेफाइन शा नोबेल, न्यूयार्क

4. एमोस जी. वार्नर, वाल्टोयर

5. ओस्कर सी. मैक कुलक, इंडियाना पॉलिश

पाइने एक प्रसिद्ध वकील थे जो अपने आर्थिक कार्यो एक सहायताकारी योजनाओं हेतु प्रसद्धि थे। वे 1879 से 1907 तक एसोरियेटेड चेरिटी ऑफ वास्टन के प्रेसीडेन्ट थे। जिल्फा डी. स्मिथ उन्हीं दिनों सेक्रेटरी थी। उनका विश्वास की इस आर्गनाईजेशन के कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण की आवश्यकता है, अतः इनके लिये कक्षायें प्रारम्भ की गई। एमोरा वार्नरा 1887 मेंसेक्रेटरी नियुक्त हुए। श्रीमती नाबेल जोकि अपने विवाह के कुछ ही महीनों बाद विधवा हो गयी थी, अपने शेषजीवन को सामाजिक उत्थान के लिये अर्पित कर दिया।

ओसकार मैककूलक ने एक सेल्समैन से अपना जीवन प्रारम्भ कर मानव सम्बन्धों के क्षेत्र में विशेष योग्यता प्राप्त की।

उपर्लिखित प्रयासों के बावजूद भी सा. वैयक्तिक सेवाकार्य शब्द स्पष्ट नहीं हो सका न ही विकसित हो सका। इस शब्द का उल्लेख प्रथम बार इडवार्ड टी. डेवाइन के एक लेख में हुआ। इसके पश्चात 1909 मेकं किसी कान्फ्रेस में इस शब्द का प्रयोग हुआ। सन् 1995 ई. से 1920 तक मेरी स्विमण्ड ने अनेक लेख प्रकाशित किये किंतु 1911 से पहले वैयक्तिक कार्य शब्द का प्रयोग न हुआ। 1917 में अपनी पुस्तक ''सोशल डाइगनोसिस" प्रकाशित कर इस शब्द को आधार प्रदान किया।

चिकित्सीय सेवाकार्य

सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य का उपयोग चिकित्सालयों में 19वीं शताब्दी के अंतिम वर्षों में प्रारम्भ हुआ। सन् 1893 में हेनरी स्ट्रीट सेटेलमेन्ट हाउस न्यूयार्क की विलियम वाल्ड तथा मेरी ब्रेवेस्टर ने रोगियों के घरों का निरीक्षण करना प्रारम्भ किया । इन्होंने अनुभव किया कि बीमारी के कारण रोगी के घर में ऐसी अनेक समस्यायें उत्पन्न हो जाती है जिनको व्यक्तिगत तथा सामाजिक दोनों प्रकार से समाधान करना महत्वपूर्ण होता है। अतः सेवाकार्य हेतु विजिटिंग नर्सेज की व्यवस्था की गयी। डॉ. स्किवार्ड सी. कैवोट तथा इडा एम. कैनन ने विशेष रूप से चिकित्सा के क्षेत्र में वैयक्तिक सेवा कार्य की आवश्यकता महसूस की गई।

मनोविज्ञान तथा वैयक्तिक सेवा कार्य

सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य के तरीकों तथा कार्यप्रणाली पर मनोविज्ञान तथा मनोविकार विज्ञान के वैज्ञानिक विकास तथा उसकी बढ़ती हुई आवश्यकता का प्रभाव पड़ा।

मनोचिकित्सीय वैयक्तिक सेवाकार्य

मनोचिकित्सा के क्षेत्र में सा वैयक्तिक सेवाकार्य के विकास को चार उद्‌गम बिंदुओं से जाना जाता है–

1. मनोरोग चिकित्सा कक्षों तथा मानसिक चिकित्सालयों में रोगियों के लिये व्यक्तिगत वैयक्तिक कार्य और अनुरक्षण की आवश्कता।

2. बाल न्यायालयों के सम्मुख प्रस्तुत करने लगे एवं चाइल्ड गाइडेंस क्लिनिक्स एवं सा. संस्थाओं के पास उनके उपचार व समंजन के लिये भेजे गये बालकों और किशोरों के साथ वैयक्तिक कार्य।

3. मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान क्लिनिकों में प्रौढ़ रोगियों के साथ वैयक्तिक कार्य।

4. सैनिक तथावैटेरन्स चिकित्सालयों एवं क्लिनिकों में मनस्नायु रोगियाकें के साथ वयक्तिक कार्य एवं समूह कार्य।

असमान्य व्यवहार प्रारूप तथा वैयक्तिक सेवाकार्य

मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त ने स्वतंत्र साहचर्य तथा स्वप्न विश्लेषण विधि का सूत्रपात किया। व्यवहारिक प्रारूप के मनोवैज्ञानिकों ने व्यवहार संशोधित विधियों का विकास मनोविकारों को दूर करने के लिये किया सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य को उपयोग की दृ ष्टि से दो भागों में बांटा जा सकता है।

1. सामान्य सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य

2. विशेषीकृत सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य

सामान्य वैयक्तिक सेवाकार्य एक संस्था द्वारा किया जाता है जबकि विशेषीकृत सा. वै. सेवाकार्य उन संगठनों में होता है, जिनका उद्देश्य इससे पृथक तथा प्राथमिक होता है, जैसेस्कूल, न्यायालय आदि।

भारत में सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य

प्राचीन दृष्टिकोण

भारत में दीनदु:खियों, असहायों तथा पीड़ित व्यक्तियों की सहायता करने की परम्परा प्राचीनकाल से ही चली आ रही है। मनोचिकित्सा सम्बन्धी कार्य भी प्राचीन युग से चले आये हैं। कृष्ण का अर्जुन को उपदेश वशिष्ठ का राम को कर्तव्य बोध कराना, बुद्ध का अंगुलिमान के व्यवहार प्रो. परिवर्तित करना आदि इसके उदाहरण है। भारतीय संस्कृति तथा धर्म का मूल उद्देश्य उन व्यक्तियों की सहायता करना है जो उत्पीड़ित हो तथा दयनीय जीवन व्यतीत करते हैं। प्राचीन काल से लेकर आज तक भी भिखारियों को दान देना, निर्धनों तथा असहायों की सहायता करना, धर्मशालायें बनवाना, रोगियों की सेवा करना आदि पुण्य के कार्य समझे जाते हैं।

बौद्ध काल

बौद्धकाल में समाज की भलाई के लिये अनेक प्रकार से उपदेश देने का प्रबन्ध किया गया था। बोधिसत्व में इस बात का उल्लेख मिलता है कि दानी व्यक्तियों के कौन–कौन से कार्य थे। इसके अनुसार पहले अपने सम्बन्धियों व मित्रों की सहायता करनी चाहियके फिर उसके बाद रोगी, निर्धन व असहायों की।

मौर्य काल

मौर्यकाल में सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य का क्षेत्र अधिक व्यापक हो गया था। बच्चों, वृद्धों तथा रोगग्रस्त व्यक्तियों की दकेखभाल का कार्य अत्यन्त धार्मिक समझा जाता था। गांव के वयोवृद्ध या मुखिया माता–पिता विहीन बालकों की देखभाल का कार्य करता था।

इस्लाम काल

13वीं शताब्दी से भारतीय लोकजीवन का अविर्भाव हुआ। इस्लाम धर्म में प्रारम्भ से ही भिक्षा देने की व्यवस्था तथा प्रथा रही है। यह दान उन व्यक्तियों को दिये जाने की व्यवस्था है जो हज पर जाने का व्यय वहन न कर सकें, जिनके पास भोजन न हो तथा भिखारी हों या जिन्होने अपना सम्पूर्ण जीवन ईश्वर हेतु अर्पित किया हो। कुतुबुद्दीन, इल्तुतमिश, नासिरूद्दीन आदि ने महत्वपूर्ण कार्य किये।

अंग्रेजी शासन काल

अंग्रेजी शासन काल में अनेक समाज सुधार आंदोलनों का सूत्रपात हुआ। राजाराम मोहनराय ने बालविवाह तथा सतीप्रथा को रोकने का प्रयत्न किया। फलस्वरूप 1829 में सतीप्रथा को अधिनियम द्वारा अवैध घोषित किया गया। 1856 में हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम पारित हुआ। गांधी जी के प्रयत्नों के फलस्वरूप अनेक सुधार सम्भव हुए। भारत में 1936 से पहले वै. सेवाकार्य ऐच्छिक कार्य समझा जाता था। 1936 में पहली बार समाज कार्य की व्यवसायिक शिक्षा के लिये एक संस्था सर दोरावजी टाटा ग्रेजुएट स्कूल ऑफ शोसल वर्क के नाम से स्थापित हुई।

स्वतंत्रता के बाद

बीसवीं शताब्दी में ऐसी सामाजिक संस्थाओं में वृद्धि। अनाथालयों, शिशु सदनों की तथा ग्रंथों के लिये स्कूलों की स्थापना की गयी। विकलांग बालकों के लिये पहली बार सन् 1947 में एक ऐच्छिक संस्था स्थापित हुई। इस संस्था के कार्यों से प्रभावित होकर भारत ने अनेक चिकित्सालयों में विकलांग विभाग स्थापित हुए। सन् 1952 में इण्डियन काउंसिल फॉर चाइल्ड वेलफेयर की स्थापना हुई।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का चिकित्सा में शीघ्र ही उपयोग होना प्रारम्भ हुआ। मोरे कमेटी ने 1945 ई. में चिकित्सालयों में प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ता की नियुक्ति की सिफारिश की। सन् 1946 ई. में टाटा इन्स्टीट्यूट में चिकित्सीय समाज कार्य की शिक्षा का प्रबन्ध किया गया।

सन् 1946 में जे.जे. हॉस्पिटल बाम्बे में प्रथम चिकित्सीय सामाजिक कार्यकर्ता की नियुक्ति हुई थी। यद्यपि यह सत्य है कि चिकित्सीय समाज कार्य का क्षेत्र व्यापक हो रहा है परन्तु कार्यकर्ता अपनी भूमिका को पूरा करने में अनेक बाधायें अनुभव कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त प्रशिक्षितकार्यकर्ता को चयन में वरीयता नहीं मिलती है। आशा है समय के साथ–साथ इस दृष्टिकोण में परिवर्तन आसेगा तथा सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का सामान्य विकास सम्भव हो सकेगा।

भारत में सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य

प्रस्तावना

भारत में दीनदुखियों असहायों तथा पीड़ित व्यक्तियों की सहायता करने के परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही है। मनोचिकित्सा सम्बन्धी कार्य भी प्राचीन युग से होते चले आये हैं। ष्कृष्ण का अर्जुन को उपदेश देना वशिष्ठ का राम को कर्तव्य बोध कराना बुद्ध का अंगुलिमान व्यवहार को परिवर्तित करना आदि इसके उदाहरण है।

भारतीय संस्कृति तथा धर्म का मुख्य उद्देश्य उन व्यक्तियों की सहायता करना है जो उत्पीड़ित है तथा दयनीय जीवन व्यतीत करते हैं। प्राचीन काल से लेकर आज तक भी भिखारियों को दान देना निर्धनों तथा असहायों की सहायता करना, धर्मशालाएं बनवाना रोगियों की सहायता करना आदि पुण्य के कार्य समझे जाते रहे हैं।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि ऐसे सहायता मूलक कार्य करने के लिए व्यक्तियों में होड़ लगती थी।

2. बौद्ध काल

बौद्ध काल में समाज की भलाई के लिए अनेक प्रकार के देने का प्रबन्ध किया गया था व्यक्तियों के कौन–कौन से कार्य थे। बोधिसत्व के अनुसार सहायताकारी कार्यों को अपने सगे सम्बन्धियों तथा मित्रों की सहायता उसके पश्चात असहाय रोगों, संकटग्रस्त तथा रद्रि व्यक्तियों की सहायता करनी चाहिए।

3. मौर्य काल

मौर्य काल में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का क्षेत्र अधिक व्यापक हो गया था। बच्चों, वृद्धों तथा रोगग्रस्त व्यक्तियों की देखभाल का कार्य अत्यन्त धार्मिक समझा जाता था। गांव के वयोवृद्ध तथा मुखिया माता पिता विहीन बालकों की देखभाल का कार्य करता था। निर्धन बच्चों के लिए निःशुल्क शिक्षा तथा भोजन का प्रबंध अध्यापक करता था।

4. इस्लाम काल

13वीं शताब्दी से भारतीय लोक जीवन में इस्लाम का आविर्भाव हुआ । इस्लाम धर्म में प्रारम्भ से ही शिक्षा देने की व्यवस्था तथा प्रथा रही है। यह दान उन व्यक्तियों को दिये जाने की व्यवस्था है। जो हज पर जाने को व्यय न वहन कर सके, जिसके पास भोजन न हो, भिखारी हो तथा जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन ईश्वर हेतु अर्पित कर दिया हो। जकात से प्राप्त धन का उपयोग समाज कल्याण कार्यों में ही किया जाता था। कुतुबुद्दीन, इल्तुतमिश, नासिरूद्दीन आदि सुल्तानों इस क्षेत्र में अनेक कार्य किये। फिरोज ने ऐसे व्यक्तियों की सहायता करने के लिये संस्था का निर्माण किया था। मुल्कि काल में ऐसी अनेक दुकाने खोल दी जाती थी। जहां पर सस्ते मूल्य पर अनाज मिलता था। उस समय एक ऐसे विभाग का संगठन भेदभाव को रोकने के लिये की जाती थी।

सुल्तान गयासुद्दीन तुगलक ने व्यक्तियों को रोजगार देने तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने का बृहद् की संतुष्टि का न होना है। उनका विचार था कि अपराधों का कारण आवश्यकताओं की संतुष्टि का न होना है।

5. अंग्रेजी शासन काल

अंग्रेजी शासन काल में अनेक समाज सुधार आन्दोलनों का सूत्रपात हुआ । श्राजाराम मोहनराय ने बाल विवाह तथा सती प्रथा को रोकने का प्रयत्न किया। उनके प्रयत्नों के फलस्वरूप सन् 1829 ई. में प्रतिबन्ध अधिनियम (Regulation Act) पारित किया गया जिसने सती प्रथा को अवैध घोषित कर दिया।

सन् 1866 ई. हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम पास हुआ। गांधी जी के प्रयत्नों के फलस्वरूप अनेक सुधार सम्भव हो सके।

भारत में सन् 1936 ई. से पहलें सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य को एक ऐच्छिक कार्य समझा जाता था। सन् 1936 ई. में पहली बार समाज कार्य की व्यावसायिक शिक्षा के लिए एक संस्था पर दोरावजी टाटा ग्रेजुएट स्कूल आफ सोशल वर्क के नाम से स्थापित हुई। इस समय इस बात की आवश्यकता महसूस हो चुकी थी कि वैयक्तिक सेवा कार्य करने के लिए औपचारिक शिक्षा अनिवार्य है।

6. स्वतंत्रता के बाद

बीसवीं शताब्दी में ऐसी समाज सेवी संस्थाओं की वृद्धि हुई। अनाथालयों, शिशु सदनों को तथा अंधो के लिये स्कूलों की स्थापना की गयी, विकलांग बालकों के लिए पहली बार सन् 1847 ई. में एक ऐच्छिक संस्था स्थापित हुई। इस संस्था के कार्यों से प्रभावित होकर भारत के अनेक चिकित्सालयों संस्था स्थापित हुई। इस संस्था के कार्यों से प्रभावित होकर भारत के अनेक चिकित्सालयों में विकलांग चिकित्सा विभाग स्थापित हुई। सन् 1952 ई. इण्डियन कौंसिल फार चाइल्ड वेलफेयर की स्थापना हुई जिसका उद्देश्य शिशु कल्याण के क्षेत्र में कार्य करने वाली स्थाओं के बीच समन्वय स्थापित करना और दूसरी ओर ऐच्छिक संस्थाओं एवं राज्य के बीच सम्पर्क स्थापित करना है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का चिकित्सा क्षेत्र में उपयोग होना शीघ्र ही प्रारम्भ हुआ। जब भारतीय चिकित्सक अमेरिका तथा इंग्लैण्ड गये और उन्होंने रोगियों के साथ सेवा कार्य के महत्व को समझा तथा भारतीय चिकित्साओं ने भी इसके विकास पर जोर दिया है। दि हेल्थ सर्वे एण्ड डेवलपमेन्ट कमेटी (मोरे कमेटी) ने सन् 1945 ई. चिकित्सालयों में प्रशिक्षित सामाजिककार्यकर्ता की नियुक्ति की सिफारिश की मानसिक चिकित्सालयों की स्थापना तथा इसमें मनोसामाजिक कार्यकर्ताओं के महत्व को समझा जाता है।

सन् 1946 ई. टाटा इन्स्टीट्यूट ने चिकित्सकीय समाज कार्य की शिक्षा का प्रबंध किया सन् 1944 ई. डा. जे.एम. कुमारप्पा इन्स्टीट्यूट के निदेशक अमेरिका गये तथा चिकित्सकीय समाज कार्य के लिए विजिटिंग प्रोफेसर के लिए समझौता किया। इसके परिणाम स्वरूप लुईस विले, कंटकी की मिस लुईस ब्लैन्की नवम्बर सन् 1946 ई. में भारत आयी। कुछ महीनों तक उन्होंने भारतीस स्वास्थ्य समस्याओं को समझने तथा चिकितरालयों की

समस्याओं से अवंगत होने में अपना ध्यान लगाया। कुछ समय बाद एक नये विभाग चिकित्सकी तथा मनोचिकित्सकीय समाज कार्य का संगठन किया जिरा अवधि में गिरा ब्लैन्की भारत आयी थीं उन्हीं दिनों डॉ. (मिस) जी.आर. बनर्जी चिकित्सकीय तथा मनोचिकित्सकीय समाज कार्य में प्रशिक्षण हेतु शिकागो गयी और वापस आकर मिस ब्लैन्की से सन् 1948 ई. में कार्यभार संभाल लिया।

यद्यपि यह सत्य है कि सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का क्षेत्र व्यापक हो रहा परन्तु कार्यकर्ता अपनी भूमिकाओं को पूरा करने में अनेक बाधाएं अनुभव कर रहे है। इसके अतिरिक्त प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं को चयन में कोई विशेष वरीयता नहीं मिलती है । आशा है, समय परिवर्तन के साथ–साथ इस दृष्टिकोण में परिवर्तन आयोग तथा सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का सामान्य विकास सम्भव हो सकेगा।

1. भारत में सामाजिक व्यक्ति सेवा कार्य की सीमाएँ

स्वतंत्र साहचर्य वैयक्तिक सेवा कार्य की विशिष्ट प्रविधि नहीं है। क्योंकि वैयक्तिक सेवा कार्य में सदैव सेवार्थी और समस्या में संबंध पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। उद्देश्य पर ध्यान विशेष रहता है। अतः साक्षात्कार को एक दिशा आवश्यक देनी होगी। उसकी सीमाएं निश्चित करनी होगी। प्रारम्भिक साक्षात्कारों में सीमा नहीं निश्चित की जाती है। क्योंकि उस समय न तो कोई उद्देश्य निश्चित होता है और न ही समस्या के तथ्यों का ज्ञान हो पाता है। जब निदानात्मक तथा उपचारात्मक उद्देश्य स्पष्ट हो जाते हैं, उस समय कार्यकर्ता को लघुकालीन तथा दीघ्रकालीन लक्ष्यों को ध्यान में रखकर साक्षात्कार को निर्देशित करना चाहिए। सीमा बन्धन से वास्तविक लक्ष्यों की पूर्ति होती है, निम्नलिखित प्रमुख सीमाएं हैं–

1. संस्था उद्देश्य के अनुसार भावनाओं का स्पष्टीकरण चाहती हैं। जिनका उसके पास साधन है। वे ही समस्याएं सुनना चाहती है। जिस संस्था में सावेगिक समस्याओं को समाधान करने के साधन नहीं होते हैं। वहां कार्यकर्ता इन भावनाओं को स्पष्टीकरण पर, बल नहीं देता है। समय की सीमा भी निश्चित होती है। कार्यकर्ता पर जितना कार्यभार होता है उसी के अनुसार प्रत्येक सेवार्थी की समस्या का समय देता है। उसी के अनुसार प्रत्येक सेवार्थी की समस्या को समय देता है। वह उन भावनाओं को प्रकट होने के लिएप्रोत्साहन नहीं देता है। जिनका वह समाधान नहीं कर सकता है। उदाहरण के लिए आर्थिक सहयोग देने की संस्था मनोविकारों के सम्बंध में कोई समस्या नहीं लेगी।

2. प्रारम्भिक साक्षात्कार में कार्यकर्ता की सेवार्थी की अपरिपक्व भावनाओं को समझना आवश्यक होता है। कभी–कभी सेवार्थी बहुत कम समय में बहुत बाते कह जाता है, परन्तु वह स्वयं उनका अर्थ नहीं जानता है एवं गहराई तक पहुंचने में असमर्थ रहता है। अपरिपक्व भावनाएं तथा अनिच्छा कभी–कभी सेवार्थी में ग्लानि उत्पन्न कर देती है। जिसके परिणामस्वरूप सम्बन्धों में रूकावट उत्पन्न हो जाती है।

3. यद्यपि भावनाओं के प्रकटन का उद्देश्य सेवार्थी की मनोवैज्ञानिक आलम्बन प्रदान करना है तथा उसकी भावनाओं में भाग लेना है, परन्तु ऐसा न हो सेवार्थी पूरी तरह से कार्यकर्ता पर आश्रित हो जाए। अतः वैयक्तिक कार्यकर्ता को सेवार्थी पर रोक लगानी आवश्यक हो जाती है। यद्यपि भावनाओं के स्पष्टीकरण में निर्मरता स्वतः उत्पन्न हो जाती है परन्तु इस स्थिति में अतिनिर्भरता नहीं होने देना चाहिए।

4. यद्यपि सेवार्थी की उग्रात्मक भावनाओं को जानना वैयक्तिक कार्यकर्ता के लिए आवश्यक होता है। परन्तु संस्था स्वयं कार्यकर्ता के प्रति उग्रात्मक व्यवहार सम्बन्ध को विघटित कर देता है अतः इसे मान्यता नहीं देनी चाहिए।

5. वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी की भावनाओं का अन्तर करता है। परन्तु उनके सकारात्मक परिवर्तन पर भी बल देता है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य के विभिन्न कम्पोनेन्ट्स

1. सामाजिक भूमिका, 2. अनुकूलन, 3. अहं, 4. तनाव।

सामाजिक भूमिका

वैयक्तिक सेवाकार्य का लक्ष्य सेवार्थी की समस्याओं को सुलझाते हुए, उसकी क्षमताओं का विकास करना होता है। जिससे वह यथासंभव सुख व संतोष प्राप्त करे इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वैयक्तिक कार्यकर्ता प्रत्येक सेवार्थी का अध्ययन करके उसकी समस्या का निदान करता है। वह सेवार्थी की संपूर्ण सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक स्थिति का अन्वेषण करके उसकी वास्तविक तनावपूर्ण स्थिति के कारको को निश्चित करता है। वह न केवल सेवार्थी की वर्तमान स्थिति का पता लगाता है। बल्कि पूर्वगामी घटनाओं तथा सेवार्थी की भूमिकाओं की भी विवेचना करता है। सेवार्थी एवं उसकी स्थिति का अध्ययन की गहनता निम्न दो कारको पर निर्भर होती है।

1. संस्था द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं की प्रवृत्ति।

2. सेवार्थी को समझने तथा चिकित्सा करने के लिए संस्था से संबंधित संदर्भ का प्रत्ययात्मक स्वरूप।

सामाजिक भूमिका

सामाजिक परिस्थिति में व्यक्ति अपनी भूमिकाओं को पूर्ण करने में असमर्थ होता है तो अपनी इस तनावपूर्ण स्थिति से समायोजन प्राप्त करने के लिए सहायता प्राप्त करने की आशा से संस्था में आद्य है। सामाजिक सांस्कृतिक व्यवस्था में व्यक्ति अपनी आयु, लिंग, जाति, प्रजाति एवं व्यक्तिगत योग्यता के आधार पर जिस स्थिति को वह प्राप्त करता है। वह उसकी परिस्थिति कहीं जाती है और स्थिति के संदर्भ में सामाजिक परंपरा, प्रथा, नियम एवं कानून के आधार पर जो भूमिका उसे निभानी होती है। वह उसका कार्य या भूमिका होती है।

भूमिका की अवधारणा में दो तत्व होते हैं–1. प्रत्याशाएं, 2. क्रियाएं।

सामाजिक भूमिका की परिभाषा

आर. लिंटन के अनुसार, ''भूमिका शब्द का प्रयोग किसी स्थिति से संबंधित सांस्कृतिक प्रतिमान की समग्रता के लिए किया जाता है। इस प्रकार भूमिका के अंतर्गत हम उन सभी

मनोवृत्तियों, मूल्यों तथा व्यवहारों को सम्मिलित करते हैं। जिन्हें कि समाज एक स्थिति विशेष पर असीम प्रत्येक एवं सभी व्यक्तियों के लिए निर्धारित करता है।''

एस. एस. साजैण्ट के अनुसार,''किसी व्यक्ति की भूमिका सामाजिक व्यवहार का वह प्रतिमान अथवा पुरुष है। जोकि उसे एक परिस्थिति विशेष में अपने समूह के सदस्यों की मांगों एवं प्रत्याशाओं के अनुरूप प्रतीत होता है।''

भूमिका की निम्नलिखित भूमिकाएं हैं–

1. भूमिका एक सामाजिक स्थिति का क्रियात्मक पक्ष है।

2. भूमिका में अन्तः संबंधित व्यवहार होता है।

3. व्यक्ति का भूमिका संबंधी व्यवहार सामाजिकप्रत्याशाओं के अनुरूप होता है।

4. भूमिका के स्वरूप की सामाजिक मूल्य, आदर्श तथा उद्देश्य निर्धारित करते हैं।

5. सामाजिक मूल्यों, आदर्शों एवं अवसरों के परिवर्तन से भूमिका बदल जाती है।

6. भूमिका के कई क्षेत्र होते हैं और एक भूमिका एक निश्चित क्षेत्र में ही उपयुक्त होती है।

7. सभी व्यक्ति सामाजिक प्रत्याशाओं के अनुरूप अपी भूमिका नहीं निभा पाते हैं।

सामाजिक भूमिका की प्रभावात्मकता, पूर्णता, स्वीकृति तथा उपयुक्तता दो तत्वों पर निर्भर करती हैं–1. व्यक्ति की संप्रेरणा तथा क्षमता तथा 2. संबंधित सामाजिक पर्यावरण की क्षमता, संप्रेरणा तथा आशाएं।

सामाजिक भूमिका के तत्व

1. एक दी हुई स्थिति में भूमिका के अंतर्गत कुछ निश्चित क्रियाएं तथा व्यवहार होते हैं। वैयक्तिक कार्यकर्ता को ज्ञात करना होता है कि सेवार्थी अपनी भूमिकाओं तथा क्रियाओं को किस प्रकार पूरा करता है।

2. प्रत्येक भूहिमका में अन्तःक्रिया अवश्य होती है, कोई भी भूमिका धकेले में सम्पन्न नहीं होती है। एक या एक से अधिक व्यक्ति अवश्य ही भूमिका से संबंधित होते हैं। कार्यकर्ता के लिए आवश्यक होता है कि यदि सेवार्थी भूमिका संबंधी समस्या से पीड़ित है। तो उसकी संपूर्ण सामाजिक अन्तःक्रिया की विवेचना करे।

3. भूमिका में सामाजिक प्रत्याशा तथा सामाजिक प्रक्रिया प्रतिमान होते हैं। व्यक्ति सामाजिक अन्तःक्रिया द्वारा संबंधों का विकास करता है। संबंधों की स्थापना आदान–प्रदान प्रक्रिया द्वारा सम्पन्न होती है। जहां व्यक्ति को एक ओर सामाजिक स्थिति से संबंधित भूमिका को पूरा करने की प्रत्याशाएं भी समाज की होती हैं।

4.सामाजिक भूमिका में सांवेगिक मूल्या तथा भावनाएं निहित होते है। प्रत्येक मानवीय क्रियाओं में जिसमें आदान–प्रदान का संबंध होता है। सांवेगिक मूल्य अवश्य ही पाये जाते

है। व्यक्ति प्रायः भूमिकाओं तथा संबंधों के विषय में चाहिए आशा की जाती है। "आवश्यक है" अच्छा–बुरा, योग्य, मूर्खतापूर्ण, अर्थपूर्ण आदि शब्दों द्वारा मूल्यात्मक निर्णय व्यक्त करते हैं।

सामाजिक भूमिका एवं सामाजिक संस्थाएं

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य व्यक्ति की सहायता विभिन्न प्रकार की समाज कल्याण संस्थाओं द्वारा करता है। अतः इन संस्थाओं में आने वाले सेवार्थियों के सामाजिक भूमिकाओं का समझना आवश्यक प्रतीत होता है।

जन सहायता संस्था में सामाजिक भूमिका

जन सहायता संस्था में दो प्रकार की सहायता प्रदान की जाती है। सामान्य सहायता तथा विशिष्ट सहायता कार्यक्रम, विशिष्ट सहायता के अन्तर्गत चार प्रकार की सहायता आती है–

1. आश्रित बालकों की सहायता

2. वृद्धावस्था सहायता

3. अन्धों की सहायता

4. अस्थायी या पूर्ण शारीरिक अयोग्य व्यक्तियों की सहायता।

पारिवारिक सेवा में सामाजिक भूमिका

पारिवारिक सेवा संस्था में आने वाले सेवार्थी पति–पत्नी या माता–पिता तथा बच्चों के बीच भूमिका संबंध में कठिनाई महसूस करते हैं। भूमिका की पुनसंरचना तथा भूमिका कार्यों का पुनर्निर्धारण न केवल मुख्य व्यक्ति की मृत्यु, अपराध, रोग तथा अन्य आकस्मिक घटना के कारण होता है। बल्कि में बालक के जन्म, दत्तक पुत्र, सौतेले माता पिता तथा अन्य नये व्यक्ति के सदस्य बनने पर भी आवश्यक हो जाता है। इस स्थिति में प्रत्येक सदस्य की भूमिका पुनर्निर्धारण होता है। इस निर्धारण में यदि सदस्यअनुकूल व्यवहार प्रदर्शित करने में असमर्थ होता है। तो समस्या गंभीर हो जाती है।

भूमिका का प्रत्यय पत्नी, माँ पति अथवा पिताजी भी संस्था में आता है। उसको समझने में सहायक साधन का कार्य करता है। वैयक्तिक कार्यकर्ता परिवार सेवा संस्था में संबंध स्थिति का अध्ययन करता है तथा मूल्यांकन द्वारा निष्कर्ष निकलता है कि किस प्रकार का वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी संबंध सेवार्थी की असन्तुलित तनावपूर्ण स्थिति में लाभकारी सिद्ध होगा। कार्यकर्ता यह भी निश्चित करता है कि किस प्रकार के परिवर्तन किये जाये जिससे सेवार्थी संबंधों में संतुलन उत्पन्न हो सके।

बाल कल्याण में सामाजिक भूमिका

बाल कल्याण सेवाओं का उद्देश्य फोस्टर बालक तथा दत्तक बालक की भूमिका से संबंधित समस्याओं का समाधान करना है। वैयक्तिक कार्यकर्ता इन बालकों की आवश्यकताओं, सम्प्रेरणाओं, क्षमताओं तथा सीमाओं का अध्ययन करता है।

विद्यालय समाज कार्य में सामाजिक भूमिका

वैयक्तिक कार्यकर्ता विद्यालय में पढ़ने वाले उन बालकों की समस्याओं का अध्ययन, निदान एवं चिकित्सा करता है। जो अपनी भूमिका को पूरा करने में असमर्थ होते हैं। कार्यकर्ता बालक के अध्ययन के साथ–साथ संबंधित अध्यापक का भी अध्ययन करता है। सामाजिक प्रत्याशाओं का पता लगाता है। किन प्रत्याशाओं को पूरा करने में बालक असफल हो रहा है। इसका भी ज्ञान प्राप्त करता है। कार्यकर्ता बालक के माता–पिता का भी समस्या समाधान में राहयोग प्राप्त करता है तथा उनकी बाधक भूमिकाओं को परिवर्तित करने में सहायता करता है। कार्यकर्ता का उद्देश्य बालक में शक्तियों एवं क्षमताओं का पुष्टिकरण करना होता है। जिससे संतोषप्रद प्रभावात्मक तथा स्वीकृत भूमिका सम्पादित कर सके।

अनुकूलन

भूमिका अर्थ उस प्रयास को सम्पन्न करना होता है जिसके द्वारा व्यक्ति सामाजिक परिस्थिति में समायोजन स्थापित करता है। परन्तु आंतरिक एवं बाह्य उत्प्रेरकों तथा परिस्थितियों के प्रभाव के कारण कभी–कभी व्यक्ति भूमिका सम्पादन के दबाव एवं तनाव की अनुभूति करता है। अतः तनावपूर्ण स्थिति का अनुभव प्रायः दो कारणों से होता है–

1. परिवर्तन स्थिति की मांगों से संबंधित भूमिकाओं के अभ्यस्त तथा पूर्व तरीकों के द्वारा पूरा करने की अक्षमता अथवा अनौचित्यता।

2. व्यक्तिगत सम्प्रेरणाओं एवं क्षमताओं के परिवर्तन होने की अवस्था में अपरिवर्तित भूमिकाओं को पूरा करने में व्यक्तिगत असन्तुलन।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में सेवार्थी की अनुकूलन प्रविधियों की शक्तियों, क्षमताओं, प्रभावी आदि का महत्वपूर्ण स्थान होता है। सेवार्थी में अनुकूलन करने की कितनी शक्ति एवं क्षमता है। यह निश्चित करती है कि सेवार्थी सामाजिक पर्यावरण से समायोजन करने में कहां तक सफल होगा, तनावपूर्ण स्थिति को वह किस प्रकार सुलझाने का प्रयास करता है तथा अपने प्रयत्नों को किस प्रकार परिवर्तित करता है। यह निश्चित करता है कि उसकी कठिनाई एवं समस्या को कितनी जल्दी दूर किया जा सकता है। कार्यकर्ता यह जान लेने के पश्चात दो प्रकार के प्रयत्न करता है। वह या तो व्यक्ति की आंतरिक शक्तियों को संबल प्रदान करके अनुकूलन को संभव बनाता है या फिर सामाजिक स्थिति में ही परिवर्तन का प्रयास करता है। व्यक्ति तनावपूर्ण स्थिति में तीन प्रकार से अनुकूलन करता है–

1. अभ्यस्त एवं पूर्व निश्चित तरीकों के उपयोग द्वारा

2. संघर्ष, समानता अथवा कल्पना की उड़ान द्वारा

3. उदासीनता, मानसिकता उन्मुखता, प्रत्याहार, अगतिमानता अथवा अति सक्रियता द्वारा।

व्यक्ति सर्वप्रथम अपनी समस्या का समाधान अपने पूर्व तरीकों एवं अभ्यस्त प्रविधियों द्वारा करने का प्रयत्न करता है। यदि इस प्रकार उसकी समस्या का समाधान नहीं होता है और कठिनाई से प्रगतिगमन करता है। इस स्थिति में वह या तो संघर्ष करता है या अपने को इस स्थिति के अनुकूलन बना लेता है अथवा उस स्थिति से दूर होने का प्रयत्न करता है।

यदि ये भी तरीके असफल हो जाते हैं तो वह समस्या के प्रति उदासीन होकर मानसिक विकार के लक्षण उत्पन्न कर लेता है।

यदि सेवार्थी को समस्या के विषय में ज्ञात हो जाता है कि पूर्व निश्चित तरीकों के द्वारा समस्या को किसी न किसी सीमा तक सुलझाया जा सकता है तो उसे तनाव पूर्ण स्थिति का अधिक आभास नहीं हो पाता है। वह अपने अभ्यस्त तरीकों द्वारा स्थिति को कष्टकर होने से बचाता रहता है। वह अपने पूर्व निश्चित अनुकूलन के तरीकों में परिवर्तन की मांग को अधिक प्रत्यारोधों के साथ असवकार करता है। उसकी यह धारणा होती है कि वह अपने संतुलन के जिन तरीकों द्वारा प्राप्त करने में असफल हुआ है उनमें परिवर्तन लाने की किसी प्रकार की आवश्यकता नहीं है। अतः वह अपने अभ्यस्त अनुकूलन के लिए तरीकों के लिए सुरक्षात्मक प्रयत्न करता है। वैयक्तिक कार्यकर्ता यदि इनमें परिवर्तन लाना ही चाहता है तो उसे बहुत ही सहयोगिक संबंध का विकास करना होता है। जब अभ्यस्त अनुकूलन के तरीके समस्या समाधान ये में अप्रभावी हो जाते हैं तो व्यक्ति संघर्ष, समस्या अथवा उड़ान का सहारा लेता है। परन्तु तरीके व्यक्ति को स्वतः बिना किसी पृष्ठभूमि के प्राप्त नहीं हो जाते हैं। इसका संबंध व्यक्ति के पूर्व इतिहास से रहता है। जिस प्रकार से वह पूर्व घटनाओं का सामना करता है। वही तरीके उसे अधिक उपयुक्त प्रतीत होते हैं। इन तरीकों के विकास को समझने के लिए हमें व्यक्ति के विकास का ज्ञान प्राप्त करना होगा। वैयक्तिक कार्यकर्ता को यह जानना होगा कि किसी प्रकार वह संतुलन व्यवस्था को बनाये रखने के लिए प्रतिगमित हुआ है। यद्यपि व्यक्ति के विकास को समझने के लिए अत्यन्त अन्तप्रष्टिं की आवश्यकता होती है।

बालक दो वर्ष की अवस्था तक अपने माता–पिता को सर्वशक्तिमान समझता है जिसके कारण वह अनेक समान बनने का प्रयास करता है। परन्तु जब वह बड़ा होने लगता है तो पैतृतात्मक प्रत्याशाएं उसके कार्यों के साथ जुड़ जाती है। जैसे– बिस्तर पर पेशाब न करना ध्वन्सात्मक कार्य न करना, आशानुकूल व्यवहार करना आदि इस प्रकार माता–पिता का नकारात्मक वाक्य बालक की क्रियाओं के लिए बाधक शक्ति का कार्य करता है। यह नकारात्मक शब्द चाहे मौखिक हो, चाहे शारीरिक दण्ड द्वारा हो। बालक सामाधीकरण प्रक्रिया में बाह्य नियंत्रण एवं रूकावट अनुभव करता है। इस प्रकार बाह्य नियंत्रण से निराशा के लक्षण उत्पन्न हो जाते है। वह इस निराशा के प्रति, क्रोध, अक्रामक प्रवृत्ति अथवा विरोध द्वारा प्रत्युत्तर करता है। संघर्ष प्रधान तत्व के रूप में अनुकूलन प्रक्रिया में कार्य करेगा।

अहं

अहं मस्तिष्क का वह भाग होता है। जिसके द्वारा व्यक्ति अपना मानसिक संतुलन बनाये रखता है। व्यक्ति में ऐसी अनेक मूल प्रवृत्तियां होती है। तो संतुष्ट होने के लिए चेतन में आने का प्रयास करती है। परन्तु अहं ऐसा करने से रोकता है। क्योंकि सामाजिक स्वीकृति प्राप्त नहीं होती है। अहं व्यक्ति का वास्तविक स्थिति से प्रत्यक्षीकरण करता है। संबंधित ज्ञान प्रदान करता है तथा समस्या समाधान के संभव तरीकों की खोज करके उन्हें संतुष्ट करने का प्रयत्न करता है। अहं का संपूर्ण कार्य तार्किक होता है। व्यक्ति पर प्रत्येक क्षण आंतरिक एवं बाह्य संप्रेरणाओं आवश्यकताओं एवं परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता रहता है।

जिसके कारण वह विशेष प्रकार का व्यवहार करता है। व्यक्ति के अंतर्गत तीन शक्तियां होती है।

कूक, कूगो तथा सुपर डगो

व्यक्ति का समस्त व्यवहार एवं प्रत्युत्तर इन्हीं शक्तियों द्वारा संचालित होता है। कूक का संबंध व्यक्ति की मूल प्रवृत्ति से होता है और वह अपनी समस्या मान्य अथवा अमान्य, नैतिक अनैतिक स्वीकृत, अस्वीकृत सभी इच्छाओं को पूर्ण करने का प्रयास करता है। परन्तु अहं अस्वीकृत इच्छाओं पर रोक लगाता है और केवल वास्तविक कार्यों को पूरा करने की अनुमति प्रदान करता है।

सुपर इगो समाज के आदर्शों एवं मूल्यों का ज्ञान प्रदान करता है। अहं वह शक्ति होती है जो व्यक्ति को वास्तविकता को देखने उसके बारे में निर्णय लेने तथा कार्य करने के लिए उत्प्रेरित करती है। इस शक्ति द्वारा उस योग्यता का विकास होता है जिसके द्वारा वह समस्या को गहराई से देख सकता है तथा समस्या समधान के साधनों को ढूढ़ पाता है। वह निर्णय शक्ति का विकास करता है। जिससे इड द्वारा व्यक्त इच्छाओं पर उचित नियंत्रण रखते हुए आंतरिक एवं बाह्य पर्यावरण से अनुकूलन प्राप्त करता है।

वैयक्तिक कार्य कर्ता सेवार्थी की समस्या के वास्तविक कारणों तथा उसके प्रयासों को जानने के लिए विगत अहं कार्यात्मकता का ज्ञान प्राप्त करता है। यदि वह देखता है कि सेवार्थी विगत जीवन में विघटित प्रत्यक्षीकरण का अनुभव रखता है। ज्ञान का समुचित प्रयोग नहीं करता है तो यह निश्चित रूप से मान लिया जाता है कि सेवार्थी में अहं शक्ति का अभाव है, कार्यकर्ता अहं को दृढ़ बनाने का प्रयत्न करता है।

व्यक्ति अहं शक्ति की असफलता की अवस्था में तनावपूर्ण स्थिति में अतार्किक एवं अचेतन सुरक्षात्मक उपायों का प्रयोग अहं की सुरक्षा के लिए करता है। उदाहरण के लिए जब व्यक्ति क्रोध भावना पर नियंत्रण नहीं कर पाता है तो वह दूसरों पर प्रक्षेपण करता है और समझता है कि इससे लोग उससे नाराज है। अतः उसे भी वैसा ही व्यवहार करना चाहिए। इस प्रकार की युक्ति द्वारा व्यक्ति अपने व्यवहार को तार्किक बनाता है और अस्वीकृत उत्प्रेरकों को सही मानता है। इस प्रकार वह अन्य सुरक्षात्मक उपायो, अस्वीकृत स्थानापन्न प्रतिक्रिया निर्माण आदि का प्रयोग अचेतन रूप से अहं की सुरक्षा के लिए करता है।

वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी की तार्किक अनुकूलन तरीकों तथा अतार्किक या अचेतनावस्था में सुरक्षात्मक उपायों के प्रयोग द्वारा अनुकूलन में अंतर स्पष्ट करता है। वह सेवार्थी की अहं शक्ति का मूल्यांकन दोनों प्रकार के तरीकों के आधार पर करता है। वह सदैव जानने का प्रयत्न करता है कि वर्तमान समस्या को सेवार्थी किस प्रकार देख रहा है। अपने पूर्व अनुभवों को किस प्रकार उपयोग में ला रहा है तथा किसी प्रकार समस्या का समाधान करने का प्रयत्न करता है। अहं कार्यात्मकता के अध्ययन तथा निदान द्वारा वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी की शक्ति, विचार पद्यति, प्रत्यक्षीकरण आदि बातों की जानकारी करता है, जिसके आधार से उसे चिकित्सा प्रक्रिया एवं प्रविधि निश्चित करने में सुविधा देती है।

वैयक्तिक सेवार्थी की सम्प्रेरणाओं का भी ज्ञान प्राप्त करता है कि वह किस प्रकार वर्तमान स्थिति को परिवर्तित करना चाहता है तथा समस्या समाधान के लिए कौन से उपाय

उपयुक्त समझता है। सम्प्रेरणाएं व्सक्ति को सदैव उत्साहित तथा कार्यशील बनाये रखती है। इनका कार्य चेतन तथा अचेतन दोनों स्तरों पर होता रहता है। अतः अचेतन और चेतन दोनों प्रकार की इच्छाओं में भी संघर्ष हो सकता है। वैयक्तिक कार्यकर्ता न केवल चेतन इच्छाओं को ज्ञात करता है बल्कि अचेतन इच्छाओं की शक्तियों का भी अनुमान लगाता है। क्योंकि सेवार्थी तब तक वास्तविक रूप से चिकित्सा पद्यति में भाग नहीं लेगा जब तक उसकी चेतन व अचेतन इच्छाएं समान नहीं होगी।

तनाव

जैनित ने तंत्रिकाताप का नया सिद्धांत प्रस्तुत किया जिसे ष्तनाव का सिद्धांत" कहा जाता है। मन एक संश्लेषण है जो दैनिक जीवन के संवेदनों, प्रत्यक्षणों, प्रतिमाओं आदि अनेक अनुभवों से मिलकर बनता है। इन अनुभवों और मानसिक प्रक्रियाओं के पर्याप्त एकीकरण और समाकलन के लिये कुछ न कुछ मानसिक तनाव होना आवश्यक है। दूसरे शब्दों में तनाव एक ऐसी ऊर्जा है जो मन के संयोजन को कायम रखती है और उच्च मानसिक प्रक्रियाओं जैसेतर्क अनुचिंतन विचारों के संगठन आदि में प्रयुक्त होती है। यदि तंत्रकीय परिश्रान्ति के कारण इस ऊर्जा का स्तर नीचे गिर जाये तो व्यक्तित्व का संयोजन कमजोर पड़ जाता है और तंत्रिकाताप के लक्षण उत्पन्न हो जाता है।

तनाव वह संवेगात्मक अवस्था है जो किसी आवश्यकता के साथ–साथ उत्पन्न होती है और आवश्यकता पूरी होने के साथ शांत हो जाती है।

उदाहरणार्थ– दिन भर कालेज से थका हारा और भूखा छात्र जब घर वापस पहुंचे और उसे भोजन तैयार न मिले तो उसमें तनाव और चिड़चिड़ापन उत्पन्न होना स्वाभाविक है। वह क्रुद्ध होकर परिस्थिति अथवा व्यक्ति पर अपना गुस्सा उतारने लगता है जिसके कारण समय पर भोजन तैयार न हो सका। जब थोड़े समय बाद भोजन परोस दिया जाता है, तो उसकासंवेगात्मक तनाव शांत हो जाता है, कुछ तनाव अपेक्षाकृत अधिक लंबे अथवा दीर्घकालीन होते जैसे– विश्वविद्यालय की डिग्री प्राप्त करने में कई वर्ष लग जाते हैं।

दुश्चिन्ता और भय इसके मन और शरीर को निरंतर तनाव की स्थिति में रखते हैं। वह छोटी–छोटी बात पर क्षुब्ध हो जाता है। उसकी चिड़चिड़ाहट और आक्रामकता बढ़ जाती है। चूंकि तंत्रिकातापी अपनी समस्याओं का सामना विवेक द्वारा न करते हुए अनम्य और संवेगात्मक ढंग से करता है। उसमें तनाव और चिड़चिड़ापन बढ़ जाता है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की अन्य चिकित्सीय विधियों के साथ तुलना मनोचिकित्सीय काउंसलिंग

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य एवं अर्थ

वैयक्तिक सेवा कार्य के निरन्तर उपयोग तथा इसके ज्ञान में वृद्धि के कारण इसको परिभाषित करने की समस्या जटिल होती जा रही है। प्रारंभ में वैयक्तिक सेवा कार्य की परिभाषा करना कठिन न था क्योंकि वैयक्तिक कार्य क्रियाएं विशेष सामाजिक समस्या के अध्ययन, निदान तथा उपचार से संबंधित थी।

वैयक्तिक सेवा कार्य के साहित्य में प्रकट हो गयीं। परन्तु यहां पर उन्हीं परिभाषा का उल्लेख किया जा रहा है जिनका सम्बन्ध मंत्रणा तथा मनोचिकित्सा से है।

अर्थ

टैफ्ट के अनुसार

वैयक्तिक सेवा कार्य समायोजन रहित व्यक्ति की सामाजिक चिकित्सा है, जिसमें इस बात का प्रयास किया जाता है कि उसके व्यक्तित्व, व्यवहार एवं सामाजिक सम्बन्धों को समझा जाये और उसकी सहायता की जाये कि वह उच्चत्तर सामाजिक एवं वैयक्तिक समायोजन प्राप्त कर सके।

स्वीथन वोवर्स (1949) के अनुसार, ''सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य एक कला है जिसमें मानवीय निपुणता का प्रयोग इस प्रकार किया जाता है कि व्यक्ति में उसकी योग्यताओं और समुदाय में साधनों को गतिमान किया जा सके जिससे सेवार्थी और पर्यावरण के कुछ या समस्त भागों के बीच उच्चत्तर समायोजन हो सके। सामाजिक सेवाओं को उपलब्ध कराने के लिए विशेष निपुणताओं, विशेष मनोवैज्ञानिक ज्ञान तथा विशेष कार्य पद्धति की आवश्यकता होती है।''

मंत्रणा (Counseling)

मंत्रणा शब्द का उपयोग विभिन्न अर्थों में किया जाता था, यह भी किया गया है कि यह वैयक्तिक सेवा कार्य से सम्बन्धित बहुत ही सूक्ष्म ज्ञान प्रदान करता है। मंत्रणा एक शैक्षिक प्रक्रिया है, इसके अन्तर्गत सेवार्थी को उसकी समस्या के विषय में शिक्षा देते हैं।

Aptekar के अनुसार रू मंत्रणा उस समस्या समाधान की ओर लक्षित वैयक्तिक सहायता है जिसका एक व्यक्ति समाधान कर सकने में स्वयं को असमर्थ पाता है और जिसके कारण निपुणव्यक्ति की सहायता प्राप्त करता है। जिसका ज्ञान, अनुभव तथा सामान्य स्थिति ज्ञान उस समस्या के समाधान करने के प्रयत्न में उपयोग में लाया जाता है।

मंत्रणा प्रत्यक्ष साक्षात्कार उपचार की प्रमुख सामान्य विधि है, मंत्रणा एक व्यक्ति की तार्किक आधार पर उसकी परिस्थिति सम्बन्धी विवादी विषय को प्रथक करने, उसकी समस्या तथा उसकी वास्तविकता के बीच संघर्ष को स्पष्ट करने क्रिया कि विभिन्न भागों की व्यवहारिकता पर तर्क वितर्क करने और इच्छाओं को चुनने के उत्तरदायित्व को ग्रहण करने में सेवार्थी को यथार्थता में स्वतंत्र कर देना चाहता है। मंत्रणा की प्रमुख प्रविधि स्पष्टीकरण है, स्पष्टीकरण का अर्थ रोगी की निश्चित मनोवृत्तियों, भावनाओं के प्रति जाग्रत करना, या इसके विषयात्मक प्रत्यय के विरूद्ध वास्तविकता को स्पष्ट करना है, जिससे वह स्वयं तथा पर्यावरण को अधिक वस्तुगत से देखता है और जिससे नियंत्रण की मात्रा बढ़ती है।

वास्तव में मंत्रणा मनोवैज्ञानिक पहलू है। मंत्रणा को बिना संस्था के माध्यम से भी सम्पन्न किया जा सकता है, इसके लिए रिलीफ फन्डस, फास्टर सेमेकर की आवश्यकता नहीं होती है। मंत्रणा के अंतर्गत सेवार्थी को कोई ठोस सेवा न प्रदान करके केवल मार्गदर्शन का प्रयास किया जाता है। मंत्रणा में कार्यकर्ता का ध्यान सेवा पर न होकर केवल समस्या पर ही रहता है।

मंत्रणा की विशिष्ट प्रकृति

1. मंत्रणा Specific होती है जिस व्यक्ति को बाल निर्देशन की समस्या होती है, वह उसी मंत्रणा दाता के पास जाता है, अन्यत्र के पास नहीं जाता है।

2. विशेषीकरण होने पर भी इन विभिन्न शाखाओं को पूर्ण रूप से एक दूसरे से प्रथक नहीं किया जा सकता है।

3. सेवार्थी की समस्या का केन्द्र बिन्दु एक ही होता है तथा एक क्षेत्र में ली गई सहायता का महत्व दूसरे से भिन्न होता है।

4. समस्या का केन्द्र चाहे वैवाहिक था बाल सम्बन्धी कुछ भी क्यों न हो यदि वह एक दिशा में कोई प्रयास करना चाहता है तो उसके स्वयं के विषय में समझ प्राप्त करनी चाहिए। यह प्रयास सेवार्थी को मनोचिकित्सा की ओर अग्रसारित करता है।

5. मंत्रणा में प्रविधि की उत्पत्ति वैयक्तिक सेवा कार्य तथा चिकित्सा (Therapy) से हुई है।

मनोचिकित्सा से सम्बन्ध

प्रारंभ में मनोचिकित्सा का सम्बन्ध केवल मानसिक रोगों के उपचार में सम्बन्ध जाता है, परन्तु अब ऐसा नहीं है, आज मनोचिकित्सा का उद्देश्य व्यक्तित्व परिवर्तित से हो गया है। सेवा का उपयोग अथवा समस्या का समाधान मनोचिकित्सा नहीं है, यद्यपि सेवा के उपयोग तथा समस्या के समाधान से व्यक्तिगत विकास होता है, मनोचिकित्सा के बिना ही कोई सेवार्थी सेवा का उपयोग कर सकता है, मनोचिकित्सा का केन्द्र बिन्दु व्यक्तित्व परिवर्तन होता है।

मनोचिकित्सक के लिए जो सेवार्थी जाता है वह इस प्रकार का परिवर्तन स्वयं चाहता है, अतः प्राथमिक रूप से मनोचिकित्सा का सम्बन्ध व्यक्ति की आंतरिक स्थिति से होता है।

मनोचिकित्सा में निम्नलिखित प्रविधियों का उपयोग होता है–

1. निर्देशन (Direction)

यद्यपि निर्देशन प्रविधि का प्रयोग प्राचीन काल से चला आ रहा है, परन्तु उस समय निर्देशन का तात्पर्य चिकित्सक के निर्देशों को बिना तर्क के मान लेना या उसका स्वरूप आदेशात्मक था । आधुनिक मनोचिकित्सा में सेवार्थी के साथ अर्थपूर्ण सम्बन्धों को घनिष्ठ कर तथा अपने प्रति विश्वास उत्पन्न कर निदेशन प्रविधि का प्रयोग होता है।

2. मानसिक रेचन

मानसिक रेचन का तात्पर्य सेवार्थी के उनके कष्टों तथा सम्बन्धों के बारे में बातचीत करना है। ऐसा करने से सेवार्थी का सांवेगिक बोझ हल्का होता है, इस प्रविधि को प्रायः चिकित्सा के प्रारंभ में प्रयुक्त किया जाता है।

3. स्पष्टीकरण (Clarification)

इस प्रविधि के द्वारा सेवार्थी को उसके व्यवहार के सम्बन्ध में बौद्धिक ज्ञान कराया जाता है। इससे सेवार्थी को अपनी भावनाओं तथा प्रेरणाओं के प्रभावों तथा गतिशीलता का पता चलता

4. प्राख्या (Interpretation)

प्राख्या द्वारा सेवार्थी के अर्धचेतन से सम्बन्धित समस्याओं, उनके कारणों, व्यवहारों तथा भावनाओं की जानकारी कराई जाती है। स्पष्टीकरण का उपयोग, चेतन एवं सामान्य समस्याओं के लिए किया जाता है। जबकि प्राख्या का उपयोग चेतन एवं सामान्य समस्याओं के लिए किया जाता है जबकि प्राख्याओं का उपयोग अर्धचेतन व गम्भीर समस्याओं के लिए होता है।

प्राख्या प्रविधि के स्तर

1. सुरक्षात्मक उपायों को त्यागने के लिए सेवार्थी तैयार करना।

2. वास्तविक तथ्यों की जानकारी कराना।

3. अर्न्तदृष्टि उत्पन्न करना।

5. सामान्यीकरण (Generalization)

जब सेवार्थी में दोष भावना का विकास हो जाता है। उसको अनुभूति होने लगती है कि उसने बहुत महत्वपूर्ण कार्य किये हैं तो इस प्रविधि का उपयोग करते हैं। इस प्रविधि द्वारा सेवार्थी को ज्ञान कराया जाता है कि उसके ऐसी परिस्थितियों में प्रायः सभी व्यक्ति उक्त प्रकार का व्यवहार करते हैं।

6. मनोचिकित्सा (Psycho-drama)

इस विधि में एक नाटकीय पर्यावरण प्रस्तुत किया जाता है। इस विधि में सेवार्थी अन्य सेवार्थियों के सम्पर्क में आकर अपनी प्रेरणाओं अभिवृत्तियों तथा इच्छाओं की अभिवृत्ति करता है।

मनोचिकित्सा

मनोवैज्ञानिक विधियों से व्यक्तित्व की अवस्थाओं की चिकित्सा करना ही मनोचिकित्सा है, मनोचिकित्सा का मुख्य उद्देश्य सेवार्थी एवं उसके पर्यावरण के बीच का उचित समायोजन करना है। मनोचिकित्सा द्वारा सेवार्थी को एक सामान्य व्यक्ति बनाने, समस्याओं को सुलझाने, विकारों को दूर करने उसे सामाजिक समायोजन के योग्य बनाने एवं सुरक्षा की भावना का विकास करने का प्रयत्न किया जाता है। सेवार्थी में दमित इच्छाएं होती है, जिनको वह समझने में अपने को असमर्थ पाता है, मनोचिकित्सा द्वारा सेवार्थी को पूर्व चेतन प्रत्ययों, मूल प्रवृत्तियों तथा प्रभावों जिनका सामना करने तथा प्रतिदमित करने में भी

असमर्थ रहा है, अभिज्ञान प्राप्त होता है। सामान्यतया, मनोचिकित्सा का उद्देश्य परिपक्वता दक्षता एवं आत्मकार्यान्वयन की दिशा में व्यक्तित्व का विकास करना है।

इस सामान्य कार्य में निम्नलिखित में से एक या अनेक विशिष्ट उद्देश्य निहित है–

1. समस्या तथा व्यवहार के संदर्भ में अर्न्तदृष्टि में वृद्धि करना।

2. आत्मज्ञान कराना

3. मानसिक संघर्ष के कारणों का समाधान करना।

4. आवांछनीय आदतों तथा प्रतिक्रिया तरीकों में परिवर्तन लाना।

वैयक्तिक कार्यकर्ता निम्न प्रविधियों का उपयोग अपने कार्यक्षेत्र में करता है–

1. वह स्वीकृति एवं सेवार्थी की समस्या को ज्ञान द्वारा सेवार्थी की चिंता को कम करता है।

2. तार्किकता को आलम्बन देकर सेवार्थी के अहं शक्ति दृढ़ करता है।

3. वह व्यवहारिक समस्याओं को समाधान करने में सेवाओं का उपयोग करता है।

4. वह कुठाराघात न कर मनोस्नापिक सन्तुलन को आलम्बन देता है।

5. वह स्थानांतरण के उग्र तत्वों के साथ कार्य नहीं करता है।

6. पूर्व चेतना अभिज्ञान का प्रसार।

सहायता का रूप

मंत्रणा में व्यक्तिगत सहायता विशिष्ट समस्या के लिए सेवार्थी को प्रदान की जाती है। सहायता की प्रकृति मुख्यतः चिकित्सात्मक होती है। वैयक्तिक सेवा कार्य की सहायता भी चिकित्सकीय होती है। परन्तु इसमें सेवा को प्रदान रकना प्रमुख कार्य होता है। सेवार्थी को सेवा की आवश्यकता एवं मूल्य का आभास कराया जाता है, मनोचिकित्सा में सेवार्थी की आंतरिक अचेतन संघर्ष के कारणों को दूर करने का प्रयास किया जाता है, परन्तु इनके कार्यों में काफी समानता समरूपता तथा एक दूसरे से निहित है, आप्टेकर ने इसे निम्न चित्र द्वारा समझाने का प्रयत्न किया है।

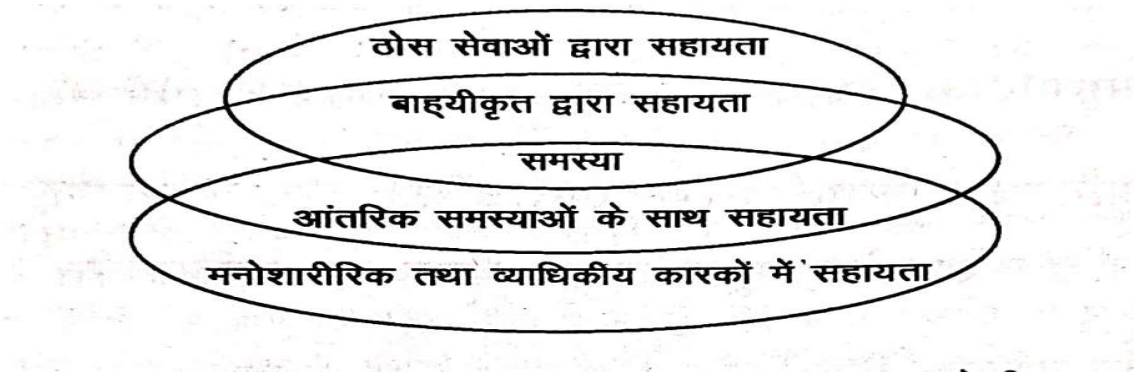

मनोचिकित्सा में समस्या से अधिक व्यक्ति पर ध्यान दिया जाता है। मंत्रणा का भी कोई महत्व नहीं जब तक व्यक्ति को प्राप्त नहीं होती है। परन्तु मंत्रणा में विशेष समस्या से सम्बन्धित सामाजिक सम्बन्ध महत्वपूर्ण होता है, परन्तु चिकित्सा में अन्तर्मनो – जन्म पर मुख्य ध्यान केन्द्रित होता है।

इस प्रकार सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य ने Couseling मनोचिकित्सा अन्य विधियों (Methods) से सम्बन्धित है। क्योंकि मनोचिकित्सा किसी भी व्यक्ति की मनोदशा को समझने में सहायता प्रदान करती है, तभी कार्यकर्ता व्यक्ति समस्या को समझकर उसके अनुरूप कार्य करता है।

इकाई – द्वितीय

2.1 सामाजिक वैयक्तिक कार्य के सिद्धान्त

2.2 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की तकनीकि–आलम्बन, स्पष्टीकरण, अन्तदृष्टि, तादात्मीकरण, संसाधनों का उचित उपयोग, मूल्यांकन, पर्यावरण परिमार्जन।

2.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के चरण–अध्ययन, निदान और उपचार।

2.4 सेवार्थी–कार्यकर्ता सम्बन्ध

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के सिद्धांत

1. वैयक्तीकरण का सिद्धान्त

सन् 1930 में बरजाइना राबिन्सन ने वैयक्तीकरण के सिद्धांत को वैयक्तिक सेवा कार्य के लिए महत्वपूर्ण बताया, मेरी रिचमण्ड ने भी प्रभावपूर्ण वैयक्तिक सेवा कार्य के लिए वैयक्तीकरण पर जोर दिया। यह सिद्धांत प्रत्येक व्यक्ति की विशिष्ट विशेषताओं को समझने पर बल देता है। यदि यद्यपि शारीरिक रूप से सभी व्यक्ति समान होते है। परन्तु उनकी शारीरिक, मानसिक, सांवगिक आदि क्षमताओं में अन्तर होता है। जब तक इन विशेषताओं को पृथक–पृथक नहीं समझा जायेगा तब तक सेवार्थी समस्या का उचित समाधान ढूंढ़ न सकेगा और न उचित समायोजन स्थापित कर सकेगा। प्रत्येक व्यक्ति की अधिकार है कि उसकी एक व्यक्ति के रूप में समझा जाय न कि मानव प्राणी के रूप में तथा अन्तरों को महत्व दिया जाय। इसी मूलाधार पर वैयक्तीकरण का सिद्धांत आधारित है। आधुनिक वैयक्तिक सेवा कार्य सेवार्थी केन्द्रित है। यह व्यक्ति विशेष की समस्या पर निर्भर है। निदान तथा उपचार का कार्य पृथक–पृथक सेवार्थी के लिए पृथक–पृथक होता है, योजना अलग–अलग बनायी जाती है। व्यक्ति, व्यक्ति अलग–अलग सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। प्रत्येक सेवार्थी एक व्यक्ति है। प्रत्येक समस्या एक विशिष्ट समस्या है तथा सामाजिक सेवा प्रत्येक सेवार्थी की परिस्थिति के अनुसार होनी चाहिए। समाज कार्य में यद्यपि सामान्य मानव प्रकृति सी विशेषताओं का ज्ञान प्रदान किया जाता है। साथ ही साल सामान्य मानव व्यवहारों के तरीकों को बताया जाता है, परन्तु यह वैयक्तिकता पर विशेष बल देता है। इस प्रकार के ज्ञान से वैयक्तिक कार्यकर्ता की विषयगत तथा वस्तुगत विचारों, भावनाओं, समस्याओं तथा कठिनाइयों को समझने में सहायता मिलती है।

2. भावनाओं का उद्देश्यपूर्ण प्रकटन का सिद्धांत

मनुष्य एक तार्किक प्राणी है। उसमें ज्ञान का भंडार है तथा कार्य करने की इच्छा व अनिच्छा होती है। उसमें पशुवत विशेषताएं जैसे चालक मूल प्रवृत्तियों होती हैं। भावनाएं, संवेग, ज्ञानेन्द्रियां अपनादृअपना कार्य करती है। व्यक्ति की ये सभी विशेषताएं संयुक्त होकर कार्य करती है। संवेग व्यक्ति की प्रकृति के अभिन्न अंग है, और यह विशेषता पूर्ण व्यक्तित्व को विकास के लिए आवश्यक है। मानव जीवन की सबसे बड़ी चुनौती संवेगों की भलीभांति व्यवस्थित रखने की है। कठिनाइयों के समय संवेग शक्ति पर अधिपत्य जमा देते हैं।

जिसके कारण व्यक्ति नियंत्रण खो देता है। वह अतार्किक मांगों के द्वारा जीवनयापन करना चाहता है। इससे व्यक्तित्व का विघटन होता है और मानसिक विकृतियां उत्पन्न हो जाती है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में व्यवस्थित सांवेगिक जीवन की आवश्यकता को महत्व दिया जाता है। मनोविज्ञान तथा मनोविकार विज्ञान ने संवेगों की भूमिका पर प्रकाश डाला है और सिद्ध कर दिया है कि संवेग व्यक्तित्व की संगठित एवं विवादित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। सामाजिक जीवन तथा सांवेगिक स्थित में परस्पर सम्बन्ध होता है तथा व्यक्तित्व विकास में महत्वपूर्ण होते हैं। व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक आवश्यकता के अन्तर्गत प्रेम सुरक्षा प्रस्थिति,भावनाओं का स्पष्टीकरण, उपलब्धि, आत्मनिर्भरता आवश्यकताएँ सम्मिलित हैं। अनुभवों में भाग लेना समूह की स्वीकृति प्राप्त करना से सभी मनोसामाजिक आवश्यकताएं होती है।

3. नियन्त्रित सांवेगिक अन्तर्भावितता का सिद्धांत– प्रत्येक राम्प्रेषण की द्विमुखी प्रक्रिया है। जब एक व्यक्ति दूसरे व्यक्तित्व से कुछ करता है। तो उससे भी प्रत्युत्तर चाहता है। यदि वह व्यक्ति कोई प्रत्युत्तर नहीं करता है। तो सम्प्रेषण भी अरूचि प्रकट होती है। फलतः संचार प्रक्रिया काम नहीं करती है। सामान्य रूप से राम्प्रेषण की विषय वस्तु को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत कर सकते हैं। केवल विचार, भावनाएँ केवल तथा विचार एवं भावना दोनों। जब व्यक्ति स्टेशन पर जाकर पूछताछ खिड़की पर किसी गाड़ी जाने का समय पूछता है। इसका तात्पर्य वह केवल विचार सम्प्रेषित कर रहा है। यह केवल सूचना प्राप्त करना चाहता है तथा वास्तविक तथ्यों की आशा करते है, जब पति या पत्नी की मृत्यु पर किसी सम्बन्धी से दुख दर्द बताता है इसका तात्पर्य वह भावनाओं को सम्प्रेषित कर रहा है। वैयक्तिक कार्य में सम्प्रेषण की विषयवस्तु प्रायः विचार तथा भावनाओं का मिश्रण होता है। विषयवस्तु की प्रकृति कई रूपों में निर्भर होती है। जैसे सेवार्थी की समस्या, संस्था के कार्य, सेवार्थी की आवश्यकता साक्षात्कार से सेवार्थी का परिवर्तित होने वाली धारणाएं, वैयक्ति कार्यकर्ता का उद्देश्य। अध्ययन, निदान तथा उपचार का रूप भी विषयवस्तु की प्रकृ ति को निश्चित करता है। वैयक्ति कार्यकर्ता को विचार तथा भावना के सम्प्रेषण के दोनों स्तरों पर निपुणता की आवश्यकता होती है। जब विषयवस्तु तथ्यों पर आधारित होती है, उस समय सहायता को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए वैयाक्तिक कार्यकर्ता को संस्था के तरीकों नीतियों तथा समुदाय में उपलब्ध अन्य स्त्रोतों का ज्ञान होना चाहिए।

4. स्वीकृति का सिद्धान्त

समाज कार्य में स्वीकृति शब्द का उपयोग अधिकाधिक किया जाता है। प्रत्येक समाज कार्यकर्ता इस शब्द के महत्व से अवगत है तथा वैयाक्तिक सेवा कार्य में जहां पर कार्यकर्ता की सफलता सम्बन्ध की प्रकृति पर निर्भर है। स्वीकृति का सिद्धांत का विशेष महत्व है। परन्तु इस शब्द की स्पष्ट परिभाषा अभी तक नहीं हो पायी है। स्वीकृति शब्द के कई अर्थ है । जब किसी वस्तु. के संदर्भ में उपयोग होता है, तो इसका तात्पर्य प्राप्त करने से है या उपहार स्वीकार करने से है। जब बौद्धिव प्रत्यय के रूप में उपयोग किया जाता है तो इसका तात्पर्य वास्तविकता को जानने से है या अनुकूल प्रत्युत्तर करने से है, जब व्यक्ति के संदर्भ में उपयोग होता है तो इसका तात्पर्य व्यक्ति का आदर करते हुए उससे सम्बन्ध स्थापित करना है। समाज कार्य साहित्य में स्वीकृत शब्द की परिभाषा कहीं भी स्पष्ट रूप से नहीं दी गई है। कहीं कहीं आंशिक रूप से इसका स्पष्टीकरण मिलता है। उसी को क्रमबद्ध रूप से यहां प्रस्तुत किया जा रहा है। रेनोल्ड, वेरथा सी ने कहा है कि जब हम

सेवार्थी को जैसा है वैसा समझ लेते हैं तथा मानव साथी के रूप में उसका सम्मान करते हैं। तो हम सेवार्थी की स्वीकृति प्रदान करते हैं। क्रुस हेरजा वैयाक्तिक सेवा कार्य व्यक्ति को जैसा है वैसा स्वीकार करता है वह बिना पूर्वाग्रह के स्वीकृति देता है, यह मित्रतावश नहीं बल्कि व्यवसायिक उद्देश्य के कारण ऐसा करता है। वह सहानुभूति, स्वीकृति प्रेम आदि प्रदर्शित करता है।

5. अनिर्णायक मनोवृत्ति का सिद्धांत–वैयाक्तिक सेवा कार्य सम्बन्ध का यह एक विशिष्ट गुण है। कार्यकर्ता अपनी प्रक्रिया में इसकी मनोवृत्ति को अपनाता है इस मनोवृत्ति का आधार सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का दर्शन है। जो यह मानता है कि व्यक्ति का समस्या उत्पन्न करने में कोई दोष नहीं है या वह अपराधी नहीं है, बल्कि परिस्थितियां इसके लिए उत्तरदायी है। यह व्यक्ति की मनोवृत्ति, स्तर तथा क्रिया प्रतिक्रिया के कार्यों को महत्व देता है। निर्णय का तात्पर्य व्यक्ति को किसी कार्य के लिए उत्तरदायी या उसकी अज्ञानता को निश्चित करने से होता है। यह एक प्रक्रिया है। जिसके द्वारा निश्चित किया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति उक्त कार्य के लिए स्वयं दोषी है या उसने यह अपराण पूर्ण कार्य नहीं किया है। उसी आधार पर इसे दोषी ठहराया जाता है। वैयाक्तिक सेवा कार्य में भी निर्णय का यह अर्थ लिया जाता है अर्थात सेवार्थी पर दोषारोपण मौखिक या अन्य किसी प्रकार अपनी समस्या के लिए करना । समस्या के कारक चाहे पर्यावरणीय हों या व्यक्तित्व से सम्बन्धित हों, सेवार्थी की सहायता करने में यद्यपि उसकी असफलताओं तथा कमियों को जानना आवश्यक होता है। लेकिन वैयक्ति कार्यकर्ता का निर्णय करने का कोई उत्तरदायित्व एवं कार्य नहीं होता है। निर्णय करने का अधिकार दूसरे अधिकारियों को होता है। समाज कार्य दर्शन विश्वास प्रेम सहानुभूति तथा सहयोग सिखाता है, इसका दृढ़ विश्वास है कि व्यक्ति के विषय में कोई निर्णस लेना अतार्किक तथा अव्यवहारिक है। दोषी को तिरस्कार करना अथवा बहिष्कृत कोई बुद्धिमान नहीं है। ये भावनाऐ सहायक प्रक्रिया में बाधा पहुंचाती है तथा सेवार्थी आत्मग्लानि अनुभव करता है। समाज कार्य दण्ड के स्थान पर सहायता में विश्वास करता है।

(6) आत्मनिश्चय का सिद्धांत–

समाज कार्य की यह दृढ़ धारणा होती हैकि व्यक्ति में आत्म निश्चय करने की अन्तर्भूतक्षमता होती है। इसी प्रत्यय के आधार पर वैयक्ति कार्यकर्ता सेवार्थी को अपना मार्ग स्वयं निचय करने के लिए प्रोत्साहित करता है। सेवार्थी को अपनी रचि के अनुसार वैयक्तिक सेवा कार्य प्रक्रिया में भाग लेने की पूरी स्वतंत्रता होती है। उसके अधिकारों तथा आवश्कताओं को महत्व दिया जाता है। कार्यकर्ता में सेवार्थी की आत्म निर्देशन क्षमता को उत्तेजित करता है तथा संस्था में उपलब्ध साधनों का ज्ञान कराता है। सेवार्थी का आत्म निश्चय करने का अधिकार उसकी सकारात्मक एवं रचनात्मक निर्णय शक्ति की सीमा पर निश्चिय होता है, संस्था के कार्य भी इस अधिकार को प्रभावित करते हैं।

7. गोपनीयता का सिद्धांत–समाज कार्य मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं में विभिन्न तरीकों द्वारा उपयोग में लाया जाता है। जीवन के बहुत से पहलू ऐसे होते हैं, जिसकी व्यक्ति बहुत ही गोपनीयता रखता है और जिससे घनिष्ठतम् संबंध होते हैं, उसे ही बताता है। अतः गोपनीयता सिद्धांत को दो रूपों में देखा जा सकता है। व्यावसायिक आचार संहिता के रूप में तथा वैयक्तिक सेवा कार्य संबंध। वे तत्व के रूप में गोपनीयता का

तात्पर्य सेवार्थी की उन गोपनीय सूचनाओं को जिनको कार्यकर्ता से बताता है गोपनीय रखने से है। यह सेवार्थी की मूल अधिकार से सम्बन्धित है। यह वैयाक्तिक कार्यकर्ता का उत्तरदायित्व है तथा वैयाक्तिक सेवा कार्य का मूलाधार है। सेवार्थी जब संस्था में आता है तो यह समझ कर जाता है कि उसे वैयाक्तिक कार्यकर्ता से अनेक गोपनीय बाते बतानी होगी परन्तु वह यह भी चाहता है कि अन्य लोग उन बातों को न जाने क्योंकि ऐसा होने से मानहानि होगी तथा वैयाक्ति भावनाओं को ठेस पहुंचगे। इसलिए पहले वह कोई गोपनीय तथ्य नहीं बताता है। जब उसे विश्वास हो जाता है कि कार्यकर्ता इन तथ्यों को गोपनीय रखेगा तभी स्पष्ट करता है। वह जब जान लेता है कि संस्था की सहायता प्राप्त करने के लिए इन सूचनाओं को बताना आवश्यक है, तभी बताता है और विश्वास करना है कि ये सूचनायें सहायक प्रक्रिया में लगे व्यक्तियों से परे लोगों को ज्ञात नहीं होगी। वह किसी भी प्रकार से अपनी ख्याति को कम नहीं करना चाहता है।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में सहायक तकनीकों का प्रयोग

प्रस्तावना

समाज कार्य एक व्यवसायिक सेवा है जो वैज्ञानिक ज्ञान एवं मानव सम्बन्धों की निपुणता पर आधारित है। यह व्यक्तियों की अकेले या समूह में सहायता करता है, जिससे कि वे सामाजिक वैयक्तिक संतुष्टि एवं स्वतंत्रता प्राप्त कर सके।

समाज कार्य एक सहायता का कार्य है जिसका उद्देश्य व्यक्ति की समस्याओं को सुलझाना है। इसमें सेवार्थी की स्थायी रूप से सहायता की जाती है, जिससे वह इस योग्य हो सके कि वह स्वयं आगे चलकर अपनी समस्याओं का समाधान कर निर्देशित मार्गों को अपनाकर करने में समर्थ हो सके।

समाज कार्य में प्रयोग की जाने वाली तकनीक निम्नलिखित हैं–

1. सम्बल (Process of Support)– सम्बल सेवार्थी की उपयुक्त मनोवृत्ति और क्रिया कलापों के संश्लेषण के माध्यम से सहारा व वृद्धि उत्पन्न करने की प्रक्रिया है, यह प्रक्रिया वैयक्तिक सेवा कार्य की अन्य प्रक्रियाओं की आधारशिला है। इसके अन्तर्गत चिन्ता से उदभूत सेवार्थी से सान्तवना पूर्ण सहानुभूति पूर्ण तथा उदारतापूर्ण व्यवहार प्रदर्शित किया जाता है। ताकि वह अपनी समस्या का निःसंकोच व्यक्तिकरण कर सके, इसके लिए उसे मान्यता प्रदान की जाती है तथा सेवार्थी को प्रोत्साहन के साथ ही प्रशंसित किया जाता है। सेवार्थी को सफलतापूर्वक अनुभव प्रदान करने के लिए अवसर प्रदान किया जाता है तथा उसकी अपनी शक्तियों के प्रति जागरूक किया जाता है। अर्थात सम्बल प्रक्रिया के द्वारा सेवार्थी के सम्बन्ध को घनिष्ठ बनाने में सहायता प्रदान की जाती है। इसके अन्तर्गत अनेक प्रविधियों का उपयोग करके सेवार्थी को सफल व्यवहार करने तथा वास्तविक प्रक्षेपण करने के लिए सम्बल प्रदान किया जाता है।

सम्बल प्रक्रिया के उद्देश्य

1. सेवार्थी में आशा की उत्पत्ति करने हेतु उसमें आत्म आदर व सम्मान की भावना को प्रोत्साहन प्रदान करना।

2. अस्थायी पर्यावरणीय दबाव के माध्यम से सेवार्थी को सहारा देना।

3. उपचार की अन्य प्रक्रियाओं के उपाय उपयोग, सेवार्थी की प्रकार्यात्मकता तथा समेकित क्षमताओं की मांगों एवं अपेक्षाओं के माध्यम से सेवार्थी को सहारा देना।

2.स्पष्टीकरण की प्रक्रिया (The process of clarification)—स्पष्टीकरण वैयक्तिक सेवा कार्य की एक ऐसी महत्वपूर्ण उपचार प्रक्रिया है जो सेवार्थी में समस्या के प्रति जागरूकता व्यवहार पर्यावरण व परिस्थितियों के प्रति सचेत भावनाओं को विकसित करती है और व्यवहार को प्रेरित करने सम्बन्धी सचेत इच्छाओं एवं आवश्कताओं कोस्पष्ट किया जाता है। सेवार्थी का समस्यापूर्ण व्यवहार उसकी चिन्ताजन्य के प्रति भयपूर्ण एवं उग्र प्रतिक्रिया को प्रदर्शित करता है न कि आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उचित रूप से निर्देशित प्रयासध्उपचार की इस प्रक्रिया द्वारा सेवार्थी को तथ्यों व वास्तविकता का प्रत्यक्षीकरण कराने के लिए जो व्याख्या की जाती है उसका उद्देश्य सेवार्थी को कारण कार्य सम्बन्ध के विषय में अथवा ऐसे विषय में जिसका उसे ज्ञान नहीं है या भ्रांतिपूर्ण ज्ञान है। वास्तविक ज्ञान प्रदाय किया जाता है।

स्पष्टीकरण सेवार्थी को अपना व्यवहार बौद्धिक दृष्टि से समझने में सहायता प्रदान करता है, जिसके द्वारा उसमें अपने व्यवहार को अधिक रचनात्मक ढंग से व्यवस्थित करने की सचेत क्षमता का विकास होता है।

3. अर्न्तदृष्टि का विकास (Insight Development)—इस प्रविधि को भी कुछ समाजकार्य—वेत्ताओं ने उपचार की प्रक्रिया के रूप में स्पष्ट करने का सफल प्रयास किया है। इसके द्वारा सेवार्थी की इस प्रकार सहायता की जाती है कि अपनी आन्तरिक शक्तियों, क्षमता, सामर्थ्य भावना एवं संवेगों एवं इनके उपयोग को भलीभांति समझने की क्षमता का समुचित रूप से विकास करें। यदि कार्यकर्ता सेवार्थी की आन्तरिक शक्तियों को क्षीण समझता है तो उनके पूर्ण विकास के लिए भी सहायता प्रदान करता है, जिसके फलस्वरूप सेवार्थी अपनी अन्तर्निहित शक्तियों का विकास करके आन्तरिक एवं बाह्य परिस्थितियों की वास्तविकता को समझने योग्य हो जाएं।

4. तादात्मीकरण (Identification)—उपचार की इस प्रविधि के अन्तर्गत वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी की सहायता के दौरान सहानुभूति पूर्वक व्यवहार करके आत्मीयता का परिचय देता है तथा उसकी भावनाओं के साथ तादात्म स्थापित करता है। जिससे सेवार्थी की समस्या को समझने, उसकी सामाजिक व मानसिक स्थिति एवं परिस्थितियों का ज्ञान प्राप्त करने तथा सेवार्थी के साथ अनुभव करने का प्रयास किया जाता है। तादात्मीकरण प्रविधि की सफलता के लिए तदनुभूति की क्षमता का ज्ञान अथवा सेवार्थी की मनोवृत्ति व विचारधारा को यथावत समझने की योग्यता होना अनिवार्य होता है। जिसके फलस्वरूप कार्यकर्ता व सेवार्थी के मध्स घनिष्ठ एवं वियवसनीय सम्बन्ध स्थापित होता है और सेवार्थी निःसंकोच अपनी वास्तविक स्थिति भावना एवं विचारों को कार्यकर्ता के समक्ष प्रस्तुत करता है।

5. संसाधनों का उपयोग (Resource Utilization)—वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी की कठिनाईयों व बाधाओं को भलीभांति समझकर चिंतन व मूल्यांकन करता है कि उसकी समस्या का समाधान किस प्रकार संभव है तथा समाधान प्रक्रिया में समुदाय में उपलब्ध

किन साधनों का उपयोग उचित होगा। इस प्रकार साधनों की उपलब्धता तथा समाधान में उनके उपयोग के महत्व पर विचार करके सेवार्थी को साधनों के उपयोग केलिए मार्ग प्रशस्त करता है ताकि सेवार्थी अपनी समस्या के समाधान में सामुदायिक साधनों का समुचित उपयोग करने में सफल हो सके।

6. पर्यावरण का परिमार्जन (Modification of Environment)—समस्याग्रस्त व्यक्तिग्रस्त व्यक्ति की समस्या के निवारण में कभी—कभी पर्यावरणीय परिस्थितियों में सुपरिवर्तन सुधार तथा परिमार्जन की आवश्यकता होती है। ऐसा तब किया जाता है, जब समस्या का स्त्रोत या कारण पर्यावरण में निहित होता है अथवा अनुपयुक्त पर्यावरण के कारण उपचार में बाधा पड़ती है। कुछ विद्वानों ने इसे प्रक्रिया के रूप में विवेचित किया है।

इस प्रविधि के उपयोग द्वारा सेवार्थी के समेकित विकास तथा मुख्य रूप से उसके सामाजिक समायोजन एवं प्रकार्यात्मकता में बाधा डालने वाली परिस्थितियों में सुपरिवर्तन व सुधार लाया जाता है तथा उसके सम्पूर्ण पर्यावरण का अध्ययन करके उसमें निहित ऐसे तत्वों को दूर किया जाता है जो बाधा या अवरोध उत्पन्न करते है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए शिक्षाप्रद या मनोपवारात्मक क्षमता का सेवार्थी के साथ उपयोग करके जीवन सम्बन्धी नवीन अनुभवों को इस प्रकार प्रदान किया जाता है कि वह पर्यावरण में उपस्थित सामाजिक साधनों, परामर्शो या निर्देशनों का प्रभावी उपयोग कर सके।

मूल्यांकन (Evaluation) समाज की कार्य की सभी प्रणालियों के अभ्यास में विधिवत मूल्यांकन का एक महत्वपूर्ण स्थान है। सामान्यतः मूल्यांकन में अनुसंधान प्रणालियों का प्रयोग किया जाता है, कभी—कभी यह साधारण विवरणात्मक प्रकृति का होता है। जिसमें अभिकरण के उद्देश्यों व सदस्यों की सन्तुष्टि का अवलोकन सामुदायिक प्रत्यासा के संदर्भ में किया जात है। मूल्यांकन सेवा प्रदान करने की सम्पूर्ण प्रक्रिया के दौरान या किसी एक कार्य के समापन पर समीक्षा स्वरूपन कर दिया जाता है। ट्रेकर ने मूल्यांकन को वैयक्तिक सेवाकार्य का वह भाग माना है जिसमें कार्यकर्ता, अभिकरण के कार्यों व उद्देश्यों के सम्बन्ध में वैयक्तिक अनुभवों को गुणता का प्रमापन करता है।

वैयक्तिक सेवा कार्य के प्रमुख चरण

मानव समाज की ऐसी कोई समस्या नहीं है जो परिणा में सेवार्थी द्वारा न लायी जाती हो भूख गिटाने तथा भूख लगने की समस्या, प्रेम करने तथा प्रेम न करने की समस्या, साथ रहने तथा दूर जाने की समस्या विवाह करने तथा विवाह न होने की समस्या, बच्चा न हो तथा बच्चा अधिक होने की समस्या, धन अर्जित करने तथा खर्च करने की समस्या, तिरस्कार करने तथा तिरस्कृत किये जाने की समस्या, नौकरी न मिलने तथा कार्य करने की दशाओं की खराबी की समस्या, शारीरिक, मानसिक सांवेगिक आदि समस्याएं सेवार्थी द्वारा संस्था में लायी जाती है। इन सभी समस्याओं को समझना तथा उनका समाधान करना अत्यन्त दुष्कर कार्य है, इन सभी समस्याओं को इसी कारण भिन्न—भिन्न समस्याओं के लिए भिन्न—भिन्न संस्थाएं बन गयी है जो एक विशेष समस्या का समाधान करती है।

समस्या की परिभाषा

पर्लमेज–समस्या कुछ आवश्यकताओं, बाधाओं भग्नाशा के एकीकरण या समायोजन आदि के एक या संयुक्त होकर व्यक्ति की जीवन स्थिति पर या समाधान करने के प्रयत्नों को उपयुक्तता पर धमकी देता है या आक्रमण कर चुका होता है, से उत्पन्न होती है।

जेम्स एण्ड अदर्स–जब एक व्यक्ति उद्देश्य पर पूर्व सीखी आदतों, सम्प्रेरणाओं तथा नियमों से पहुंच नहीं पाता है, समस्या की स्थिति उत्पन्न होती है

उजकार के.–समस्या उस समय उत्पन्न होती है, जब जीवित प्राणी एक उद्देश्य तो रखता है परन्तु इस उद्देश्य को कैसे प्राप्त किया जाय नहीं जानता है।

समस्या के कारक

निम्न समस्या उत्पन्न करते हैं–

1. वर्तमान स्थिति से अरूचि या असंतोष।

2. वर्तमान स्थिति में परिवर्तन जिससे एक निश्चित उद्देश्य की पूर्ति हो।

3. सकारात्मक प्रयत्न तथा क्रिया की आवश्यकता जिससे कि वर्तमान को इच्छित दिशा में परिवर्तित किया जा सके।

4. समस्या की प्रकृति तथा जटिलता उद्देश्य प्रकृति तथा लटिलता पर निर्भर होती है।

वैयक्तिक कार्यकर्ता को समस्या के सम्बन्ध में जानकारी आवश्यक है–

1. सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य की परिधि में उन्हीं समस्याओं को सम्मिलित किया जाता है, जो सामाजिक कार्यत्मकता को प्रभावित करती है या सामाजिक कार्यात्मकता द्वारा प्रभावित होती है।

समस्या कोई एक या एक से अधिक आवश्यकता होती है, जो व्यक्ति के जीवन में व्यवधान एवं कष्ट उत्पन्न कर देती है। समस्या कोई दबाव भी हो सकती है जो सामाजिक भूमिका पूरी करने में बाधा उत्पन्न करती है या व्यक्ति अप्रभावकारी सिद्ध हो जाता है, व्यक्ति की क्षमता पर निर्भर होता है, कि वह किस प्रकार इन आवश्यकताओं एवं दबावों को कम करता है, वैयक्तिक कार्यकर्ता के पास सेवार्थी इसलिए जाता है क्योंकि वह समस्या समाधान में असमर्थ रहता है। वैयक्तिक कार्यकर्ता की सहायता का केन्द्र बिन्दु सेवार्थी का अहम् दृढ़ करता है। जिससे वह पुनर्समायोजन स्थापित कर सके। अपनी भूमिकाओं को पूरा करने में समर्थ हो सके तथा उसके व्यक्तित्व में संतुलन उत्पन्न हो जाये।

व्यक्ति की आन्तरिक समस्याओं के समाधान के लिए मनोचिकित्सा की आवश्यकता होती है, सामाजिक वैयक्तिक कार्यकर्ता की सेवार्थी की आन्तरिक तथा बाह्य समस्या की प्रकृति तथा उसकी प्रभावपूर्णता से अवगत होना आवश्यक होता है, उसे सामाजिक भूमिका को पूरा करने की समस्या की विस्तृत जानकारी कार्यकर्ता को होनी चाहिये ।

2. सेवार्थी की समस्या के अनेकानेक रूप तथा गत्यात्मक प्रकृति, समस्या के किसी एक अंग का चुनाव करने के लिए कार्यकर्ता व सेवार्थी को मजबूर करते हैं। यद्यपि समस्या की

सम्पूर्ण प्रकृति का ज्ञान आवश्यक होता है, परन्तु सम्पूर्ण समस्या का समाधान अत्यन्त कठिन होता है कार्यकर्ता समस्या के केन्द्र बिन्दु पर ध्यान देता है तथा समस्या को सम्पूर्णता में देखता है, प्रत्यक्षीकरण का कार्य व्यक्ति की आन्तरिक स्थितियां करती है, जबकि अनुकूलन का सम्बन्ध बाह्य दशाओं एवं शक्तियों से होता है जोकि जटिल होकर समस्या का रूप धारण कर लेती है कार्यकर्ता को सेवार्थी से पूछना चाहिए के समस्या के कौन से भाग पर पहले ध्यान देना चाहिए अथवा कौन सा भाग अधिक महत्वपूर्ण है।

समस्या के चुनाव में तीन बातों पर ध्यान देना आवश्यक होता है–

1. सेवार्थी क्या चाहता है या उसकी आवश्यकता क्या है?

2. कार्यकर्ता का व्यवसायिक निर्णय किस सम्भावित समाधान की ओर इंगित कर रहा है।

3. संस्था का क्या उद्देश्य है और कौन सी सुविधाएं उपलब्ध है?

सेवार्थी अपनी समस्या समाधान करना चाहता है, वह इसके विषय में पूर्ण जानकारी रख सकता है समाधान के विषय में सोच सकता है परन्तु वह अपने को समस्या समाधान करने में असमर्थ पाता है या वह समस्या के उस अंश पर अधिक ध्यान देता है जिनको वह चाहे मुख्य हो या गौण। क्योंकि सहायता का कार्य सेवार्थी के सहयोग से प्रारम्भ होता है अतः कार्यकर्ताको चाहिए कि वह पहले समस्या के उसी अंग पर अपना ध्यान करे जिसको सेवार्थी महत्व देता है।

3. समस्या सदैव श्रृंखलाबद्ध रूप में प्रतिक्रिया करती है कोई एक समस्या जो व्यक्ति में सामाजिक या सांवेगिक असमायोजन उत्पन्न करती है यह अन्य समस्याओं को भी उत्पन्न करती है, या अन्य समस्याओं की ओर ध्यान आकृष्ट करने के लिए बाध्य करती है ऐसा इसलिए होती है क्योंकि हम व्यक्ति का अध्ययन पूर्ण रूप से करते हैं अर्थात उसकी जैविकीय, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक सभी स्थितियों तथा कारकों का विश्लेषण करते हैं, व्यक्ति पूर्ण पर्यावरण के प्रति प्रतिक्रिया करता है।

4. कोई भी समस्या जिससे व्यक्ति ग्रसित होता है, वस्तुगत तथा विषयगत दोनों प्रकार से महत्वपूर्ण होती है। समस्या चाहे जितनी आसान हो चाहे समाधान जितना आसान परन्तु जो व्यक्ति के लिए भिन्न–भिन्न होती है। समान समस्या से ग्रस्त व्यक्तियों की आर्थिक समस्या है यदि उन्हें आर्थिक सहायता मिल जाय तो समस्या समाधान हो सकती है, दूसरा परन्तु यह समाधान दोनों के लिये समान संतुष्टि का नहीं हो सकता है, एक व्यक्ति अपनी बेकारी तथा वृद्धावस्था के कारण अवसाद अनुभव कर सकता है वह समस्या के लिए प्रार्थना पत्र देने में मान हानि या आत्मग्लानि का अनुभव कर सकता है। दूसरा व्यक्ति वृद्धावस्था को सामान्य स्थिति मानकर आर्थिक सहायता को अपना अधिकार समझता है, अतः कार्यकर्ता के लिए आवश्यक है कि वह समस्या के वस्तुगत एवं विषयगत दोनों पक्षो को समझे तथा समाधान पर भी इन पहलुओं का प्रभाव देखें।

5. समस्या के बाह्य तथा आन्तरिक तत्व न केवल एक साथ घटित होते हैं बल्कि इनमें सेकोई भी एक दूसरे का कारण हो सकता है।

कुछ ऐसी स्थितियां होती है, जो आन्तरिक समस्या उत्पन्न कर देती है। जिससे व्यक्ति का संतुलन बिगड़ जाता है। ऐसा समय होता है जब परिस्थितियां अत्यन्त प्रतिकूल होती है लेकिन जब परिस्थितियां जल्दी–जल्दी असंतुलन उत्पन्न करती है तथा व्यक्ति खतरा अनुभव करता रहता है तब ऐसी प्रतिक्रियाएं उसके व्यक्तित्व करता रहता है तब ऐसे व्यक्ति के लिए प्रत्येक नई स्थिति चिन्ता उत्पन्न करती है चाहे वह स्थिति साधारण हो या विषम इसका उसके लिए महत्व नहीं होता है।

उदाहरण के लिए एक बालक यह जानता है कि उसके माता–पिता सख्त स्वभाव के है तथा व्यवहार अच्छा नहीं करते है, वह अपने बचाव के लिए अनेक प्रतिक्रियाएं करता है जब खेल समूह बनता तो वह माता पिता के व्यवहार को असमान्य ही मानता है और उन्हें नापसन्द करता है इस प्रकार उसकी आन्तरिक समस्या नई समस्या का कारण होती है जब तक उसके दृष्टिकोण में परिवर्तन नहीं किया जाता है, तब तक उसका स्वभाव वैसा रहता है तथा प्रत्यक्षीकरण पर पूर्व अनुभव तथा आन्तरिक समस्या का रंग चढ़ा रहता है।

6.समस्या जिसको कि सेवार्थी संस्था में जाता है, उसकी प्रकृति कैसी भी हो परन्तु सदैव या अधिकांशतः सेवार्थी संस्था में जाता है या होने की समस्या जुड़ी रहती है।

जब सेवार्थी सहायता की प्रार्थना संस्था से करता है तो उसकी प्रक्रियाओं का प्रभाव समस्या समाधान पर पड़ता है, कोई सेवार्थी अपनी कमी को समस्या समझता है कोई अपनी असफलता मानता है और कोई मानसिक अक्षमता मानता है, इस दृष्टिकोण का उसके व्यक्तित्व पर प्रभाव पड़ता है उसमें हीनभावना उत्पन्न हो सकती है तथा एकान्तवासी हो सकता है, क्योंकि सेवार्थी सहायता प्राप्त करने को अपना अधिकार नहीं मानते हैं, अतः वह सोच सकता है कि सहायता की प्रार्थना करने से सामाजिक स्तर गिर जायेगा या दूसरों का अहसान होगा या सहायता मांगना भीख मांगने के समान है आदि। इस प्रकार के दृष्टिकोण से कार्यकर्ता को अवगत होना आवश्यक होता है, उसको जानना चाहिये कि सेवार्थी सहायता को किस प्रकार उपयोग लाना चाहता है, वह सहायता किस आधार पर चाहता है तथा उसकी क्या प्रतिक्रिया है।

समस्या समाधान करने के लिए आवश्यक योग्यताएँ

1. समस्या के तथ्यों का पूर्ण ज्ञान होना।

2. समस्या के सभी तत्वों के अन्तसंम्बंधों का ज्ञान होना।

3. तत्वों को व्यवस्थित करने की योग्यता तथा विकास की गति का ज्ञान।

4. परिस्थिति का उचित प्रत्यक्षीकरण।

5. पूर्व अनुभवों का उचित उपयोग।

6. सम्प्रेरणाओं की जटिलता तथा प्रकार का ज्ञान।

समस्या समाधान की प्रक्रिया को दो चरणों में विभक्त किया जा सकता है–1. समस्या विश्लेषण चरण, तथा 2. निर्णय लेने का चरण।

समस्या विश्लेषण– समस्या विश्लेषण में निम्न बातों का ज्ञान प्राप्त किया जाता है–

1. आशान्वित कर्तव्यपूर्ति का स्तर तथा वास्तविक कर्तव्यपूर्ति अन्तर का स्पष्टीकरण।

2. कर्तव्य पूर्ति स्तर से भिन्न व्यवहार समस्या का कारण प्रत्यक्षीकरण स्पष्ट करना।

3. स्तर से भिन्न का स्पष्ट अवलोकन, तथा विवरण।

4. कुछ महत्वपूर्ण कारक।

5. समस्या का कारण कुछ महत्वपूर्ण यंत्रों, विधियों तथा स्थितियों से बदलता रहता पड़ता है,जिसका आवांछनीय प्रभाव करना।

6. समस्या उत्पन्न करने का एक प्रमुख कारक की खोजकरना।

2. निर्णय प्रक्रिया

1. निर्णय के उद्देश्यों का स्पष्टीकरण पहले होना आवश्यक होता है।

2. महत्व के आधार पर उद्देश्यों का वर्गीकरण।

3. वैकल्पिक उपाय भी ढूंढ़ने चाहिए।

4. इन उपायों का मूल्यांकन करना चाहिए।

5. अस्थायी निर्णय का प्रभाव जानना चाहिए।

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्यके चरण : अध्ययन, निदान एवं उपचार

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के चरण– अध्ययन, निदान एवं उपचार

व्यक्तियों की सेवा एवं कठिनाइयों के निवारण हेतु सहायता करने की दृष्टि से सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य हमारे समाज की एक प्राचीन व्यवस्था है। यह समाज कार्य व्यवसाय की उक विशेषता है जो मानवीय समाज के प्रत्येक युग में ऐतिहासिक दृष्टि से देखी जा सकती है। परन्तु प्राचीनकाल में वैयक्तिक सेवा कार्य का स्वरूप वह नहीं था जो आज के आधुनिक व्यावसायिक सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का स्वरूप है जिसमें वैज्ञानिक ढंग से सिद्धांतों एवं कार्यविधियों का इस प्रकार निरूपण किया गया है कि उन्हें सेवा कार्य करने के इच्छुक व्यक्तियों को सिखाया जा सकता है तथा व्यावसायिक रूप से इनका व्यावहारिक जीवन में अभ्यास करके सहायता कार्य किया जा सकता है अर्थात आधुनिक सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य एक नवीन अवधारणा एवं नई प्रणाली के रूप में विकसित हुआ है जो प्राचीन सेवा कार्य की अवधारणा से सर्वथा भिन्न है।

अध्ययन

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का उद्देश्य व्यक्ति की मनोसामाजिक समस्याओं के निदान व उपचार में सहायता करता है। मानव की प्रकृति की विशेषता है कि वह अपनी मूल समस्या के स्त्रोत को जहां तक संभव होता है छिपाने के उपाय करता है और समस्या के कारण को दूसरे कारक पर प्रक्षेपित कर देता है। जिसके कारण सेवार्थी की मनोस्थिति तथा बाह्य स्थिति का वास्तविक ज्ञान प्राप्त करता है। लेकिन प्राप्त करना कठिन हो जाता है। साक्षात्कार के समय सेवार्थी ऐसी जटिल समस्यायें उत्पन्न करता है। जिसके कारण कार्यकर्ता भी कभी–कभी असामंजस में पड़ जाता है और चिकित्सात्मक कार्य में बाधा उत्पन्न हो जाती है। अतः सेवार्थी का संपूर्ण ज्ञान प्राप्त करना वैयक्तिक कार्यकर्ता का प्रथम उद्देश्य होता है। वह सेवार्थी की आन्तरिक तथा बाह्य दोनों प्रकार की स्थितियों का अध्ययन करता है।

वैयक्तिक अध्ययन से निरीक्षण तथा अवलोकन में गहनता आती है तथा सेवार्थी को समझने में स्पष्ट दृष्टि प्राप्त होती है। इसके द्वारा सेवार्थी के व्यवहार का अप्रत्यक्ष अध्ययन करने के स्थान पर प्रत्यक्ष रूप से अध्ययन करते हैं। सेवार्थी एक व्यक्ति तथा एक परिवार अथवा समूह भी हो सकता है वैयक्तिक अध्ययन में व्यक्ति संस्था अथवा समुदाय को एक इकाई माना जाता है और उसका सर्वांगीण अध्ययन किया जाता है। इसमें विषयवस्तु के प्राचीन तथा अर्वाचीन दोनों संदर्भों का अध्ययन किया जाता है। इसका क्षेत्र व्यक्ति अथवा इकाई का संपूर्ण जीवन वृत्त है।

वैयक्तिक अध्ययन की विशेषतायें

1. समस्या का गहन अध्ययन
2. व्यक्तिपरक पहलुओं का अध्ययन
3. वैयक्तिक मान्यता
4. सर्वांगीण अध्ययन

वैयक्तिक अध्ययन में सूचना के स्त्रोत

1. सेवार्थी स्वयं
2. व्यक्तिगत प्रलेख
3. जीवन इतिहास
4. अतिरिक्त स्त्रोत

वैयक्तिक अध्ययन की विषय वस्तु

1. परिचयात्मक आंकड़े
2. समस्या का स्पष्ट चित्रण

3. उपचार

4. भावनायें तथा विचार

5. विकासात्मक स्थिति का अध्ययन

6. पारिवारिक इतिहास

7. वैवाहिक इतिहास

8. व्यावसायिक इतिहास

9. व्यक्तित्व की विशेषतायें

10. समस्या का निदान

सामाजिक वैयक्तिक कार्य में अध्ययन का महत्व

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य समाज कार्य की एक महत्वपूर्ण प्रणाली है जिसके द्वारा एक व्यक्ति की सहायता की जाती है, जिससे वह अपनी समस्याओं को सुलझा सके तथा भविष्य में इस समस्या से ग्रसित न हो, उसे आत्मनिर्भर बनाने का प्रयत्न किया जाता है। अतः सहायता प्राप्त करने वाले व्यक्ति का पूर्ण व्यक्तित्व, जानना आवश्यक होता है तभी उसमें निहित शक्ति एवं क्षमता को उभार कर सक्रिय रूप में उपयोग में लाया जा सकता है। वैयक्तिक अध्ययन से व्यक्ति की संपूर्ण स्थिति का चित्रण होता है। उसकी संपूर्ण दशाओं का ज्ञान होता है। परिस्थितियों के प्रभावों का पता चलता है।

निदान

निदान शब्द चिकित्सा शास्त्र में अधिकांशतः प्रयोग किया जाता है, जिसका तात्पर्य के अधिकांशतः प्रयोग किया जाता है। जिसका तात्पर्य रोग के संपूर्ण ज्ञान से है। समाज कार्य में निदान का अर्थ न केवल समस्या के पूर्ण ज्ञान से होता है बल्कि सेवार्थी उसके संबंध में पूर्ण ज्ञान से होता है। निदान सेवार्थी द्वारा प्रस्तुत समस्या की वास्तविक प्रकृति से है। निदान तथा चिकित्सा एक दूसरे पर न्योन्याश्रित है, क्योंकि निदान चिकित्सा को निर्देशित करता है और जैसे–जैसे चिकित्सा की प्रगति होती है। निदान में परिवर्तन तथा विकास होता है, अतः को पुनः निर्देशित किया जाता है।

निदानात्मक प्रक्रिया

वैयक्तिक सेवा कार्य में प्रत्येक सेवार्थी के विषय में वैयक्तिक कार्यकर्ता को निशचित करना पड़ता है कि किस प्रकार से उसकी समस्या को अधिकाधिक संतोष के साथ सुलझाया जा सकता है। इसके लिये वह उपलब्ध सूचनाओं का अध्ययन करता है तथा अपने व्यावसायिक ज्ञान द्वारा समस्या के कारकों की खोज करता है।

इस प्रक्रिया के अंतर्गत निम्न तीन चरण होते हैं–

1. तथ्यों का मूल्यांकन

अ. समस्या का मूल्यांकन

ब. व्यक्तित्व का मूल्यांकन

स. सामाजिक पर्यावरण का मूल्यांकन

2. कारणान्वेषण

अ. समस्या का रूप

ब. सामाजिक पर्यावरण का व्यक्तित्व पर प्रभाव

स. समस्या उत्पत्ति के मुख्य कारक

द. समस्या के उपचार के उपाय

3. श्रेणीकरण

अ. समस्या के आधार पर वर्गीकरण

ब. संस्था की सेवा का महत्व

निदान के प्रकार

पर्लमैन ने निदान के तीन प्रकार बताये हैं– 1. गतिशील निदान, 2. क्लिनिकल निदान, 3. कारणात्मक निदान।

उपचार

वैयक्तिक सेवा कार्य के अंतर्गत उपचार अथवा समस्या समाधान के उद्देश्य से विभिन्न विद्वानों ने अनेक प्रक्रियाओं एवं प्रविधियों का उल्लेख किया है, हांलिस ने मुख्य चार प्रविधियों का उल्लेख किया है।–

(1) व्यावहारिक सेवा का प्रशासन –वैयक्तिक सेवा कार्य द्वारा उपयोग की जाने वाली उपचार प्रक्रिया की सबसे अधिक पुरानी विधि व्यावहारिक सेवा का प्रतिपादन है। इस विधि के अंतर्गत वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी को इस प्रकार सहायता प्रदान करता है कि वह समुदाय में उपलब्ध एक या अनेक साधनों का समुचित प्रयोग कर सके। इस विधि के प्रतिपादन में कार्यकर्ता सर्वप्रथम साक्षात्कार के माध्यम से सेवार्थी के साथ व्यावसायिक संबंध स्थापित करता है।

(2) प्रत्यक्ष उपचार –प्रत्यक्ष उपचार सेवार्थी के संवेगात्मक सन्तुलन स्थापित करने के उद्देश्य से साक्षात्कारों की एक श्रृंखला के माध्यम से सहायता प्रदान करता है। संवेगात्मक संतुलन बनाये रखने केलिये सेवार्थी की मनोवृत्तियों को स्पष्ट करके उसमें उपेक्षित परिवर्तन एवं समृद्धि लाने का प्रयास किया जाता है, इस प्रकार अंतर्वैज्ञानिक समर्थन भी

निहित होता है जो वैयक्तिक सेवाकार्य प्रणाली मेंमनरू सामाजिक समायोजना का प्रमुख कारक होता है। प्रत्यक्ष उपचार के अंतर्गत कार्यकर्ता जितना अधिक मनोचिकित्सा के प्रयोग की ओर उन्मुख होता है।

उपचार की प्रक्रिया

(i) समन्वेषण की प्रक्रिया

(ii) स्पष्टीकरण की प्रक्रिया

(iii) प्रतिरोधात्मक प्रविधि

(iv) अर्थनिरूपण की प्रक्रिया

(v) सम्बल की प्रक्रिया

सहायक प्रविधियां

(i) पर्यावरण का परिमार्जन (Modificationof environment)

(ii) अंर्तदृष्टि का विकास (InsightDevelopment)

(iii) स्वीकृति (Acceptance)

(iv) सकारात्मकता (Affirmation)

(v) व्याख्या (Explanation)

(vi) पुनर्सात्वना (Reassurance)

(vii) आंशिकरण (Partilization)

(viii) निर्देशक (Guidance)

(ix) तादात्मीकरण (Identification)

(x) सांक्षिप्तीकरण

सेवार्थी कार्यकर्ता संबंध
Client Case Worker Reletionship

संबंध का प्रत्यय है, जो मौखिक अथवा लिखित वार्तालापों में प्रकट होता है। जिसमें दो व्यक्ति कुछ लघुकालीन, दीर्घकालीन स्थायी अथवा अस्थायी सामान्य रूचियों एवं भावनाओं के साथ अन्तःक्रिया करते हैं। ऐसा प्रायः सोचा जाता है कि केवल एक साथ एक स्थान पर एकत्र होने से या सुखदाई अन्तसंचार से या दो व्यक्तियों में दीर्घकालीन समीप्य का ज्ञान

पहचान से संबंध स्थापित हो जाते हैं। परन्तु ऐसा नहीं है। मनुष्यों के बीच परमावश्यक संबंध भागीकृत एवं संवेगात्मक परिस्थितियों से उत्पन्न होते हैं।

सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य में संबंध का उपयोग आदि से अन्त तक होता है। इस प्रक्रिया में सेवार्थी तथा वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता सम्पूर्ण प्रक्रिया में उमयनिष्ठ होते हैं तथा कार्य का आधार संबंध स्वयं होता है। स्लखन के अनुसार आमने–सामने के संबंध बौधिक एवं सांवेगिक प्रक्रियाओं को प्रभावशाली बनाते हैं। मनोवृत्तियों को व्यवस्थित तथा व्यक्ति को समाजीकृत करते हैं। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में संबंध को सदैव महत्वपूर्ण माना गया है तथा संबंध को साधन के रूप में उपयोग किया जाता है। क्योंकि समस्या समाधान में लगे मष्तिस्क तथा शारीरिक श्रम उस समय कम कष्ट साध्य हो जाते हैं। जब वे सौहार्द तथा दृढ़ संबंधों के बीच घटित होते हैं। इससे जो आशा तथा सहायता का रूप प्रकट होता है, उससे प्रयत्न करने की इच्छा अधिक प्रेणात्मक एवं पोषणात्मक हो जाती है।

Case workमें संबंध स्थापन ही सहायता कार्य का आधार होता है। क्योंकि संबंधों के द्वारा Case workerकिसी व्यक्ति व समस्या को समझता है और उनमें परिवर्तन लाने का प्रयास करता है और व्यक्ति की अहमं शक्ति एवं अंतर्दृष्टि को विकसित करते हुये समस्या सुलझाने का मार्ग प्रस्तुत करता है। सेवार्थी के साथ स्थापित किया गया संबंध ही उपकरण है। जिसके द्वारा कार्यकर्ता सेवार्थी की समस्या का उपचार करता है।

उसको समस्या का उचित एवं सही ज्ञान तभी प्राप्त होता है। जब सेवार्थी के साथ संबंधों में घनिष्ठता आती है। जैसे–जैसे संबंध घन्ष्टि होते जाते हैं। वैयक्तिक सेवा कार्य का उद्देश्य प्राप्त होता जाता है। इसके अतिरिक्त सेवार्थी पर आंतरिक एवं बाह्य वातावरण के प्रभाव को धनिदर संबंध स्थापन के पश्चात ही समझा जा सकता है।

परिभाषा

सामाजिक सेवाकार्य एक संबंध प्रक्रिया द्वारा स्वयं अपने तथा सामान्य सामाजिक कल्याण हेतु सामाजिक सेवाओं के उपयोग में आवश्यक रूप से एक को एक द्वारा सेवार्थी को व्यस्त करने की एक प्रणाली है।

इस अर्थ में संबंध एक अटूट संदर्भ है, जिससे समस्या का समाधान होता है। इसी समय यह पारस्परिक समस्या समाधान के प्रयत्नों को प्रगट करता है। साथ ही साथ व्यक्तित्व केअचेतन स्तर में विश्वास, आत्म महत्व, सुरक्षा तथा दूसरे व्यक्तियों के सम्पर्क के अर्थ में परिवर्तन को क्रमबद्ध करने का माध्यम है।

सेवार्थी संस्था में व्यक्तिगत सामाजिक असंतुलनों के साथ संस्था में आता है। इस प्रकार असंतुलनों को संशोधित करने के लिये ेंम ूवता में वैज्ञानिक कार्यकर्ता शेयार्थी संबंध परिवर्तन का माध्यम होता है।

सामान्यतः सेवार्थी अपनी एक या एक से अधिक रामस्याओं को लेकर वैयक्तिक कार्य संस्था में आता है। परन्तु उसकी समस्याओं का संबंध उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व अर्थात शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, विगत जीवन के अनुभव, वर्तमान क्रियाओं तथा प्रतिक्रियाओं और गविष्य की आशाओं से होता है। अतः समस्या को समझने के लिये इन रागी कारकों को

समझना आवश्यक होता है। परन्तु ये कारक वास्तविक रूप में तभी समझे जा सकते हैं, जब सेवार्थी तथा कार्यकर्ता में घनिष्ठ संबंध हो वैयक्तिक सहायता का रूप कोई भी क्यों न हो उसकी सफलता के लिये संबंध स्थापित करना अत्यंत आवश्यक होता है। क्योंकि Social Connectedness] Social Recognition जीवन पर्यन्त कारक रहते हैं। साथ ही साथ व्यक्तित्व को निर्मित करने वाले भी A Case workमें किसी भी सक्षम Care respect, Love, Social exchange affirmationका होना आवश्यक होता है। क्योंकि अमाव क्षतिग्रस्तता तथा तनाव एवं कष्ट के समय इन विशिष्ट मानव प्रारूपों के पोषकों की आवश्यकता सामान्य अवस्था से अधिक तीव्र हो जाती है ।

सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य की प्रकृति

1. निदानात्मक सम्प्रदाय

2. कार्यात्मक सम्प्रदाय।

संबंध और साक्षात्कार

वैयक्तिक सेवाकार्य का मूलाधार साक्षात्कार निपुणतायें कार्यकर्ता सेवार्थी के संबंध का रचनात्मक प्रयोग तथा मानव व्यवहार की गतिशीलता के कार्यात्मक ज्ञान पर निर्भर होता है। लगभग सभी प्रकार ब्ेंम ूवता साक्षात्कार द्वारा जिसमें कार्यकर्ता तथा सेवार्थी संबंध स्थापित होता है, सम्पन्न किया जाता है। वैसे तो सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य में संबंध प्रत्येक स्तर पर महत्वपूर्ण होता है। परन्तु साक्षात्कार की प्रारंभिक अवस्था में इसकी विशेष उपयोगिता होती है, सेवार्थी की आन्तरिक भावनाओं कठिनाइयों तथा वैयक्तिक इतिहास का जितना ही अधिक ज्ञान ब्ेंम ूवतामत को होता है। उतना ही अधिक वह उपचार कार्य में सफलता प्राप्त करता है। परन्तु इस ज्ञान को प्राप्त करने के लिये घनिष्ठ संबंध की आवश्यकता होती है। वह जितना ही सेवार्थी के निकट होगा इतना ही सेवार्थी का आंतरिक एवं बाह्य चित्रण करने में सफल होता है। वैयक्तिक इतिहास में वास्तविक तथ्यों का निरूपण सेवार्थी की मानसिक एवं सांवेगिकस्थिति, कठिनाइयों तथा वे कारक जो सेवार्थी को समायोजित करने में बाधा उत्पन्न करते हैं होता है, निदान एवं उपचार के लिये ब्ेंम ीपेजवतल आवश्यक है। अतरू ब्ेंम ूवतामत को सर्वोपरि तथा प्राथमिक कार्य सेवार्थी की समस्याओं का गहराई से अध्ययन करना होता है। यदि सेवार्थी को ब्ेंम ीपेजवतल देने में महत्व का ज्ञान हो जाता है, तो वह इस प्रक्रिया में भाग लेकर कार्यकर्ता को सहयोग प्रदान करता है। परन्तु उसको इसकी आवश्यकता का आभास तभी होता है। जब कार्यकर्ता सेवार्थी के मूल्यों का आदर करता है तथा स्नेह प्रेम व साहिष्णुता प्रदान करता है। इस अवस्था में जो संबंध बनते हैं, उनका स्वरूप सकारात्मक होता है।

उदाहरण के लिये जब रोगी को ज्ञात हो जाता है कि कार्यकर्ता उसके हित में उसके सामाजिक तथ्यों को प्रकाश में लाना चाहता है। तो वह कार्यकर्ता का सहयोग करने लगता है। अतः कार्यकर्ता को अपने प्रति विश्वास उत्पन्न करने के लिये घनिष्ट संबंध स्थापन की आवश्यकता होती है।

सेवार्थी Case workसंस्था में यदि अपनी वास्तविक समस्याओं के प्रति समाधान के लिये आता है। परन्तु अपने सांवेगिक संघर्ष को अत्यन्त व्यक्तिगत समझकर कार्यकर्ता के समक्ष

प्रगट नहीं करना चाहता, वह सभी सांवेगिक एवं व्यक्तिगत समस्याओं को प्रगट करता है, जब कार्यकर्ता द्वारा उसे सहिष्णुता लगाव स्नेह प्राप्त होता है तथा कार्यकर्ता पर पूर्ण विश्वास हो जाता है। अतः संबंध स्थापित होने के लिये दो तत्वों का होना आवश्यक होता है। लेकिन कार्य कर्ता को सदैव ध्यान देना चाहिये कि उसका उद्देश्य केवल व्यवसायिक संबंध स्थापित करना है। जिससे सेवार्थी का सामाजिक प्रतिस्थापन हो सके।

1. सेवार्थी का कार्यकर्ता की दक्षता में विश्वास

2. कर्ता की सद्भावना पर सेवार्थी का विश्वास।

घनिष्ठ संबंध के आधार

वैयक्तिक कार्यकर्ता वह सफल माना जाता है, जो सेवार्थी की संचार प्रक्रिया करने की प्रविधि से अवगत होता है। इस संबंध में के.ए. हसन ने तीन प्रकार के संचार स्तरों का वर्णन जो उन्होंने चिकित्सक तथा रोगी के संबंध में किया है। उचित प्रतीत होते हैं।

1. Communication on emotional lavel

चिकित्सक को सेवार्थी प्रति सहिष्णुता तथा लगाव प्रदर्शित करते हुये उनकी शिकायतें ध्यानपूर्वक सुनना चाहिये। जब सेवार्थी अनुभव कर यह विश्वास उत्पन्न कर लेता है कि चिकित्सक उसमें रूचि ले रहा है तो व्यक्तिगत से व्यक्तिगत तथ्य स्पष्ट करने में हिचकिचाहट महसूस नहीं करता, संबंध घनिष्ठ तमी बनते हैं, जब सेवार्थी अपनी बात स्पष्ट कर लेता है तथा चिकित्सक की सहानुभूति प्राप्त होती है। यही कारण है कि गांवों में लोक औषधि का आज भी महत्व है, क्योंकि वहां पर रोगी अपनी स्वतंत्रता अनुभव करता है।

2. सांस्कृतिक स्तर का संचार

चिकित्सक को सेवार्थी की संस्कृतिक का ज्ञान होना आवश्यक होता है। क्योंकि वहां सांस्कृतिक कारक समस्या को जटिल बनाने में काफी हद तक भूमिका अदा करता है। इसके अतिरिक्त यदि चिकित्सक सेवार्थी की सांस्कृतिक अनुकूलता के अनुसार व्यवहार करता है तो सेवार्थी अपना पूरा प्रयत्न संबंध घनिष्ठ से घनिष्ठ होने में सहयोग देता है।

3. बौद्धिक स्तर पर संचार (Communication on intellectual lavel)

कार्यकर्ता को उसी बौद्धिक स्तर से बातचीत बात करना चाहिये, जिस बौद्धिक स्तर का सेवार्थी हो क्योकि यदि सेवार्थी को कार्यकर्ता की बात या सुझाव समझ में नहीं आयेगा, तो वह कभी–कभी हार्दिक सहयोग प्रदान नहीं करेगा जिससे कार्यकर्ता संबंध के उद्देश्य को प्राप्त नहीं कर सकेगा।

परिवर्तन में सेवार्थी का स्थान

1. सेवार्थी की इच्छा सर्वोपरि तथा प्रमुख– यदि वैयक्तिक कार्यकर्ता चिकित्सक की भूमिका निभाता है, परन्तु वह सेवार्थी की इच्छा को भी महत्व प्रदान करता है। यह उन

मार्गों दिशाओं तथा निर्देशन सूची प्रस्तुत करता है। जिन पर चलकर सेवार्थी अपनी समस्या को सुलझा सकता है। परन्तु सेवार्थी की इच्छा पर निर्भर होता है कि वह किस प्रकार इन सुविधाओं का उपयोग करता है।

2. सेवार्थी के आत्मनिश्चय की स्थिति स्वीकृति– वैयक्तिक कार्यकर्ता सदैव इस बात का प्रयत्न करता है कि सेवार्थी स्वयं निश्चित करे कि किस प्रकार उनकी सहायता किया जाये, इसके अतिरिक्त कार्यकर्ता सदैव यह प्रयत्न करता है कि सेवार्थी आत्म निश्चय उत्पन्न करने में सफल हो क्योंकि समस्या का प्रारंभ आत्मनिश्चय में कमी के कारण प्रायः होता है।

3. आत्मज्ञान प्रदान करने तथा आत्मनिर्णय का विकास– वैयक्तिक कार्यकर्ता सेवार्थी में आत्मज्ञान तथा आत्मनिर्णय का विकास करने में संबंधों का उपयोग करता है। वह सेवार्थी के अन्तर्गत स्वयं की क्षमताओं तथा बिलक्षणताओं, स्वयं के विचार तथा मूल्यांकन का आलोचनात्मक विश्लेषण कर सेवार्थी के स्वयं कार्यशील बना देता है। कार्यकर्ता कभी भी अपने निर्णय को थोपने का प्रयत्न नहीं करता।

4. सेवार्थी को उपचार का ज्ञान तथा सहयोग– सेवार्थी को उपचार कार्य में लगाने में सदैव दो पक्ष विद्यमान रहते हैं–1. सम्प्रेरणा और 2. विरोध।

इन दोनों कारणों को जानना वैयक्तिक कार्यकर्ता के लिये आवश्यक होता है कि सेवार्थी की सम्प्रेरणा से पता चलता है कि कितना परिवर्तन चाहता है तथा परिवर्तन लाने के लियेयोगदान देने के लिये कितना इच्छुक है। विरोध के ज्ञान से सहयोग प्राप्त करने की माता का ज्ञान होता है, कार्यकर्ता सेवार्थी को उपचार का ज्ञान करा देता है और यहां तक सहयोग देता है जहां तक वह स्वयं तथा सेवार्थी आवश्यक समझता है।

Multi Worker Relationships

कभी–कभी रोवार्थी की समस्या समाधान के लिये एक से अधिक कार्यकर्ताओं की आवश्यकता होती है। क्योंकि समस्या का रूप सर्वदा जटिल होता है तथा समस्या उत्पन्न करने वाले कारकों में भिन्नता होती है। उदाहरण के लिये एक ही परिवार में आर्थिक तथा स्वास्थ्य की समस्या अथवा एक ही परिवार में एक से अधिक रोगियों की भिन्न–भिन्न समस्यायें हो सकती है। इन दशाओं में प्रायः ऐसे अधिक कार्यकर्ताओं की सेवाओं की आवश्यकता होती है। परन्तु सेवार्थी की समस्या का समाधान तभी हो सकता है। जब विभिन्न कार्यकर्ताओं में आपस में सहयोग हो। उनमें आपस में किसी प्रकार का प्रेम नहीं होना चाहिये।

सेवार्थी जब संस्था में आता है। तो अनेक कार्यकर्ता से परिचय होता है। परन्तु कार्यकर्ता को यह कर्तव्य होता है कि सेवार्थी से सांवेगिक संबंध न स्थापित करे, अन्यथा सेवार्थी अन्य कार्यकर्ताओं से संबंध स्थापित करने में कठिनाई तथा विरोध उत्पन्न करेगा। इसके अतिरिक्त प्रत्येक कार्यकर्ता का कर्तव्य होता है कि वह दूसरे कार्यकर्ता को जिससे सेवार्थी सहायता के लिये जा रहा है। पूरा परिचय कराने तथा एकत्रित सूचनाओं को हस्तांतरित करे।

कार्यकर्ता आपस में ऐसी स्पर्धा नहीं होना चाहिये जिसमें सेवार्थी को हानि पहुंच सके तथा सेवार्थी सहयोग देना बन्द कर दे। उनमें किसी प्रकार के अर्न्तद्वन्द की भावना विकसित नहीं होना चाहिये। जिससे सेवार्थी प्रत्येक कार्यकर्ता के साथ कार्य करते हुये पूर्ण सद्भावना तथा सहयोग प्राप्त कर सकें।

कार्यकर्ता सेवार्थी संबंध के सिद्धान्त

एफ.बी. बीसटेक ने कार्यकर्ता सेवार्थी संबंध के निम्न सिद्धान्त बताये गये हैं–

(1) Principle of Individualization– प्रत्येक व्यक्ति की बाह्य एवं आतंरिक परिस्थितियां भिन्न भिन्न होती हैं और उनका प्रभाव भी भिन्न–भिन्न होता है। अतः कार्यकर्ता का कर्तव्य है कि वह संबंध स्थापन के साथ–साथ सेवाओं के विषय में जानकारी प्राप्त करें यह न मान लें कि एक ही प्रकार की समस्याओं का स्त्रोत समान होता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व का विकास अपनी रूचि के अनुसार करने का अधिकार है और इस बात का भी अधिकार है कि उनके व्यक्तित्व के विशेष अन्तरों और विशेषताओं के महत्व दिया जाना जाये। वैयक्तिकरण करने के लिये वैयक्तिक Case Workerमें निम्न विशेषतायें होनी चाहिये–

1. सर्वागीण दृष्टिकोण तथा पक्षपात रहित

2. विषयात्मक दृष्टिकोण

3. मानवीय व्यवहार का ज्ञान – औषधिशास्त्र, मनोविज्ञान, मनोचिकित्सा समाजशास्त्र और दर्शनशास्त्र का अध्ययन

4. सुनने तथा अवलोकन करने की योग्यता

5. सेवार्थी में आत्मीयता की भावना उत्पन्न करने और उनकी भावनाओं को समझने की योग्यता।

6. सेवार्थी की अमहत्वपूर्ण बातों को भी महत्व देना साक्षात्कार के लिये एकान्तरता का प्रबंध करना

7.समस्या के अध्ययन, निदान तथा चिकित्सा में सेवार्थी का सहयोग प्राप्त करने की योग्यता

(2) भावनाओं का उद्देश्यपूर्ण प्रगटन–Perposesful eÛpression of feeling & case worker client relationship में सेवार्थी को अपनी सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रकार की भावनाओं को प्रगट करने का अधिकार है। कार्यकर्ता सेवार्थी की भावनाओं का न तो प्रसंसा करता है और न ही निन्दा करता है। वह केवल उद्देश्यपूर्ण ढंग से सेवार्थी की बातों की सुनता रहता है। परन्तु जब सेवार्थी को भावनाओं को प्रगट करने के लिये सहायता की आवश्यकता होती है। तो वह उद्दीपन कार्य करता है।

कार्यकर्ता सेवार्थी की भावनाओं को प्रगटन का निर्देशन इस प्रकार करता है कि उससे समस्या का अध्ययन निदान और उपचार में सहायता प्राप्त हो सके।

(3) Controlled emotional involvement– कार्यकर्ता सेवार्थी के साथ कार्य करते समय सदैव अपनी सावेंगिक भावनाओं पर नियंत्रण रखना चाहिये, यदि ब्ंम ूवतामत – बसपमदज के प्रति प्रेम, सहयोग, स्नेह तथा लगाव प्रदर्शित करता है। परन्तु इस प्रकार के व्यवहार का उद्देश्य व्यवसायिक होता है। वह सदैव इस प्रकार के व्यवहार से सेवार्थी की समस्या का निदान तथा उपचार करता है ।

(4) Aceptance–Client - case workerसंबंध में सेवार्थी जैसा ही है वैसा ही कार्यकर्ता द्वारा स्वीकृत किया जाता है। वह सेवार्थी की विशेषताओं, भावनाओं विचारों तथा व्यक्तित्व संगठन को उचित स्थान प्रदान करता है। उसकी इस बात का विश्वास दिलाया जाता है कि उसके आत्म का विलयन किसी भी स्थिति में नहीं होगा। कार्यकर्ता सेवार्थी की शक्तियों और दुर्बलताओं, उनके अनुकूलन एवं प्रतिकूल गुणों उसकी सकारात्मक एवं नकारात्मक भावनाओं एवं मनोवृत्तियों के अनुसार ही व्यवहार करता है। कार्यकर्ता सेवार्थी के वैयक्तिक मूल्य का ध्यान रखता है।

स्वीकृति का उद्देश्य वास्तविक स्वीकृति है, वह चाहे कार्यकर्ता के अनुकूल हो या प्रतिकूल परन्तु स्वीकृति का तात्पर्य विचलित मनोवृत्तियों एवं व्यवहारों को स्वीकृत करना नहीं होता है।

(5) Non Judgemental Attitude– कार्यकर्ता कभी भी सेवार्थी के संबंध में पूर्ण निर्णय नहीं लेता है। उसका प्रभाव सदैव समस्या के कारणों की खोज करना है न कि निर्णय करनाहोता है। सेवार्थी के संबंध में उसकी मनोवृत्ति अनिर्णायक होती है। अर्थात सेवार्थी के विषय में कोई अच्छी या बुरी धारणा स्थापित नहीं करता है। वह सेवार्थी की मनोवृत्तियों, आदशों व क्रियाओं का वास्तविक तथा विषयात्मक रूप से मूल्यांकन करता है। वह अपने नैतिक मानदण्डों को रखकर मूल्यांकन न करके अपने व्यवसायिक ज्ञान एवं अनुभव द्वारा करता है, यह को अनैतिक रूप से दोषी ठहराता है और न ही उसकी निन्दा करता है।

(6) Client Self Determination– सेवार्थी को अपनी समस्या को समझाने निदान में सम्मिलित होने तथा उपचार कार्य को अपने अनुकूल सुलझाने का अधिकार होता है। उसको पूर्ण अधिकार होता है कि वह सहायता ले अथवा न ले कार्यकर्ता की बात को स्वीकार करें अथवा न करें, सेवार्थी में आत्म निश्चय उत्पन्न हो जाने पर कार्यकर्ता उसकी समस्या समाधान के लिये पूर्ण स्वतंत्र कर देता है। यदि कोई भी निर्णय कार्यकर्ता द्वारा किया जाता है तो वह निर्णय सेवार्थी द्वारा पूर्ण स्वीकृत होता है।

(7) गोपनीयता– कार्यकर्ता सेवार्थी द्वारा बतायी गयी सभी बातों को गुप्त रखता है। सेवार्थी तभी अपनी व्यक्तिगत तथा सावेंशिक बातों को बताता है। जब उसे इसे गुप्त रखने का पूरा विश्वास हो जाता है। वह इन सूचनाओं का केवल उपयोग केवल उसके ही उपचार हेतु करता है।

प्रक्रिया

सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य में संबंध का स्थान रू सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य द्वारा सेवार्थी समस्या का समाधान इस प्रकार किया जाता है, जिससे उस व्यक्ति की क्षमताओं का यथासंभव अधिकतम विकास होकर तथा आत्मनिर्भर बनकर सामाजिक समायोजन प्राप्त कर लेता है। साधारणतरू ब्ंम ूवतामत ब्सपमदज की समस्या से संबंधित तीन मुख्य कार्य करने होते हैं–

1. समस्या से संबंधित तथ्यों की खोज एवं उनका अध्ययन
2. समस्या का निदान
3. समस्या का उपचार

Case worker तादात्मीकरण, शिक्षण, निर्देशन, विश्वासीकरण, सामान्यीकरण तथा प्रविधि द्वारा सेवार्थी में अहं शक्ति को दृढ़ करके सेवार्थी को उपचार कार्य में लगाता है। कार्यकर्ता सामाजिक पर्यावरण में सुधार लाने का प्रयास भी करता है। जिससे सेवार्थी पर्यावरण की अनुकूलता प्राप्त करने में सफल हो सके। परन्तु उपचार कार्य की सफलता कार्यकर्ता तथा सेवार्थी के मध्य संबंध की गहनता पर निर्भर होती है।

कार्यकर्ता– सेवार्थी संबंध का प्रभाव

1. भावनाओं का परिवर्तन
2. प्रत्यक्षीकरण में परिवर्तन
3. व्याख्या में परिवर्तन
4. निर्णय प्रक्रिया में परिवर्तन
5. संप्रेरणा में परिवर्तन
6. चेतनता में परिवर्तन
7. व्यवहार में परिवर्तन

इकाई – तृतीय

3.1 सामाजिक वैयक्तिक सेवाकर्य अभ्यास में मनोसामाजिकउपागम

3.2 साक्षात्कार एवं साक्षात्कार लेने की प्रक्रिया

3.3 सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य में अभिलेखन

3.4 सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का समाज कार्य की अन्य विधियों से सम्बन्ध

3.5 विकासशील देशों में सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य अभ्यास, भारत में सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य के क्षेत्र एवं सीमाएं।

मनोसामाजिक उपागम

प्रस्तावना

सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य में ज्ञान की वृद्धि के साथ–साथ इसके सिद्धान्तों एवं प्रयत्नों में भी परिवर्तन होता रहा है। सन् 1937 ई. में गार्डन हेमिल्टन ने पहला लेख "बेसिक कानसेप्ट्स इन सोसल केस वर्क'' लिखा। यही प्रत्यय आगे चलकर निदानात्मक सम्प्रदाय के नाम से जाना जाने लगा। उनके मनोसामाजिक सिद्धान्त की प्रमुख विशेषता है "विचार व्यवस्था का खुलापन''। इसमें नये ज्ञान, नवीन आंकड़ों तथा नये अनुभवों के द्वारा परिवर्तन आता रहता है।

सन् 1941 ई. में हेमिल्टन का दूसरा लेख ''दि अण्डरलाइंग फिलासफी आफ केस वर्क'' प्रकाशित हुआ जिसमें उन्होंने निदानात्मक तथा कार्यात्मक सम्प्रदायों में अन्तर स्पष्ट किया द्य उन्होंने अपने लेखों में मनोसामाजिक सिद्धान्त का उल्लेख किया है। आज यही सिद्धान्त व्यवस्था सिद्धान्त एप्रोच बन गया है। इस सिद्धान्त में निदान तथा उपचार का कार्य व्यक्ति की सम्पूर्ण स्थिति का अवलोकन निरीक्षण एवं परीक्षण के बाद किया जाता है। उसकी सम्पूर्ण स्थितियों का अवलोकन किया जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार जिस व्यक्ति की सहायता करनी है उपचार करना है, उसकी बाह्य पर्यावरण के प्रति अन्तः क्रियाओं को समझना आवश्यक होगा। इसके साथ ही साथ बाह्य पर्यावरण के विषय में भी जिससे व्यक्ति सम्बन्धित है, ज्ञान प्राप्त करना होगा। यह उसका परिवार सम्पूर्ण हो सकता है परिवार का कोई व्यक्ति विशेष हो सकता है। सामाजिक समूह, शिक्षा संस्था, कार्यस्थल या अन्य कोई सामाजिक व्यवस्था का अंग हो सकता है। परिवार व्यवस्था को सेवार्थी के रूप में देखा जाने लगा है। व्यक्ति के किसी एक व्यवस्था में परिवर्तन का प्रभाव अन्य व्यवस्थाओं में भी पड़ता है। व्यक्ति का जैविकी दृष्टिकोण व्यवस्था का निर्माण करता है। मनोसामाजिक सिद्धान्त का निरूपण फ्रायड के व्यक्तित्व व्यवस्था में किया गया है।

मनोसामाजिक सिद्धान्त की दूसरी विशेषता उपचार सम्बन्धी हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार सेवार्थी की आवश्यकताओं के अनुरूप ही चिकित्सा प्रक्रिया होनी चाहिए तथा आवश्यकताओं में परिवर्तन या अन्तर होने पर चिकित्सा प्रक्रिया में भी अन्तर होना चाहिये। कार्यकर्ता को सर्वप्रथम सेवार्थी की आवश्यकताओं का पता लगाना चाहिये। तदुपरान्त

वैयक्तिक रूप से सेवार्थी की आवश्यकताओं के अनुरूप पत्युत्तर करना चाहिए। ष्आवश्यकताष् का तात्पर्य उस आवश्यक इच्छा से है जिससे सेवार्थी अपने सामाजिक पर्यावरण के अंगों से समायोजित होना चाहता है। यह अंग परिवार, पड़ोस यह अन्य संस्था भी हो सकती है। जिनके द्वारा वह अपना सुखमय जीवन व्यतीत करता है। जब वह इन समूहों व संस्थाओं से समायोजन करने में असमय होता है तो उसकी आवश्यकता में परिलक्षित होती है और उसकी अन्तः क्रिया में असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है। असुविधा कठिनाई या परेशानी का कारण या तो व्यक्ति की वैयक्तिक कार्यक्षमता की अनुपयुक्त या हानिकारक सामाजिक स्थितियों से या दोनों से होती है। उन कारकों काविश्लेषण सेवार्थी की सहायता के लिए आवश्यक होता है। जिस प्रक्रिया के द्वारा यह कार्य संभव होता है उसे निदान प्रक्रिया कहते हैं।

मनोसामाजिक उपागम के मूल्य

इस उपगम के निम्नलिखित महत्वपूर्ण मूल्य हैं–

(1) कार्यकर्ता सेवार्थी की सहायता उसके हित तथा कल्याण के लिए करता है। उसको महत्व देता है तथा उसकी भावनाओं का आदर करता है।

(2) सम्बन्ध अदर सेन्टर्ड होता है। सेवार्थी की आवश्यकतायें महत्वपूर्ण होती है।

(3) कार्यकर्ता जहां तक संभव होता है विषयात्मक रूप से सेवार्थी की समस्या का मूल्यांकन करता है। व्यक्तिगत भावनाओं को इससे दूर रखता है।

(4) सेवार्थी को अपना स्वयं निर्णय लेने का अधिकार होता है तथा उसमें आत्म निर्देशन शक्ति को विकसित करने का प्रयास किया जाता है।

(5) कार्यकर्ता अपने सेवार्थी तथा अन्य की आत्मनिर्भरता को स्वीकार करता है और विश्वास करता है कि कभी–कभी आत्म निर्देशन की सीमा को कम करना आवश्यक होता है, जिससे दूसरों को तथा सेवार्थी को हानि न हो सके।

उपागम का विकास

मनोसामाजिक उपागम का विकास रिचमण्ड मेरी के कार्यो से हुआ। उन्होंने अहं मनोविज्ञान तथा सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किया । धीरे–धीरे इस उपागम में सामाजिक, आर्थिक घटनाओं का प्रभाव पड़ा, जिसमें परिवर्तन आया। सन् 1926 के लगभग फ्रायड का मनोविश्लेषण का सिद्धान्त इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण समझा जाने लगा। इसके अतिरिक्त मेरियो केन वर्थी न्यूयार्क स्कूल आफ सोसल वर्क, वेटसे लिब्बे फेमिली सोसायटी आफ फिलाडेल्फिया, गार्डन हैमिल्टन, बेरथा रिनोल्ड, चारलेट टावले, क्लोरेन्स डे फर्न लोरी आदि के कार्यों ने मनोसामाजिक उपागम के विकास में सहयोग दिया।

व्यवहारिक विज्ञान आधार

मनोसामाजिक उपागम में अनेक स्रोतों से तत्व लिये गये हैं। व्यवहारिक उपयोग के योगदान का इसमें विशेष महत्व रहा है जो लोग इस क्षेत्र में काम करते हैं, उन्हें इसमें

विशेष भूमिका निमानी पड़ती है। वैयक्तिक कार्यकर्ताओं के व्यक्तिगत अनुभव एवं प्रयास के परिणामस्वरूप इस सिद्धान्त का प्रतिपादन हुआ। मनोविश्लेषण सिद्धान्त का प्रभाव इस उपागम पर विशेष पड़ा। सिगमण्ड फ्रायड एब्राहम, अन्ना फ्रायड, एलेक्जेण्डर, फ्रेन्य, कार्डिनर, इरिकसोन, हार्टमैन आदि के मनोविश्लेषण सम्बन्धी कार्यों ने इस उपागम के विकास में सहयोग दिया। मनोवैज्ञानिकों में पाइगेट का नाम प्रमुख है। डोलर्ड, आलपोर्ट, मरे आदि विचारकों को भी सम्मिलित किया गया। गैस्टाल्ट मनोविज्ञान के विचारों को इसमें महत्व दिया गया। सामाजिक विज्ञानों का भी इस उपागम पर विशेष प्रभाव पड़ा। परिवार के महत्व का ज्ञान, बालक के पालन–पोषण पर सामाजिक कारकों का प्रभाव, वैवाहिक तथा लैंगिक व्यवहार सम्बन्धी सामाजिक विचारों ने सहायता की। सांस्कृतिक मानव विज्ञान का उपयोग व्यक्तित्व को समझने में किया गया। इस शास्त्र ने व्यक्तित्व तथा संस्कृति में सम्बन्ध सांवेगिक व्यवहारिक तथा सांस्कृतिक कारकों में सम्बन्ध बालक के पालन–पोषण पर विभिन्न तरीकों का प्रभाव आदि कारकों को स्पष्ट किया। भूमिका व्यवहार के ज्ञान को भी सम्मिलित किया गया।

प्रारम्भिक स्तर

उपचार की प्रारम्भिक अवस्था उपचार अवधि पर निर्भर होती है। एक साक्षात्कार भी प्रारम्भिक अवस्था में हो सकता है तथा 4–5 भी साक्षात्कार इसमें सम्मिलित किये जा सकते हैं।

प्रारम्भिक स्तर पर वैयक्तिक कार्यकर्ता का प्रमुख कार्य

1. सेवार्थी संस्था में क्यों आया है?

2. सेवार्थी से सम्बन्ध स्थापन जिससे वह कार्यकर्ता की सहायता का उपयोग कर सके।

3. सेवार्थी को उपचार कार्य में लगाना।

4. उपचार प्रारम्भ करना।

5. मनोसामाजिक निदान एवं उपचार के लिए आवश्यक सूचना एकत्र करना।

1. सम्पर्क के कारण का ज्ञान

कार्यकर्ता सर्वप्रथम यह जानने का प्रयास करता है कि सेवार्थी संस्था में क्यों आया है। यदि उसे किसी प्रकार की त्रुटि होती है या संस्था को समझ नहीं पाता है तो कार्यकर्ता दूसरी संस्था को सन्दर्भित कर देता है। सेवार्थी की समस्या का सम्बन्ध कार्यकर्ता की संस्था या कार्यकर्ता से है या नहीं जानता है उसके पश्चात वह सेवार्थी को संस्था के विषय में ज्ञान प्रदान करता है।

कभी–कभी सेवार्थी को वैयक्तिक सेवा कार्य की आवश्यकता होती है, परन्तु अनुभव नहीं करता है, कार्यकर्ता सेवार्थी को समझाता है तथा निश्चित करता है कि उसे कम तक संस्था से सम्पर्क बनाये रखना आवश्यक है। यह समय संस्था के कार्यों तथा समस्या की प्रकृति पर निर्भर होता है।

सम्बन्ध स्थापन

सम्बन्ध स्थापित होने पर ही सेवार्थी कार्यकर्ता की सहायता प्राप्त करता है। दो कारक इस दिशा में महत्वपूर्ण है– (1) कार्यकर्ता की क्षमता में सेवार्थी का विश्वास (2) कार्यकर्ता की नियति में विश्वास । सेवार्थी का विश्वास इस तथ्य पर निर्भर करता है कि वह सेवार्थी का कितना हित चाहता है, निष्पक्ष रहता है, स्वीकृति प्रदान करता है तथा सहयोग प्रदान करने की आकांक्षा रखता है। कार्यकर्ता की बातें भावनाओं की अभिव्यक्ति, वाणी शरीर का पोज, मौखिक वार्तालाप आदि से सेवार्थी कार्यकर्ता की शक्ति का विश्लेषण करता है तथा विश्वास उत्पन्नकरता है। कार्यकर्ता की दक्षता ष्संचारष् उपयोग पर निर्भर होती है। वह किस प्रकार सेवार्थी की आवश्यकताओं एवं भावनाओं को समझता है तथा सेवार्थी को अपनी भावनाओं को समझने के लिए अवसर देता है तथा किस प्रकार उपचार कार्य प्रारम्भ करता है, दक्षता प्रदर्शित करते हैं।

सेवार्थी को उपचार कार्य में लगाना

सेवार्थी को उपचार कार्य में लगाना एक साधारण तथा जटिल दोनों प्रकार का कार्य हो सकता है। इसके सदैव दो पक्ष है रू सम्प्रेरणा तथा अवरोध दोनों एक ही समय में प्रभावकारी हो सकते हैं। सेवार्थी कितना परिवर्तन चाहता है तथा कितना सहयोग देने को इच्छुक है, महत्वपूर्ण होता है। यह भावना इस बात पर निर्भर करती है कि वह कितनी तकलीफ में है तथा अनुकूल परिवर्तन में कितना विश्वास है। यदि अधिक परेशानी होगी तो उसको बहुत कम परिवर्तन की आशा रहेगी। जिसके परिणामस्वरूप उसका सम्प्रेरक कमजोर होगा।

कम तकलीफ परिवर्तन की इच्छा नहीं उत्पन्न करेगी। कार्यकर्ता का प्रारम्भिक स्तर पर प्रमुख कार्य सेवार्थी को तकलीफ की अनुभूति करना है तथा परिवर्तन करने की इच्छा जाग्रत करना है। यदि सेवार्थी बहुत चिंतित है अथवा हतोत्साहित है तो कार्यकर्ता प्रारम्भिक स्तर में ही उसकी चिंता को कम कर सकता है। इसके अतिरिक्त आशा करता है कि उसकी परिस्थिति में सुधार संभव है तो सेवार्थी को अवश्य ज्ञात होना चाहिए। सेवार्थी की संस्था या कार्यकर्ता से आशा इस बात पर निर्भर करती है कि उसको कितना कार्यकर्ता की सेवाओं एवं संस्था की सुविधाओं का ज्ञान है। यदि सेवार्थी के ज्ञान में कमी है तो उसे अवश्य पूरा होना चाहिये।

सम्प्रेरणा का दूसरा पहलू अवरोध है। एक व्यक्ति जिसका सम्प्रेरक निम्न स्तर का होता है वह अवश्य ही सहायता लेना पसन्द नहीं करता है। अवरोध चिन्ता के स्तर पर निर्भर करता है । चिकित्सा का वह पक्ष जो सेवार्थी में आन्तरिक परिवर्तन से सम्बन्धित होता है अधिक प्रभावित होता है। अतः कार्यकर्ता को इसका ज्ञान अवश्य रखना चाहिए।

अवरोधक का दूसरा प्रभावक समस्या की प्रकृति होती है, जो समस्या अपराध भावना, लज्जा, जनचर्चा उत्पन्न करती है तथा साथ ही साथ सामाजिक अस्वीकृति का भय रहता है अवरोध उच्च कोटि का होता है। सेवार्थी का अस्तित्व भी अवरोध के स्तर को प्रभावित करता है। यदि उसका आत्म कमजोर है, तो चिन्ता अधिक होगी परिणाम स्वरूप अवरोध उच्च होगा।

प्रारम्भिक स्तर पर उपचार

उपचार कार्य साक्षात्कार के प्रथम दिन से भी प्रारम्भ हो जाता है परन्तु उस उपचार की कोई अवधि निर्धारित नहीं होती है। कार्यकर्ता सेवार्थी की चिन्ता कम करने का प्रयास करता है। वह यह भी स्पष्ट कर देना चाहता है कि भावनाओं के स्पष्टीकरण का अवसर देकर उपचार के मूल्य को बढ़ा देता है। सेवार्थी को समस्या की वास्तविकता से अवगत कराया जाता है जिससे वह वैयक्तिक कार्य में योगदान करता है।

(1) मनोसामाजिक अध्ययन

प्रारम्भिक स्तर पर कार्यकर्ता सेवार्थी की आवश्यकताओं को जानने का प्रयास करता है। वह भी जानता है कि सेवार्थी को किस प्रकार की सहायता की आवश्यकता है, वह समस्या को किस दृष्टिकोण से देखता है, क्या सोचता है क्या किया जा सकता है। उसने स्वयं समस्या समाधान के प्रयत्न किये हैं तथा किन कारकों को अपनी समस्या का उत्तरदायी मानता है। कार्यकर्ता निरन्तर यह जानने का प्रयास करता है कि सेवार्थी की वास्तविक समस्या क्या है, वास्तविक समस्या स्रोत क्या किस प्रकार सेवार्थी की समस्या में सुधार लाया जा सकता है तथा कार्यकर्ता वैयक्तिक सेवा कार्य की सहायता किस प्रकार प्राप्त कर रहा है। इन प्रश्नों के उत्तरों के लिए सूचना ही महत्वपूर्ण करती । वैसे तो सेवार्थी स्वयं इन सूचनाओं को देता है, परन्तु कार्यकर्ता का उत्तर दायित्व है कि वह साक्षात्कार को इस प्रकार चलाये कि जिससे स्वतः ये सेचनायें एकत्र होती जायें। कार्यकर्ता का प्रमुख ध्यान व्यक्ति अन्तःक्रिया परिस्थिति तीनों पर होना चाहिए । अर्थात व्यवस्था पर विशेष बल देना होता है। समस्या किस प्रकार सेवार्थी प्रस्तुत करता है, इस बात पर निर्भर करता है कि व्यवस्था के किस अंग पर विशेष ध्यान दिया जाये पारिवारिक व्यवस्था या उसके किसी भाग, परिवार विद्यालय व्यवस्था, व्यक्ति, रोजगार व्यवस्था परिवार व्यक्ति स्वास्थ्य व्यवस्था परन्तु किसी भी दशा में ज्ञान का प्रारम्भ सेवार्थी के समस्या दृष्टिकोण से प्रारम्भ होता है। उसके पश्चात सेवार्थी के व्यक्तित्व का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। उन व्यवस्थाओं के विषय में सूचना एकत्र की जाती है जो समस्या से सम्बन्धित होती है। इसके साथ ही साथ इन तीनों कारणों में अन्तःक्रिया प्रभावपूर्णता तथा परस्पर प्रभावकारिता का अध्ययन किया जाता है। यह प्रक्रिया निम्न बातों पर निर्भर होती है–

1. समस्या कीप्रकृति

2. संस्था या व्यक्ति की सेवायें

3. समस्या की जटिलता

4. सेवार्थी की सूचना देने की इच्छा

मनोसामाजिक उपागम में सेवार्थी का अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त किया जाता है। अतः निम्न प्रश्न सम्मुख आते हैं–

1. अतीत इतिहास का ज्ञान कहां तक आवश्यक है?

2. व्यक्तित्व के ज्ञान की गहराई क्या होगी?

3. सेवार्थी के जीवन पहलुओं का परीक्षण करेंगे जिनके विषय में वह सहायता नहीं चाहता

(2) सेवार्थी को स्वयं की परिस्थिति में मूल्यांकन

सेवार्थी की समस्या का निदान तीन प्रकार से करते हैं रू (1) गतिशील (2) कारणात्मक (3) वर्गात्मक।

गत्यात्मक निदान में कार्यकर्ता यह जानने का प्रयास करता है कि किस प्रकार सेवार्थी के व्यक्तित्व में विभिन्न कारक सम्पूर्ण कार्यात्मकता से अन्तक्रिया कर रहे है। रोवार्थी तथा अन्य लोगों के मध्य किस प्रकार की अन्तक्रिया है, किस प्रकार व्यवस्था के एक अंग में परिवर्तन दूसरी व्यवस्था को प्रभावित करता । परिवर्तन निदान एक महत्वपूर्ण कार्य है जिसको कार्यकर्ता पूरा करता है। कारणात्मक कारकों का पता वर्तमान तथा अतीत दोनों में देखा जाता है। सेवार्थी की कार्यात्मकता के विभिन्न पहलुओं को वर्गीकरण किया जाता है।

इन तीनों प्रकार के ज्ञान की प्राप्ति के लिए सेवार्थी परिस्थिति कान्फीगुरेशन का अध्ययन सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक सन्दर्भ में किया जाता है। सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में व्यक्ति तथा समूह व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। यह सिद्ध हो चुका है कि व्यक्ति का व्यवहार सामाजिक दशाओं से प्रभावित होता है, सांस्कृतिक कारक विशेषकर धार्मिक पृष्ठभूमि का अहं तथा पराहं के विकास पर पड़ता है। अतः इन कारकों का गहराई से अध्ययन किया जाता है।

निदान का वर्गीकरण आज विश्व का विषय बन गया है। मनोसामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य में निदान विस्तृत अर्थ में न लेकर अर्थ में लेते हैं। लक्षणों के आधार पर रोग का ज्ञान निदान कहलाता है। व्यक्तित्व तथा समस्या का अनेक प्रकार से वर्गीकरण किया जा सकता है। सामाजिक, आर्थिक, वर्ग, प्रजाति, धर्म आदि के आधार पर विभाजित कर सकते हैं। व्यवस्था के समी पहलुओं को सम्मिलित करते हैं।

उद्देश्य तथा उपचार नियोजन

उद्देश्य का निश्चय दो बातों पर होता है– (1) सेवार्थी क्या चाहता है, (2) कार्यकर्ता क्या तथा कितनी सहायता करना चाहता है। समय संस्था के कार्य, कार्यकर्ता की क्षमता आदि निश्चित करते हैं कि कार्यकर्ता क्या सहायता कर सकता है, सेवार्थी का उद्देश्य यदि ऐसा है जो प्राप्त नहीं किया जा सकता है, तो कार्यकर्ता कभी भी इस उद्देश्य की प्राप्ति में सहयोग नहीं करेगा। उपचार का कार्य भी उद्देश्य, समस्या तथा तरीकों पर निर्भर करता है और इसमें परिवर्तन होता रहता है क्योंकि वह प्रक्रिया है और प्रक्रिया स्थायी नहीं होती है। सेवार्थी तथा कार्यकर्ता के मध्य संचार प्रक्रिया अवश्य ही सुस्पष्ट हो तथा कार्यकर्ता की सदैव सेवार्थी की सदैव सेवाओं की क्रियाओं, प्रतिक्रियाओं तथा इच्छाओं के प्रति सजग रहना चाहिए।

चिकित्सा सिद्धान्त तथा ढंग

वैयक्तिक सेवा कार्य का मनोसामाजिक उपागम उपयोग करने का तात्पर्य सेवार्थी के कष्ट तथा दुःखों को दूर करना तथा व्यक्ति व्यवस्था की अकार्मत्कता में कमी लाना है। सकारात्मक रूप से इसको इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है कि वैयक्तिक कार्य द्वारा

सेवार्थी के अहं की अनुकूलन क्षमता में वृद्धि की जाती है तथा व्यक्ति परिस्थिति अन्तर्क्रिया में सुधार किया जाये।

मनोसामाजिक उपागम के विकास के समय से ही व्यक्ति तथा उसकी दशाओं के ज्ञान पर महत्व पर बल दिया गया। वैयक्तिक सेवा कार्य द्वारा इन कारकों में परिवर्तन तथा व्यक्तित्व में सुधार लाने का प्रयास किया गया। इसके साथ ही साथ यह माना गया कि व्यक्ति तथा परिस्थिति में अन्तःक्रिया होने के कारण पर्यावरण में परिवर्तन व्यक्ति की कार्यात्मकता को प्रभावित करती है। यथा व्यक्ति में परिवर्तन पर्यावरण सम्बन्धी कार्य स्थिति को प्रभावित करती है। यही व्यवस्था सिद्धान्त है।

जब व्यक्तित्व सम्बन्धी कोई कारक समस्या को उत्पन्न करने वाला होता है तो चिकित्सा का उद्देश्य उत्तम अन्तर्वैयक्तिक अनुकूलन प्राप्त करना होता है। दो बातों पर ध्यान दिया जाता है

(1) अन्तर्वैयक्तिक व्यवस्था

इसके अन्तर्गत माता–पिता, बालक, पति–पत्नी, परिवार आदि आते हैं।

(2) व्यक्तित्व व्यवस्था

वह व्यक्ति जो अन्तर्वैयक्तिक व्यवस्था का निर्माण करते हैं। दोषपूर्ण संचार पारिवारिक अकार्यात्मक या विघटन का मुख्य कारण होता है तथा संचार व्यवस्था में सुधार लाना उपचार का मुख्य उद्देश्य होता है। संचार में सुधार का कार्य प्रत्यक्षीकरण तथा प्रत्युत्तरों में सुधार लाना है, अर्थात सेवार्थी के व्यक्तित्व में परिवर्तन करना है। प्रत्यक्षीकरण अहं का कार्य है। प्रत्यक्षीकरण के ज्ञान तथा घटना विशेष का प्रभाव पड़ता है। प्रत्यक्षीकरण की व्याख्या व्यक्ति की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर निर्भर करती है। इस प्रकार सम्पूर्ण व्यवस्था का समस्या के निदान व उपचार में हाथ होता है।

सीमायें

(1) वैयक्तिक सेवा कार्य में जीवन के किसी विशिष्ट पहलू से सम्बन्ध होता है, जिसमें सेवार्थी की सहायता की जाती है।

(2)अचेतन अनुभवों को वर्तमान चेतन में लाने का प्रयास नहीं किया जाता है।

(3) प्रतिगमन हस्तान्तरण का उपयोग नहीं करते हैं।

(4) मद्यपि उपचार एवं निदान में अचेतन का अध्ययन आवश्यक है परन्तु अर्द्धचेतन पर विशेष महत्व दिया जाता है।

उपचार प्रक्रिया

वे कौन कौन से साधन है जिनके द्वारा वैयक्तिक सेवा कार्य के उद्देश्य की प्राप्ति होती है तथा किस प्रकार निदान कार्यकर्ता को साधन चुनने के लिए दिशा प्रदान करता है, यह जानना आवश्यक है। कार्यकर्ता दो प्रकार से सेवार्थी की उपचार प्रक्रिया में भाग लेता

है–प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष। जब वह सेवार्थी के पर्यावरण से सक्रिय सम्बन्ध स्थापित करता है तो विभिन्न भूमिकायें निमाता है–

(1) सूचना प्रदान कर्ता (Provider)

(2) स्थिति अवलोकनकर्ता (Locator)

(3) व्याख्याकर्ता (Interpretor)

(4) मध्यस्थ (Mediator)

(5) वकील (Advocate)

जब पर्यावरण में परिवर्तन के स्थान पर स्रोत में परिवर्तन की आवश्यकता होती है तो वह संशोधनकर्ता (Modfire) की भूमिका निभाता है। इस क्षेत्र के अन्तर्गत विद्यालय अथवा कार्यस्थल आते हैं। जहां कार्यकर्ता अपनी बातों के द्वारा मिथ्या विचारों एवं धारणाओं को दूर करता है। साथ ही साथ सेवार्थी के व्यवहार की व्याख्या परिस्थिति के सन्दर्भ में करके अधिकारियों के दृष्टिकोण में परिवर्तन लाता है। जब अनुकूल पृष्ठभूमि तैयार हो जाती है तो वह अपनी सलाह प्रस्तुत करता है।

पारिवारिक तथा अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धी समस्याओं में सहायता का रूप प्रत्यक्ष होता है। कार्यकर्ता परिवार के सभी सदस्यों को सम्मिलित करता है। परिवार चिकित्सा का उपागम का उपयोग होता है।

वैयक्तिक सेवा कार्य उपचार प्रक्रिया के विभिन्न रूप प्रस्तुत किये गये हैं। हैमिल्टन, विवरिंग तथा आस्टिन ने अपना–अपना मत प्रस्तुत किया। फेमिली एजेन्सी आफ अमेरिका ने संशोधन कर नया रूप दिया। यहां पर होलिस द्वारा प्रतिपादित उपचार प्रक्रिया का वर्णन किया जा रहा है।

निदान तथा उपचार

निदान तथा उपचार में घनिष्ठ सम्बन्ध है। वास्तविक निदान ही उपचार के लिए रास्ता निर्धारित करता है । वैयक्तिक सेवा कार्य उपचार में अनेकानेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अनेक सामाजिक समस्यायें एक दूसरे से प्रभावित होती है। एक व्यवस्था में परिवर्तन न केवल दूसरी व्यवस्था को प्रभावित करता है बल्कि उसे जटिलता प्रदान करने में सक्रिय भूमिका निभाता है। निदान में हम सभी कारकों पर ध्यान आकृष्ट करते हैं। व्यक्ति स्थिति में अन्तर्क्रिया तथा व्यक्तित्व व्यवस्था में अन्तर्क्रिया का अध्ययन किया जाता है।

जब निदान कार्य संभव हो जाता है तो उपचार का कार्य प्रारम्भ होता है। गत्यात्मक, कारणात्मक तथा क्लिनिकल निदान चिकित्सा के लिए पथ–प्रदर्शक का कार्य करता है। ये तीनों व्यवस्थायें कार्यकर्ता को बता देती है कि सेवार्थी में कितना परिवर्तन लाया जा सकता है।

सेवार्थी स्वयं कितनी सहायता करने में सक्षम होगा तथा कितनी सहायता करने में सक्षम होगा तथा कितनी सहायता कार्यकर्ता पहुंचा सकता है।

लक्ष्य समूह

मनोसामाजिक या निदानात्मक एक विस्तृत उपागम है जिसका उपयोग विभिन्न क्षेत्रों में किया जा सकता है। परन्तु परिवार, चिकित्सा तथा मनोविकार ये इसके मुख्य क्षेत्र हैं। इसका उपयोग क्लिनिकल तथा सामाजिक कठिनाइयों को दूर करने के लिये किया जाता है। पर्यावरणीय समस्यायें तथा अन्तर्वैयक्तिक समस्यायें इसकी सीमा के अन्तर्गत आती हैं।

साक्षात्कार

प्रत्येक व्यक्ति साक्षात्कार की प्रक्रिया में भाग लेता है, कभी उसका साक्षात्कार दूसरा व्यक्ति लेता है और कभी वह स्वयं साक्षात्कार दूसरों का लेता है। उदाहरण के लिए बच्चे के प्रवेश के लिए मां का साक्षात्कार प्रधानाचार्य द्वारा होता है और मां बच्चे का साक्षात्कार करती है। वहीं बालक आगे चलकर अनेक स्थानों पर साक्षात्कार के लिए बुलाया जाता है। कुछ व्यक्तियों का कार्य दिन प्रतिदिन साक्षात्कार करना तथा लेना है जैसे– वकील, डाक्टर, नर्स, संवाददाता, पुलिस, मंत्रीगण, सलाहकार, मैनेजर आदि। ये सभी व्यक्ति साक्षात्कार लेने की कला में बत्यन्त निपुण होते हैं, सामाजिक व्यक्ति के कार्यकर्ता भी अपना साक्षात्कार करता है। इस प्रकार सात्विक सेवा कार्यकर्ता के लिए साक्षात्कार एक कला तथा विज्ञान है जिसके सिद्धान्तों से अवगत होना तथा प्रविधियों का व्यवहारिक ज्ञान परमावश्यक है।

साक्षात्कार की परिभाषा

1. पी.वी. यंग के अनुसार – साक्षात्कार को एक ऐसी क्रमबद्ध रूप से माना जा सकता है जिसके द्वारा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के आन्तरिक जीवन में थोड़ा बहुत कल्पनात्मक रूप से प्रवेश करता है जो कि उसके लिए सामान्यतः तुलनात्मक रूप से अपरिचित है।

2. गुडे एण्ड हाट के अनुसार – साक्षात्कार मूलतः सामाजिक अर्न्तक्रिया की एक प्रक्रिया है।

3. पी. एम. पांमर के अनुसार – साक्षात्कार दो व्यक्तियों के बीच पाई जाने वाली एक विशेष सामाजिक परिस्थिति है जिसमें एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया के अन्तर्गत दोनों व्यक्ति परस्पर उत्तर प्रति उत्तर करते हैं। साक्षात्कारकर्ता को मानव की प्रकृति सम्बन्धी कुछ तथ्यों को जानना आवश्यक है –

मानव सम्प्रेरणाएं – प्रत्येक प्रकार का व्यवहार सम्प्रेरणायें हैं। समस्या ग्रस्त व्यक्ति का कारण भी व्यक्ति की चेतन अथवा अचेतन सम्प्रेरणाएं होती हैं यही कारण है कि कहीं–कहीं समस्या के कारणों को जानना अत्यन्त कठिन है। परन्तु यह जानना आवश्यक होता है कि उसका व्यवहार सम्प्रेरित हो तो समस्या का स्त्रोत उसके व्यक्तित्व के आन्तरिक भाग में छिपा रहता है जिसको न तो कार्यकर्ता और न ही सेवार्थी आसानी से समझ पाता है। व्यक्तित्व एकजटिल संरचना है जिसमें अनेक अर्न्तसंगठन होते हैं, उस संगठन के भीतर समस्या का कारण छिपा हुआ होता है समस्या अथवा असामान्य व्यवहार का कोई एक कारण न होकर कारणों का एक समूह होता है अतः किने एक कारक की खोज करना

असम्भव है। ऐसा करने में कार्यकर्ता न तो वास्तविकता से पा चित हो पायेगा और न ही उपयुक्त समाधान खोज पायेगा।

व्यक्तित्व सिद्धान्त में यह स्पष्ट कर दिया है कि व्यक्ति का व्यवहार अचेतन सम्प्रेरणाओं से अधिक नियंत्रित एवं निर्देशित होता है अतः कार्यकर्ता को अधिक साहित्यिक होना चाहिये।

Objective and Subjective Facts(वस्तुगत एवं विषयगत तथ्य)

प्रत्येक स्थिति के दो पक्ष होते है – वस्तुगत एवं विषयगत। एक व्यक्ति की नौकरी छूट जाती है। यह एक वस्तुगत तथ्य है इस घटना के प्रति उस व्यक्ति की भावनाएं विषयगत तथ्य है एक व्यक्ति छयरोग से पीड़ित है यह चिकित्सकीय तथ्य है, परन्तु प्रत्येक बीमार व्यक्ति अपने रोग से सम्बन्धित विचार एवं भावनाएं रखता है, यह विषयगत तथ्य है।

वस्तुगत तथा विषयगत तथ्य जान लेना के पश्चात भी कार्यकर्ता को मनोवृत्ति सम्बन्धी कोई समर्थ देने में सजग रहना चाहिए उदाहरण के लिए किसी सांवेगिक रूप से अस्त व्यस्त व्यक्ति या कहा जाये कि आप शान्त होकर बात कहे। इसका परिणाम होगा कि वह वास्तविक तथ्यों को छिपा जायेगा तथा वास्तविक कठिनाई का रूप प्रकट नहीं हो पायेगा।

Conflicting pulls(विरोधात्मक शक्ति) – व्यक्ति का जन्म से ही एक के बाद विकल्प ढूंढ़ने पढ़ते हैं। कुछ विकल्प सापेक्षतः आसान होते हैं। जिस विचार को हम मन से निकालना चाहते हैं उस पर चेतन अनेक प्रकार से तर्क ६ वितर्क करता है और यदि वह विचार आचेतन में चला भी जाता है तो अचेतन में रहकर अनेक प्रकार से बदला लेने का प्रयत्न करता है। जब केवल एक ही इच्छा या रास्ता होता है और उसको हम अस्वीकार कर देते हैं तो हम यह कह कर कि हम ऐसा नहीं चाहते हैं, वास्तविकता से छिपा नहीं सकते हैं हम इसको चाहते हैं कि यह तथ्य वास्तविकता यह है कि यह इच्छा जिस रूप में है उस रूप में नहीं चाहते हैं।

महिलायें पुरूषों के समान ही समानता चाहती हैं। वे उसी व्यवसाय में कार्य करना चाहती है तथा समान वेतन चाहती हैं। परन्तु साथ ही साथ यह भी चाहती है कि कठिन कार्य करना न पड़े व समी पुरूष उसका पूर्ववत सम्मान करें। साक्षात्कार में उमयामुखी की स्थिति प्रायः प्रकट होती है सेवार्थी यद्यपि सहायता चाहता है लेकिन सहायता के लिए स्पष्ट रूप से कहना भी नहीं चाहता है वह सलाह के लिए तो कहता है परन्तु उसका उपयोग बहुत कम करता है योजनाएं बनाने में सहयोग एवं स्वीकृति प्रदान करता है, परन्तु उन योजनाओं का कार्यन्वित नहीं करता है। यह मौखिक रूप से कोई बात कहता है परन्तु व्यवहार से उसका विपरीत स्पष्ट होता है।

कार्यकर्ता सेवार्थी सम्बन्ध

वैयक्ति सेवा कार्य का आधार या पृष्ठ भूमि साक्षात्कार निपुणताएं तथा कार्यकर्ता सेवार्थी संबंध का रचनात्मक उपयोग एवं मानव व्यवहार की गतिशीलता के कार्यात्मक ज्ञान पर निर्भर है सहायता का आधार कार्यकर्ता सेवार्थी सम्बन्ध है। इस प्रक्रिया में ऐसा कोई स्तर

नहीं होता है, जहां पर सम्बन्ध का महत्व न हो। परन्तु साक्षात्कार की स्थिति में यह अत्यन्त ही महत्वपूर्णहोता है। सेवार्थी की आन्तरिक भावनाएं कठिनाइयां तथा नैतिक इतिहास का इतिहास का जितना ही अधिक ज्ञान कार्यकर्ता को होता है उतना ही अधिक उपचार कार्य में सफलता प्राप्त करता है इस ज्ञान की प्राति करने के लिए घनिष्ठ सम्बन्ध की आवश्यकता है। जितना ही सेवार्थी के निकट होता है। उतना ही सेवार्थी का आन्तरिक एवं बाह्य चित्रण करने में सफल होता है।

घनिष्ठ सम्बन्ध के आधार

व्यक्तिक कार्यकर्ता वही सफल माना जाता है जो सेवार्थी से संचार प्रक्रिया करने की प्रविधि से अवगत होता है इस संदर्भ में के. के. हसन के तीन प्रकार के संचार स्तरों का वर्णन जो उन्होंने चिकित्सक तथा रोगी के सम्बन्ध में किया है उचित प्रतीत होते हैं।

(1) सांवेगिक स्तर में संचार – चिकित्सा की सेवार्थी के प्रति सहिष्णुता तथा लगाव प्रक्षेपित करते हुए उसकी शिकायतों को ध्यान पूर्वक सुननी चाहिए, जब सेवार्थी यह अनुभव कर विश्वास उत्पन्न कर लेता है कि चिकित्सक उसमें रूचि ले रहा है तो व्यक्तिगत से व्यक्तिगत तथ्य स्पष्ट करने में हिचाकिचाहट महसूस नहीं करता है सम्बन्ध घनिष्ठ तभी बनते हैं जब सेवार्थी अपनी पूरी बात स्पष्ट कर लेता है तथा चिकित्सक की सहानुभूत प्राप्त होती है, यही कारण है कि गांवों में लोक अवधि का आज भी बहुत अधिक महत्व है क्योंकि वहीं पर रोगी अपनी पूर्ण स्वतंत्रता का अनुभव करता है।

(2) सांस्कृतिक स्तर पर संचार – चिकित्सक को सेवार्थी की संस्कृति का ज्ञान होना आवश्यक होता है क्योंकि सांस्कृतिक कारक समस्या को जटिल बनाने में काफी हद तक भूमिका अदा करते हैं इसके अतिरिक्त यदि चिकित्सक सेवार्थी की सांस्कृतिक अनुकूलता के अनुसार व्यवहार करता है तो सेवार्थी अपना पूरा प्रयत्न सम्बन्ध घनिष्ठ से घनिष्ठ होने में सहयोग देता है।

(3) बौद्धिक स्तर पर संचार –कार्यकर्ता को उसी बौद्धिक स्तर से बातचीत प्रारम्भ करनी चाहिए जिस बौद्धिक स्तर का सेवार्थी हो क्योंकि यदि सेवार्थी की कार्यकर्ता को बात या सुझाव समझ में नहीं आयेगा तो वह कभी कभी हार्दिक सहयोग प्रदान नहीं करेगा जिससे कार्सकर्ता सम्बन्ध के उद्देश्य को प्राप्त नहीं कर सकेगा।

साक्षात्कारकर्ता का दृष्टिकोण

साक्षात्कार की प्रक्रिया में साक्षात्कार कर्ता का दृष्टिकोण का विशेष महत्व होता है। वे समी स्थितियां जो सम्बन्धी के जिस महत्वपूर्ण होती है, कार्यकर्ता के लिए भी आवश्यक होती है। उसका व्यक्तित्व, दृष्टिकोण चेतन अचेतन सम्प्रेरणाएं उभयामुखी की स्थिति पूर्वाग्रह, वस्तुगत तथा विषयगत कारक सभी महत्वपूर्ण होते हैं, अतः कार्यकर्ता को अपनी भावनाओं से पूर्ण रूप से अवगत होना चाहिए। यहां पर प्रमुख दो भावनाओं का उल्लेख किया जा रहाहै।

(1) पूर्वाग्रह –पूर्वाग्रह का आशय किसी व्यक्ति के बारे में किसी खोज एवं परीक्षा से बुरी धारना बना लेते हैं उसी के अनुरूप आचरण करते हैं। पूर्वाग्रह के लिए मुख्य रूप से दो कारक उत्तरदायी है–(अ) सामाजिक कारक, (ब) मनोवैज्ञानिक कारक।

(2) स्वीकृति – जब व्यक्ति संस्था में सेवार्थी के रूप में आता है तो समस्या से जनित कठिनाई से परेशान रहता है और साथ ही साथ इस बात से भी परेशान रहता है कि वह सेवार्थी है जिसे दूसरे व्यक्ति की आवश्यकता है। अतः व्यक्तित्व कार्यकर्ता का यह नैतिक उत्तर दायित्व होता है वह सेवार्थी को आदर पूर्वक स्वीकार कर भावनाओं की कद्र करे और उसे हीनता का बोध न होने दे।

साक्षात्कार का उद्देश्य

व्यक्तिक सेवा कार्य साक्षात्कार का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति की सहायता करना है जिससे वह अपनी समस्या का समाधान करने में सक्षम हो सके वह मूलरूप से उद्देश्य मूलक होता है।

(1) अज्ञात तथ्यों के बारे में सूचना – सामाजिक व्यक्तिक कार्यकर्ता के लिए साक्षात्कार का उद्देश्य दूसरे व्यक्तियों के जीवन के सम्बन्धी तथ्यों को प्राप्त करना है, अतः व्यक्तिक कार्यकर्ता का प्रथम प्रयास सेवार्थी से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करना होता है, जिससे वह सेवार्थी की आन्तरिक भावनाओं से अवगत हो सके। आन्तरिक भावनाएं, विश्वास, धारणाएं एवं इच्छाएं ऐसी प्रतीक है जिनको जान लेने पर ही सेवार्थी की समस्या को जाना जा सकता है, अतः साक्षात्कार का उद्देश्य सेवार्थी की इन्हीं विशेषताओं से अवगत होना है।

(2) समस्या के स्वरूप का निरूपण – सेवार्थी की सहायता के लिए आवश्यक है कि कार्यकर्ता सूचना एकत्र करने के साथ–साथ समस्या के स्वरूप का चित्रण भी अपने पहल में कर ले जिससे उपचारात्मक प्रयत्न सम्भव हो सके।

(3) गुणात्मक तथ्यों को प्राप्त करना – सामाजिक तथ्य मूल रूप से गुणात्मक होते हैं जो विचार भावना विश्वास आदि के रूप में मनुष्य के अर्न्तजगत में बने रहते हैं इन तथ्यों को केवल साक्षात्कार के माध्यम से जाना जा सकता है।

(4) अतिरिक्त सूचनाओं के एकत्र करना – सेवार्थी की समस्त पर उसके पर्यावरण का प्रभाव होता है, या समस्या का सम्बन्ध ही पर्यावरण से होता है, अतएव साक्षात्कार के अन्य व्यक्तियों से सूचनाएं प्राप्त की जाती है तथा समस्या के सम्बन्धित तथ्यों की खोज की जाती है।

साक्षात्कार कैसे करे

साक्षात्कार करने का गुण यद्यपि व्यवहारिक अनुभव पर आधारित है, परन्तु कुछ विशेषगुण साक्षात्कार की अधिक लाभ रूपी तथा उपयोगी बनाते हैं। इन विशेषताओं तथा प्रविधियों को जानना अत्यन्त आवश्यक होता है–

1. पूर्व नियोजित होना चाहिए

2. वार्तालाप केवल उसी दिशा में जिससे आवश्यक सूचनाएं प्राप्त हो सके।

3. प्रश्नों का प्रारम्भ सरल शब्दों में होना चाहिए।

4. साक्षात्कार के लिए उपयुक्त अवसर होना चाहिए।

5. स्थान का चुनाव भी ऐसा हो जहां सेवार्थी पूरी सुविधा अनुभव कर सके।

6. वार्तालाप का एक क्रम होना चाहिए।

7. भावनात्मक स्थलों में सावधानी बरतनी चाहिए।

8. कार्यकर्ता को इतना भावुक नहीं होना चाहिए कि वह सेवार्थी की भावनाओं के साथ ही वह जाय।

9. मानसिक आघात वाले प्रश्नों से बचना चाहिए।

10. सेवार्थी की रूचि एवं भावनाओं को ध्यान रखना चाहिए।

1. अवलोकन

विज्ञान का प्रारम्भ अवलोकन से होता है और इसकी पुष्टि के लिए अवलोकन के ही लौटना पड़ता है अवलोकन का महत्व प्रत्येक प्रकार साक्षात्कारों में होता है परन्तु व्यक्ति सेवन कार्य में विशेष ही महत्व होता है सेवार्थी क्या कह रहा है उसका अवलोकन करना ही प्रमुख कार्य है। वह क्या नहीं कर रहा है, इसका भी अवलोकन आवश्यक है, सेवार्थी का शारीरिक तनाव, उग्रवादिता, महत्ता क्षीर्णता, नैराग्य लोकन इन्द्रिय ज्ञान पर आधारित है।

2. सुनना

अच्छा साक्षात्कारकर्ता वही होता है जो सेवार्थी की सावधानी पूर्वक तथा धैर्य के साथ सुनता है। बातचीत में बार–बार व्यवधान उत्पन्न करने पर सेवार्थी शंका करने लगता है और पूछने पर या बीच में बात करने पर वह समझता है कि कार्यकर्ता रूचि नहीं ले रहा है, अतः निम्न सावधानी बरतनी चाहिए–

1. सेवार्थी की बात को पूरे ध्यान से सुने।

2. आवश्यक स्थानों पर कुछ कहे।

3. सेवार्थी को एक ही दिशा में बातचीत करने का अवसर दें।

4. जब सेवार्थी अपनी बात कहने में किसी प्रकार की असमर्थता प्रकट करे तो उसको दूरकरें।

5. सेवार्थी को अपनी भावनाओं के सफल होने का अवसर दें।

3. सेवार्थी को वर्तमान स्थिति से ही साक्षात्कार प्रारम्भ होता है

साक्षात्कार मेंप्रथम कार्य उन स्थितियों तथा साधनों की उपलब्धि करता है जिससे सेवार्थी आदर का अनुभव कर सके तथा स्वतंत्र रूप से भावनाओं को स्पष्टीकरण कर सके। यह उस समय तक सम्भव नहीं हो सकता है जब तक साक्षात्कार करने वाला भी स्वयं ऐसा न अनुभव करे ऐसी स्थिति में उत्पन्न करने के लिए कार्यकर्ता को निम्न कार्य करने चाहिए–

1. सेवार्थी को अधिक इंतजार न करना पड़े।

2. सेवार्थी के आने पर उसकी रूचि के अनुसार ही वार्तालाप प्रारम्भ करें।

3. उसके आने के कारण को तुरन्त पूछा जाय।

4. जो वह कह रहा है उसको धैर्य पूर्वक सुने।

5. उसकी भाषा व शब्दों का निरादर न करें।

6. प्रश्न को सरल करें।

7. सेवार्थी ही जहां तक हो सके समस्या समाधान के लिए सुझाव रखे।

प्रश्न कैसे हों

ऐसे प्रश्न हों जिससे आवश्यक सूचना प्राप्त हो सके तथा सेवार्थी अपनी समस्या का पूर्ण नियंत्रण कर सके। प्रश्नों की निम्न विशेषताएं होनी चाहिये–

1. स्पष्टताहोनी चाहिए

2. प्रश्न कम से कम तथा आवश्यक हो

3. समाधान की ओर प्रत्यक्ष संकेत न करें।

4. व्यक्तिक भावनाओं पर आघात करने वाले प्रश्नों से बचे

5. प्रश्नों को क्रम बद्ध होना चाहिये।

6. पारस्परिक पुष्टि करने वाले प्रश्न हों।

5. व्यक्तिगत प्रश्नों का उत्तर

सेवार्थी कभी कभी कार्यकर्ता से व्यक्तिगत प्रश्न पूछता है, जैसे– आपकी आयु क्या है, कहां रहते हैं कितने बच्चे हैं आदि। इन प्रश्नों का उत्तर कार्यकर्ता को अवश्य देना चाहिये। क्योंकि इन्हीं प्रश्नों के आधार पर ही घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो सकता है।

6. नेतृत्व एवं निर्देशन

कार्यकर्ता एक कुशल नेता होता है जो स्थिति पर सदैव नियंत्रण रखता है।

7. व्याख्या

कार्यकर्ता का प्रथम उद्देश्य सेवार्थी की समस्या से अधिक से अधिक अवगत होना है तदुपरान्त वह स्थितियोंव तथ्यों की व्याख्या करता है।

साक्षात्कार की महत्वपूर्ण बातें

1. विचारों में तारतम्यता

स्वतंत्र साहचर्य का प्रत्यय साक्षात्कार में महत्वपूर्ण होता है विचारों में तारतम्यता का होना आवश्यक समझा जाता है। साक्षात्कार को अपने साहचर्य का भी ज्ञान हो अन्यथा वे अचौतन रूप से सम्बद्ध प्रक्रिया को प्रभावित करेंगे।

2. वार्तालाप विषय में बदलाव

कभी–कभी यह जानना कठिन हो जाता है कि सेवार्थी क्यों विषय को बदल देता है इसका आभास उस समय होता है इसका आभास जब होता है कि पहले सेवार्थी क्या कह रहा था।

3. प्रारम्भिक तथा अन्तिम वाक्य

सेवार्थी द्वारा कहा पहला वाक्य अन्तिम वाक्य काफी महत्वपूर्ण होता है, इससे सेवार्थी की समस्या की गम्भीरता तथा मनोवृत्ति तथा सहायता प्राप्त करने की इच्छा का पता चलता है।

4. आवर्ती सन्दर्भ

सेवार्थी वार्तालाप के माध्यम से एक संदर्भ पर कई बार आता है। यह मुख्य समस्या होती है। उन्हीं विचारों को दोहराता है, साक्षात्कारकर्ता को इस बारे में बल लाने का प्रयास करना चाहिये।

5. विसंगति तथा अंतराल

प्रायः सेवार्थी की कहानी क्रमबद्ध नहीं होती है। यह स्वयं विरोध भाव प्रकट करता है वास्तविक अर्थ स्पष्ट नहीं होता है।

6. अप्रकट अर्थ

साक्षात्कार कर्ता के लिए आवश्यक है कि वह सेवार्थी द्वारा कहे गए शब्दों के अर्थ का पता लगाया वह क्या कह रहा है तथा उसका अर्थ क्या है।

अच्छे साक्षात्कार की आवश्यक दशाएं

1. भौतिक दशाए – 1. एकान्तता, 2. चिन्तामुक्त परिवार, 3 आराम देश स्थान, 4. भीड़भाड़ न होना, 5. कार्यकर्ता किसी कार्य में व्यस्त न हो, 6. वातावरण में बेचौनी तथा शोरगुल न हो, 7. सेवार्थी अनुभव कर सके कि संस्था सहायता करना चाहती है। 8. कम से कम साक्षात्कार के मध्य व्यवधान हो, 9. टेलीफोन कम से कम अंगेज करें, 10. सेवार्थी में अपनापन महसूस करे।

2. नाम पता दिनांक आयु व्यवसाय आदि का विवरण साक्षात्कार प्रारम्भ होने पर ही लिया जाना चाहिये।

3. महत्वपूर्ण तथ्यों को लिखना आवश्यक होता है।

4. विरोधाभाषा तथ्यों को लिख लेना चाहिये।

सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य में अभिलेखन

व्यवसाय के रूप में समाज कार्य न केवल एक परिवर्तनशील सामाजिक व्यवस्था में व्यक्तियों के समायोजन से संबंधित है, बल्कि इस सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन लाने में भी योगदान करता है। इन व्यक्तियों के आपसी सम्बन्ध कभी भी स्थिर नहीं रहते। समाजकार्य व्यक्ति एवं व्यक्ति, व्यक्ति एवं समूह, व्यक्ति एवं सामाजिक स्थिति और अर्न्तसामूहिक सम्बन्धों से सम्बन्धित है और यह सम्बन्धों के दायरे समय के अनुसार और एक संस्कृति एवं दूसरी संस्कृति के अनुसार बदलते रहते हैं।

व्यक्तिगत समाज कार्य कार्यकर्ता यह जानते हैं कि सामाजिक समायोजन एवं सामाजिक अनुकूलन जटिल प्रक्रियाएं होती हैं। व्यक्ति में अनुकूलन न होने का कारण व्यक्ति और उसके पर्यावरण में बाहरी संघर्ष हो सकता है। यह तो कुसमायोजन का प्राथमिक प्रकार है। इससे गंभीर समस्या तब होती है जब कुसमायोजन का कारण आन्तरिक एवं बाहरी दबाव होते हैं। सेवार्थी की अपनी स्थिति के विषय में मनोवृत्ति एवं उसकी संवेगात्मक अर्न्तमावित्ता को उसकी स्थिति के अंग के रूप में समझना पड़ता है। व्यक्तिगत समाज कार्य कार्यकर्ता को सेवार्थी की सामाजिक स्थिति के बाहरी कारकों, उसके व्यवहार, उसकी अपने प्रति और अपनी स्थिति के प्रति भावनाओं को समझना पड़ता है।

व्यक्तिगत समाज कार्य में अभिलेखन की सीमा का अनुमान उपरोक्त विवरण से लगाया जा सकता है। सेवार्थी और उसकी स्थिति से सम्बन्धित सभी यज्ञों का विश्लेषण एक अच्छी अभिलेखन प्रक्रिया से ही हो सकता है। अभ्यासकर्ता, चाहे वह किसी भी व्यवसाय का हो, अपनी कुशलताओं में सुधार करने और अपने व्यवसाय को और अधिक प्रभावी बनाने का प्रयास करता में है। इसलिए उसके व्यवसाय की विषय–वस्तु ऐसी होनी चाहिए जो सूचनार्थ उपलब्ध हो, जिससे नये कार्यकर्ताओं को सीखने में आसानी हो। अभ्यासकर्ता जब अपने कार्य की स्वयं समीक्षा करता है तभी उसमें सुधार भी होता है। इएलिए अभिलेख महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कार्यकर्ता की पहले ध्यानपूर्वक प्रेक्षण और उसका सही विवरण लिखना पड़ता है। तब इस लिखे गये तथ्यों का अर्थनिरूपण और विश्लेषण करके अपना मत लेख के रूप में व्यक्त करना पड़ता है। सेवार्थी की सुरक्षा के लिए यह अभिलेख जो महत्ता रखते हैं उसे सभी मानते हैं। सामाजिक संस्थाओं, जिनके माध्यम से यह सेवा दी जाती है, ये यह अभिलेख ही सेवार्थी के अध्ययन, निदान और सेवा का केन्द्र बनते हैं। भले ही कार्यकर्ता बदलते रहे।

इन अभिलेखों का रखा जाना मुख्य चार उद्देश्य पूरे करता है।

1. अभ्यास (Practice) –जिससे सेवार्थी को पर्याप्त सहायता दी जा सके।

2. प्रशासन (Administration) – जिससे सेवा दिए जाने वाले इस उत्तरदायित्व का मूल्यांकन एवं समीक्षा की जा सके।

3. शिक्षा (Education) – जिससे कुशलताओं में सुधार किया जाता है और इस ज्ञान कोसूचनार्थ दूसरों को दिया जाता है।

4. अनुसंधान (Research) – जिससे नये ज्ञान की खोज की जा सके और नियोजन औरसुधार में सहायता दी जा सके। परन्तु इन उद्देश्यों में से जो प्रमुख है वह है सेवार्थी की सेवा प्रदान करना अर्थात् अभ्यास।

अभिलेख व्यावसायिक प्रयोग के लिए लिखे जाते हैं और इसी कारण इनके लिखे जाने में विषय–वस्तु प्रथम महत्ता रखती है। अभिलेख का मुख्य उद्देश्य सेवार्थी की स्थिति को स्पष्ट बताना है। अभिलेख के लिखे जाने की विधि केस के अनुरूप होनी चाहिए। अभिलेख की विषय–वस्तु की माध्यम से ही कार्यकर्ता और उसके सहयोगी सेवार्थी में हो रहे विकास को ठीक से जान सकते हैं, उसके विषय में अपनी जानकारी बढ़ा सकते हैं और अपनी निपुणताओं में सुधार कर सकते हैं।

अभिलेख द्वारा कार्यकर्ता के सेवार्थी सम्बन्धी निष्कर्षों का पता चलता है, कार्यकर्ता कीसहायता भूमिका का ज्ञान होता है और उपचार में असफलताओं या सफलताओं का ज्ञान होता है। अभ्यास के लिए सावधानी से लिखे गये अभिलेख ही आवश्यक होते हैं। एक अच्छा नियम यह माना गया है कि उस किसी भी बात को दिमाग में रहने दिया जाये जो नोटबुक में लिखी जानी हो और इसी प्रकार उस किसी भी सूचना को नोटबुक में नहीं छोड़ा जाना चाहिए जो अभिलेख में आनी आवश्यक हो।

एक अच्छे अभिलेख में न केवल वस्तुनिष्ठ तथ्य, घटनायें और व्यवहार का उल्लेख ही होना चाहिए बल्कि उनमें निदानात्मक चिंतन और उपचार की झलक भी होनी चाहिए।

अभिलेखों के प्रकार (Types of Records) – एक व्यवसायिक अभिलेख में सेवार्थी या केस की स्थिति के अर्थनिरूपण की सम्मिलित किया जाना अनिवार्य माना जाता है। अभिलेख दो शैली में लिखे जाते हैं जो निम्नलिखित हैं–1. आख्यानात्मक (Narrative), 2. संक्षेपात्मक (Summarised)।

1. आख्यानात्मक शैली – अभिलेखन में आख्यानात्मक शैली एक पुरानी और जानी पहचानी विधि है। यह विधि ऐसी है जैसे हम दिन–प्रतिदिन की घटनाओं को किसी की बताते हैं, जैसे हम पत्र लिखते हैं या जैसे हम निजी डायरी लिखते है । तथ्यों में न केवल वस्तुनिष्ठ सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक घटनाओं को सम्मिलित किया जाता है। बल्कि व्यवहार, मुद्रायें, अंगलीला सभी को लिखा जाता है। सेवार्थी कुछ कहकर या कुछ क्रिया करके जो भावनाएं या विचार प्रकट करता है अभिलेख के लिए महत्वपूर्ण होता है। अभिलेख में अधिक वस्तुनिष्ठ सूचना को सम्मिलित किया जाना चाहिए। परन्तु मनोवैज्ञानिक सूचनाएं जो विभिन्न विचारों, प्रति उत्तरों आदि का एक अच्छा प्रमाण देती हैं, भी अभिलेख में सम्मिलित होनी चाहिए। एक साक्षात्कार या कई साक्षात्कार की श्रृंखला पर आधारित बातचीत या व्यवहार से जो सूचनायेंप्राप्त होती हैं,अधिक कार्यकर्ता आख्यानात्मक, शैली का प्रयोग करके अभिलेख में सम्मिलित करते हैं। कभी कभी इन सूचनाओं का निदानात्मक शैली का प्रयोग करके भी कुछ कार्यकर्ता अभिलेखन करते हैं।

2. संक्षेपात्मक शैली – यह शैली तथ्यों को इकट्ठा करने और उनका विश्लेषण करने की अच्छी विधि है। इसका प्रयोग सामाजिक हिस्ट्री, निदानात्मक सारांश, आवधिक सारांश, उपचारात्मक मूल्यांकन, हस्तांतरण सारांश आदि की व्याख्या के लिए किया जाता है।

सामाजिक हिस्ट्री में दो प्रकार की हिस्ट्री – सामाजिक एवं आर्थिक हिस्ट्री और मनः सामाजिक या मनोजनिक हिस्ट्री हो सकती है। आवधिक सारांश में सेवार्थी जितने समय तक संस्था में उपचार के लिए रहती है। इसे कई भागों में बांटकर प्रत्येक भाग को विवरण दिया जाता है। हस्तानान्तरण सारांश का प्रयोग तब अधिक उपयोगी होता है जब केस की दूसरी संस्था, दूसरे कार्यकर्ता या दूसरे जनपद में भेजना आवश्यक हो जाता है। इसी प्रकार जब केस को बन्द करने की आवश्यकता पड़ती है तो भी समापन प्रविष्ट को अभिलिखित करना आवश्यक हो जाता है। यह सब व्यक्तिगत समाजकार्य अभिलेखों का भाग बनते हैं। संक्षेपात्मक शैली के अभिलेख पुनरावर्तन के लिए बहुत उपयोगी माध्यम बनते हैं।

अभिलेखन में निदानात्मक प्रक्रिया – उपचार में अभिलेख तभी एक अच्छा उपकरण बन सकता है जब सेवार्थी के विषय में तथ्यों सम्बन्धी कार्यकर्ता के चिन्तन पर आधारित निदानात्मक पक्ष भी लिखा जाये और कार्यकर्ता द्वारा सेवार्थी की स्थिति के अर्थनिरूपण भी दिये जायें। निदान का अर्थ है, न केवल सेवार्थी की स्थिति व समस्या का ज्ञान प्राप्त करना बल्कि सेवार्थी को भी पूर्ण रूप से समझना। निदान, कार्यकर्ता, सेवार्थी और उसकी समस्या के विषय में एक पूर्णमत होता है। यही अभिलेख में पूर्ण रूप से व्यक्त किया जाना चाहिए। अभिलेख में निदानात्मक दृष्टिकोण कई प्रकार से व्यक्त किया जाता है जैसे समस्या और उसकी विभिन्न प्रकारों की व्याख्या निदानात्मक सारांश, निदानात्मक कथन और कार्यकर्ता का अर्थ निरूपण।

अभिलेखन में मूल्यांकन (Evaluation in Recording)– यद्यपि निदान और मूल्यांकन की प्रक्रियाएं परस्पर सम्बन्ध रखती है फिर भी दोनों समान अवधारणाएं नहीं है। निदान का अर्थ है सेवार्थी की समस्या को समझना। मूल्यांकन का सम्बन्ध अंतिम लक्ष्यों, सामाजिक मूल्यों और आंकलन से होता है।

मूल्यांकन के प्रकारों में पूर्वानुमान, उपचार मूल्यांकन और साक्षात्कार पर टीका आदि आते हैं। पूर्वानुमान में उपचार योजना को भी सम्मिलित कर लिया जाता है।

निदानात्मक चिन्तन पूर्ण रूप से विवरणात्मक और हेतुनिरूपी होता है और इसमें अच्छे या बुरे का ध्यान नहीं किया जाता। मूल्यांकन में उपचार की क्रिया का उद का सुझाव होता है, परन्तु कुछ वर्तमान युग के लेखक निदान और मूल्यांकन शब्दों का प्रयोग अदल–बदल कर समान अर्थों में लेने लगे हैं, जबकि इन शब्दों का प्रयोग विभेदी परन्तु पूरक अर्थों में लिया जाना अधिक उपयोगी हो सकता है।

व्यक्तिगत समाज कार्य में अभिलेखन के उपरोक्त सिद्धान्तों के अतिरिक्त दो औरसिद्धान्तोंका उल्लेख किया जा सकता है–

1. संस्था की संरचना, कार्यों एवं नीतियों द्वारा प्रभावित अभिलेखन और

2. अभिलेखन में पत्रों का प्रयोग।

अभिलेख संस्था की संरचना, कार्यों और नीतियों के अनुसार ही लिखे जाने चाहिए। सेवार्थी की सेवा के प्रदान किये जाने में पत्र एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सेवार्थी की प्रत्यक्ष सेवा में सेवार्थी और उसके परिवार से व्यक्तिगत साक्षात्कार के स्थान पर पत्रों का प्रयोग किया जा सकता है। संस्थाओं के बीच भी पत्र महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, इस प्रकार यह पत्र अभिलेखों का भाग बन जाते हैं।

अभिलेखों का महत्व (Importance of Recording)

अभिलेखों का निम्नलिखित महत्व है–

1. लिखित अभिलेख व्यक्ति (सेवार्थी) को भलीभांति समझने में सहायक होता है।

2.अभिलेख मूल्यांकन के उपकरण के रूप में उपयोग किया जाता है।

3. अमिलेख द्वारा निरीक्षकीय सम्मेलन (प्रशिक्षण) हेतु ऐसे तथ्य एवं अवयव प्राप्त होते हैं जिसके माध्यम से कार्यकर्ता अभिकरण के प्रति अपनी सेवाएं तथा वैयक्तिक सेवाकार्य के कौशल में वृद्धि करता है।

4. अभिलेख भावी योजनाओं एवं कार्यक्रमों के साधन उपलब्ध करता है क्योंकि वह व्यक्ति व अपूर्ण रूचियों एवं आवश्यकताओं और वास्तविक घटनाओं का प्रतिवर्तन होता है।

5. अभिलेख अभिकरण के लिए एक स्थाई व निरन्तर उपलब्ध करता है तथा अभिकरण के कार्यक्रम नियोजन एवं मूल्यांकन के लिए उपकरण प्रदान करता है।

6. भावी कार्यकर्ता के लिए अभिलेख ज्ञान एवं सूचनाओं का साधन होता है।

7. अभिलेख जन साधारण के लिए तथ्य प्रदान करते हैं कि उनके कर और अनुदान के धन का उपयोग संस्था के सेवार्थियों की सेवा हेतु किया जाता है।

8. अभिलेख नए कार्यकर्ताओं को मार्गदर्शन प्रदान करता है, जो निम्न प्रकार है–

अ– वैयक्तिक सेवाकार्य सम्बन्धों की निरन्तरता स्थापित रखने में सहायक होता है।

ब– अन्य संस्थाओं के साथ पत्राचार में प्रस्तुत करने के लिए संक्षिप्तीकृत सामग्री प्रदान करने में सहायक होता है।

स– समय–समय पर अनुसंधान के लिए अभिलेख एक महत्वपूर्ण साधन स्वरूप होता है।

द– अभिकरण के कार्यों एवं कार्यक्रमों की प्राख्या के लिए अभिलेख आधार प्रदान करता है।

9. सेवार्थी एवं कार्यकर्ता तथा कार्यकर्ता एवं अभिकरण के बीच अर्न्तसम्बन्धों के ज्ञान एवं समझ के लिए अभिलेख सामग्री उपलब्ध करता है।

10.अभिलेख अभिकरण की प्रशासनिक व्यवस्था के लिए उपयोगी होता है।

वैयक्तिक सेवा कार्य विधि का समाज कार्य कीअन्य विधियों से संबंध

वैयक्तिक सेवाकार्य विधि का समाजकार्य की अन्य विधियों से सम्बन्ध

समाज की जटिलता के साथ–साथ समस्याओं में भी जटिलता बढ़ी है और इस जटिलता को समझना समाज कल्याण कार्यकर्ताओं को समझना आवश्यक हो गया है। मनोसामाजिक समस्याओं के निदान व उपचार के वैज्ञानिक तरीके को समाज कार्य कहते हैं। समाज कार्य मनोसामाजिक समस्या के निदान और समाधान में सेवार्थी को उसकी परिस्थितियों से सामंजस्य करने की चेष्टा की जाती है।

समाज कार्य एवं वैयक्तिक सेवा कार्य

इस विधि द्वारा केवल व्यक्ति की सहायता की जाती है तथा वही केन्द्र बिन्दु होता है, इस विधि से व्यक्ति की आन्तरिक एवं बाह्य क्षमताओं का ज्ञान होता है। कार्यकर्ता व्यक्ति की इस प्रकार सहायता करता है जिससे वह अपनी क्षमताओं में आवश्यकतानुसार विकास कारक बाह्य जगत से समायोजन स्थापित कर सके तथा अपना स्थान प्राप्त करके भूमिका निभा सके।

कार्यकर्ता व्यक्ति के व्यक्तित्व तथा समस्या का मूल्यांकन करता है। वह देखता है कि समस्या क्या है, उसका स्वरूप क्या है? वास्तविकता क्या है तथा क्या कारण है जिससे सेवार्थी अधिक पीड़ित है। वह सेवार्थी के प्रयासों एवं उसकी क्षमताओं को भी देखता है कि समस्या क्या है।

वैयक्तिक सेवाकार्य एवं सामूहिक कार्य

मानव का विकास समूह के माध्यम से होता है। सभ्यता के प्रारंभ से ही व्यक्ति समूहों में रहता चला आया है क्योंकि इससे उसे भोजन के अतिरिक्त सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था भी प्राप्त होती है। विद्वानों ने विभिन्न अध्ययनों द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि व्यक्ति का समूह से परे कोई अस्तित्व नहीं है। परन्तु जहां पर सामूहिक जीवन से अस्तित्व सम्भव हुआ है वहीं पर दरिद्रता, निराश्रितता, निर्धनता, रोग, बेरोजगारी तथा पुनर्घटित न होने के लिये प्रत्येक समाज में कुछ न कुछ उपाय किये गये हैं। समाज कार्य भी इसी प्रकार का प्रयास है जिसका जन्म यद्यपि धार्मिक प्रेरणाओं से हुआ परन्तु बाद में एक व्यवसाय का रूप धारण कर लिया। सामूहिक कार्य जो समाज कार्य की प्रणाली है सामाजिक जीवन को लाभप्रद बनाने का प्रयत्न करती है।

सामूहिक कार्य समाज कार्य की एक प्रणाली के रूप में सामूहिक हिंयाओं द्वारा व्यक्तियों में रचनात्मक संबंध स्थापित करने की योग्यता का विकास करता है विभिन्न सामाजिक विज्ञानों के विकास ने यह पूर्णतया स्पष्ट कर दिया है कि व्यक्तित्व के विकास के लिये व्यक्ति की सामूहिक भागीकरण व्यक्ति के लिये आवश्यक होता है वहीं दूसरी ओर भागीकरण से समुचित लाभ प्राप्त करने के लिये सामूहिक जीवन में भाग लेने, अपनत्व की भावना का अनुभव करने, अन्य व्यक्तियों से परस्पर संबंध स्थापित करने मतभेदों को मिटाने तथा अपने हितों को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नियोजित एवं संचालित करने की योग्यता होनी चाहिये। सामूहिक कार्य द्वारा इन विशेषताओं एवं योग्यताओं का विकास किया जाता है।

वैयक्तिक सेवा कार्य एवं सामुदायिक संगठन

साधारण बोलचाल में इसका अभिप्राय किसी समुदाय की आवश्यकताओं तथा साधनों के बीच समन्वय स्थापित कर समस्याओं का समाधान करने से है, सामुदायिक संगठन एक प्रक्रिया है। इस रूप में सामुदायिक संगठन का तात्पर्य किसी समुदाय या समूह में लोगों द्वारा आपस में मिलकर कल्याण कार्यों की योजना बनाना, उसके लिये उपाय तथा साधनों को निश्चित करना है। किसी समुदाय से संबंधित प्रक्रियायें अनेक प्रकार की हो सकती है। अतः सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया का अभिप्राय केवल उस प्रक्रिया से है जिसमें समुदाय की शक्ति है और योग्यता का विकास एक इकाई के रूप में किया जाता है।

हार्पर और डनहम ने सा. संगठन को समाज कार्य की एक प्रक्रिया मानते हुये इसे सामाजिक वैयक्तिक कार्य एवं सामूहिक कार्य की प्रक्रियाओं की भांति बताया है। प्रक्रिया शब्द का अभिप्राय कार्य की एक ऐसी दशा है, जिसका विकास संबंधित स्थितियों की एक श्रृंखला के माध्यम से होता है। जिसका सार गति में निहित होता है तथा जिसे अनेक क्षेत्रों में देखा जा सकता है। सामुदायिक संगठन की प्रक्रिया का प्रयोग सभी कार्यात्मक क्षेत्रों अथवा समाज कल्याण के क्षेत्र के विभागों में किया जाता है।

समाज कार्य की सभी विधियों का उद्देश्य लगभग समान है। सभी विधियों का सेवार्थी या अन्य की अधिक से अधिक सहायता करना है जिससे वह अपनी समस्याओं का समाधान कर सके तथा विकास की गति में वृद्धि जा सके। वैयक्तिक सेवाकार्य का उद्देश्य सेवार्थी या एक व्यक्ति की इस प्रकार सहायता करना होता है। जिससे वह स्वयं अपनी सहायता कर सके तथा विकास की गति में वृद्धि ला सके। समूह की अन्तर्निहित शक्तियों का विकास वह अपनी निपुणता एवं योग्यता के आधार पर करके समस्या को स्पष्ट करता है तथा उन्हीं के माध्यम से लक्ष्य तक पहुंचने के कार्यक्रम का नियोजन करता है। व्यक्ति में सामूहिक कार्य के माध्यम से शारीरिक मानसिक सामाजिक आदि गुणों का विकास करता है। यद्यपि सामूहिक कार्य में केन्द्र बिन्दु समूह होता है। परन्तु व्यक्ति के हित का पूरा पूरा ध्यान रखा जाता है। आवश्यकता पड़ने पर वैयक्तिक सेवा कार्य की सहायता ली जाती है।

सामुदायिक संगठन का उद्देश्य भी समुदाय की सहायता करना है, जिससे वह स्वयं विकास एवं उन्नति कर सके। इस प्रकार हम देखते हैं कि अन्ततोगत्वा इन विधियों का उद्देश्य व्यक्ति की इस प्रकार सहायता करना है, जिससे वह स्वयं समर्थ हो सके। समस्याओं को समझ सके तथा स्वयं उनका समाधान कर सके। कार्यकर्ता तो केवल उसकी आवश्यकता

के अनुकूल सहायता करता है परन्तु उद्देश्य में अधिक जटिलता होते हुये भी कुछ सरलता भी है।

वैयक्तिक सेवा कार्य एवं समाज कल्याण प्रशासन

समाज कार्य मुख्य रूप से सामाजिक संस्थाओं या विभागों या संबंधित संगठनों, जैसे– चिकित्सालय न्यायालय विद्यालय सुधार करने वाली या दण्ड देने वाली संस्थाओं में किया जाता है। अतः कार्यकर्ता के लिये समाज कल्याण प्रशासन का ज्ञान होना आवश्यक होता है– समाज कल्याण प्रशासन सरकारी संस्थाओं में सामाजिक अधिनियम को कार्यान्वित करता है तथा लोगों की सेवा में कानूनों नियमों तथा नियंत्रणों का रूपान्तर करना है। इसका तात्पर्य ऐसी प्रक्रिया से है, जिसके द्वारा समाज कल्याण क्षेत्र की सार्वजनिक तथा निजी संस्थाओं का प्रशासन एवं संगठन किया जाता है। इसके अंतर्गत वे सभी क्रियायें आती हैं जो किसी संस्था के कार्यक्रम का व्यावहारिक रूप देने में सहायता करती हैं। समाज कल्याण प्रशासन का व्यवहारिक रूप सामान्य प्रशासन के समान है परन्तु इसमें मानव समस्याओं के समाधान हेतु तथा मानव आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिये प्रयत्न किया जाता है। अतः प्रशासन के लिये विशेष ज्ञान की आवश्यकता होती है। उसके लिये समाज कार्य के तरीकों, सामाजिक निदान के ढंगों, समूह तथा व्यक्ति की आवश्यकताओं तथा उनके संस्था के संबंध इत्यादि का ज्ञान आवश्यक होता है। प्रशासन के तीन प्रमुख क्षेत्रों में सामाजिक प्रशासन अपना योगदान देता है।

1. राष्ट्र की सुरक्षा तथा न्याय और व्यवस्था

2. आर्थिक प्रशासन

3. सामाजिक कल्याण

4. सामाजिक सुरक्षा

5. सामुदायिक विकास

वैयक्तिक सेवा कार्य एवं कार्य अनुसंधान

अनुसंधान का उद्देश्य सभी वैज्ञानिक क्षेत्रों में ज्ञान का विकास एवं वृद्धि करना है। समाज कार्य अनुसंधान एक ऐसा स्त्रोत है जिनके द्वारा समाज कार्य को नवीन ज्ञान प्राप्त होता है, प्रारम्भ में समाज कार्य सामाजिक विद्वानों के अनुसंधान के तरीकों को अपनाने में हिचकिचाता था, अतः समाज कार्य अनुसंधान में वैज्ञानिक तरीकों को नहीं प्रमाणित किया गया।

नये ज्ञान एवं तरीकों के विकास के साथ–साथ अनुसंधान का क्षेत्र भी बढ़ता है। परन्तु सामाजिक अनुसंधान सामाजिक मूल्यों अवधारणाओं तथा कार्य कारण के संबंधों को निरपेक्ष भाव से देखता है।

वैयक्तिक सेवाकार्य एवं सामाजिक क्रिया

सामान्यतः कार्यकर्ता की सहायता से लोगों को संगठित करके किसी आवश्यकता विशेष की पूर्ति करने अथवा अफवाहों के निवारण की दशा में कार्य किया जाता है, जबकि सामाजिक क्रिया में आवश्यकतानुसार सामाजिक परिस्थितियां में ही परिवर्तन लाकर वातावरण उत्पन्न किया जाता है जिसमें व्यक्ति अधिकतम सुख और सन्तोष का जीवन व्यतीत कर सके। समाज कार्य का संबंध केवल व्यक्ति और उसकी समस्याओं से ही नहीं होता है, वरन् इसका संबंध संपूर्ण सामाजिक प्रक्रिया से रहता है। समाज कार्य में हम इस बात पर विचार करते हैं कि सामाजिक संगठन सामाजिक नीतियों तथा संस्थाओं का व्यक्ति पर क्या प्रभाव पड़ रहा है साथ ही साथ किस प्रकार व्यक्ति तथा समाज दोनों में परिवर्तन लाकर दोनों को एक दूसरे केअनुकूल बनाया जाता है। इस प्रक्रिया का भी अध्ययन करते हैं। समाज सेवक के रूप में कर्ता का यह कर्तव्य होता है कि संस्था के द्वारा जिस प्रकार सेवा प्रदान करने का दायित्व उसे सौंपा गया है उसे सफलतापूर्वक निभाये यही उनका कर्तव्य होता है। वह अपने ज्ञान कौशल तथा अनुभव के द्वारा समुदाय की रचनात्मक रूप से इस प्रकार सहायता करें कि वह अपनी संस्थाओं को अपने सदस्यों के अनुकूल बना सकें।

प्रश्न. विकासशील देशों में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य अभ्यास की क्या स्थिति है? चर्चा करें।

उत्तर–**सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य अभ्यास**

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के मौलिक व अनिवार्य तथ्य वास्तव में क्या है, या वास्तव में किस प्रकार अभ्यास में लाया जा सकता है और समाज में इसकी क्या भूमिका होगी, इन्हीं सारे प्रश्नों के उत्तर पाने लिये सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य अभ्यास में सिद्धान्तों, तकनीकों कार्य निष्पादन की आवश्कता पड़ी।

Acc to traft

''वैयक्तिक सेवाकार्य कुसमायोजित व्यक्ति के व्यक्तित्व व्यवहार तथा सामाजिक संबंधों को समझ कर उत्तम सामाजिक एवम् व्यक्तिगत समायोजन में सहायता प्रदान करने संबंधी सामाजिक उपचार है।''

Acc to Queen

"Social casework is the art of adjusting personal Relationship."

सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य के अंग

व्यक्ति – सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति की सहायता करना है, जिससे वह आन्तरिक एवम् बाह्य समायोजन स्थापित कर सके। व्यक्ति की मानसिक एवम् शारीरिक दो प्रकार की आवश्यकतायें होती है। यह इन आवश्यकताओं की पूर्ति अपनी क्षमता एवम् साधन उपलब्धि के आधार पर करता है। परन्तु कभी–कभी वह पूर्ति करने में असफल रहता है, अतः वैयक्तिक सेवा कार्य उसको इस योग्य बनाता है कि वह अपना कार्य सुचारू रूप से कर सके।

समस्या – समस्या के कई रूप होते हैं परन्तु जो समस्यायें व्यक्ति के व्यक्तित्व से सम्बन्धित होती है और जिनमें व्यक्ति की सामाजिक क्रियाशीलता कम हो जाती है, वैयक्तिक सेवा कार्य के क्षेत्र में आती है। इस समस्या के कारण व्यक्ति अपने कार्यों को न तो सुचारू रूप से कर पाता है और न वास्तविकता को स्पष्ट रूप से देख पाता है। कभी–कभी समस्या कीउत्पत्ति बाह्य से होती है। अतः वैयक्तिक सेवा कार्यकर्ता आन्तरिक एवम् बाह्य दोनों प्रकार के कारकों पर अपना ध्यान आकर्षित करता है।

स्थान – सहायता प्रदान करने का स्थान एक संस्था होती है, कुछ संस्थायें विशिष्ट प्रकार की सेवायें प्रदान करती हैं तथा कुछ संस्थायें सामान्य लक्ष्यों की पूर्ति करती है। बाल निर्देशन केन्द्र, मंत्रणा केन्द्र, परिवार कल्याण केन्द्र व्यवसायिक मंत्रणा केन्द्र आदि विशिष्ट सस्थायें हैं। इनमें प्रशिक्षित कार्यकर्ता के द्वारा समस्याग्रस्त व्यक्ति की सहायता की जाती है। द्वितीयक प्रकार की संस्थायें है जो समान कार्य की विधियों का उपयोग उद्देश्य प्राप्ति के लिए करती है और ये विधियां गौण स्थान रखती है। चिकित्सालय, विद्यालय श्रम कल्याण सुधार गृह आदि इसके अनेक उदाहरण है।

प्रक्रिया – वैयक्तिक सेवा कार्य की प्रक्रिया में कार्यकर्ता का सम्बन्ध मुख्यतः तीन भागों (कार्यों) से रहता है।

(1) सेवार्थी की समस्या के संबंध में आन्तरिक एवम् बाह्य वातावरण से संबंधित आंकड़ों का संकलन एवम् अध्ययन ।

(2) समस्या का वैयक्तिक विधियों द्वारा निदान

(3) इस प्रकार प्रक्रिया के तीन अभिन्न अंग है– 1. अध्ययन, 2. निदान तथा मूल्यांकन, 3. चिकित्सा। कार्यकर्ता सेवार्थी की समस्या का अध्ययन, निरीक्षण, अन्वेषण तथा वैयक्तिक इतिहास के आधार पर करता है। निदान का कार्य भी अध्ययन के साथ–साथ चलता रहता है। कार्यकर्ता सेवार्थी के व्यक्तित्व तथा समस्या के मूल्यांकन द्वारा यह देखता है। उसकी समस्या क्या है और सेवार्थी को उसकी आवश्यकतानुसार सहायता प्रदान करता है।

विकासशील देशों में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य अभ्यास की स्थिति

यदि हम यह देखें कि विकासशील देशों में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य अभ्यास की स्थिति क्या है, तो हम पायेंगे कि विकासशील देशों के समक्ष अनेक समस्यायें हैं। सामाजिक संगठन और सामाजिक विघटन, वैयक्तिक विघटन, अपराध और बाल अपराध, मदाव्यय और नशा, जुआ और धूम्रपान, वैश्यावृत्ति, भिक्षावृत्ति, सामुदायिक कलह, पारिवारिक विघटन और सबसे बड़ा कारण गरीबी और बढ़ती हुई जनसंख्या विकासशील देशों के विकास में अवरोध उत्पन्न कर रहे हैं। गरीबी और बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण व्यक्ति भूख में मर रहा है। प्रति व्यक्ति आय बहुत कम है। मंहगाई दिन रात तेजी से बढ़ रही है। इस कारण व्यक्ति समस्या के गर्त में दिनदृदिनों उलझता जा रहा है। व्यक्ति अपनी तथा अपने परिवार की आवश्यकतायें पूरी कर पाने में असमर्थ है। जिससे उसका तथा उसके परिवार का सामाजिक विकास नहीं हो पा रहा है। उनकी समस्यायें से पारिवारिक कलह उत्पन्न हो रही है। वैयक्तिक विघटन बढ़ रहा है। यहां पर वैयक्तिक सेवा कार्य एक

आवश्यकता बन गई है। ताकि उनका सही ढंग से निवारण कर उनका पुनर्वासन किया जा सके।

जो स्ट्रीट चिलड्रन है, जो रेलवे स्टेशन, फुटपाथ की दुकानों नुक्कड़ बस्तियों में काम कर रहे हैं, वहां निवास कर रहे, वहां उनकी सही स्थिति में लाने के लिए सरकार अनेकों प्रयास कर रही है।

कैदियों के लिये सुधारगृह की उचित व्यवस्था है। ताकि उनका सही ढंग से अध्ययन करके उनके साथ काम करके उन्हें नई चीजें खीखाकर उनको पुनः पहले जैसी स्थिति में लाया जा सके।

भिक्षावृत्ति और वैश्यावृत्ति को रोकने के लिए सरकार महिला कल्याण गृह, सुधार गृह की व्यवस्था करती है। नशा से बचाव के लिये नशा उन्मूलन कार्यक्रम की व्यवस्थायें होनी चाहिये। इस तरह से विकासशील देशों में व्यक्ति की समस्या का निदान कर उसमें आशा एवम् विश्वास का संचार वैयक्तिक सहायता द्वारा ही किया जा सकता है। सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य व्यक्ति की सहायता वैयक्तिक एवम् अन्तवैयक्तिक समस्याओं को सुलझाने में करता है। मनोवैज्ञानिक रूप से जब हम विकासशील देशों में वैयक्तिक सेवा कार्य की ओर दृष्टिपात करते हैं। तो स्पष्ट प्रतीत होता है कि इदं, अहं और पराअहं में संतुलन बनाये रखने के लिये व्यक्ति की आवश्यकताओं की संतुष्टि जरूरी है और तभी वह सही स्तर प्राप्त कर अपनी स्थिति में सुधार कर अपना विकास कर सकता है।

यदि हम भारत जैसे विकासशील देश की बात करें तो पता चलता है कि प्राचीनकाल से ही दीन–दुखियों पीड़ित व्यक्तियों की मदद करने की प्रथा प्रचलित है। चाहे भले ही वह पाप या पुण्य से संबंधित हो।

यद्यपि सत्य है कि विकासशील देशों में सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का क्षेत्र व्यापक हो रहा है। परन्तु कार्यकर्ता अपनी भूमिकाओं को पूरा कर पाने में असमर्थ व अनेक बाधाओं का अनुभव करते हैं। इसके अतिरिक्त विकासशील देशों में प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं के चयन में कोई विशेष वारीयता नहीं मिलती है। आशा है। समय के परिवर्तन के साथ–साथ इस दृष्टिकोण में परिवर्तन आयेगा तथा विकासशील देशों में भी सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य का सामान्य विकास सम्भव हो सकेगा और लोगों के जीवन स्तर में सुधार आने के बाद विकासशील राष्ट्र भी विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में आयेंगे।

इकाई – चतुर्थ

4.1 सामूहिक कार्य की अवधारणा

4.2 पश्चिम एवं भारत में सामूहिक कार्य का ऐतिहासिक विकास

4.3 सामूहिक कार्य के सिद्धान्त, सामूहिक कार्य के चरण

4.4 सामूहिक कार्य का समाज कार्य की अन्य विधियों से सम्बन्ध

4.5 सामूहिक कार्य प्रक्रिया में सामूहिक कार्यकर्ता की भूमिका एवं आवश्यक निपुणताएँ

4.6 सामूहिक कार्य में कार्यक्रम– अर्श, महत्व एवं कार्यक्र नियोजन और विकासीय प्रक्रिया

4.7 सामूहिक कार्य अभ्यास में अभिलेखन

सामाजिक सामूहिक कार्य की अवधारणा

सामाजिक सामूहिक कार्य समाजकार्य की एक प्रणाली है, जो सामूहिक क्रियाओं द्वारा रचनात्मक सम्बन्ध स्थापित करने की योग्यता का विकास करता है। विभिन्न सामूहिक सामाजिक विज्ञानों के विकास ने यह सिद्ध कर दिया है कि व्यक्तित्व के विकास के लिए व्यक्ति की सामूहिक जीवन सम्बन्धी इच्छाओं एवं आवश्यकताओं की संतुष्टि आवश्यक होती है। जहां एक ओर सामूहिक भागीकरण व्यक्ति के लिए आवश्यक होता है। वहीं दूसरी ओर भागीकरण से समुचित लाभ कार्यक्रम प्राप्त करने के लिए सामूहिक जीवन में भाग लेने अपनत्व की भावना का अनुभव करने, अन्य व्यक्तियों से परस्पर सम्बंध स्थापित करना मतभेदों को निपटाने तथा अपने हितों तथा समूह के हितों को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नियोजित एवं संचालित करने की योग्यता होनी चाहिए। सामूहिक कार्य द्वारा इन विशेषताओं एवं योग्यताओं का विकास किया जाता है।

सामूहिक जीवन का आधार सामाजिक सम्बन्ध है। मान्टैग्यू ने यह विचार स्पष्ट किया कि सामाजिक सम्बन्धों का तरीका जैविकीय निरन्तरता पर आधारित है। जिस प्रकार से जीव की उत्पत्ति होती है, उसी प्रकार से सामाजिक अभिलाषा भी उत्पन्न होती है। जीव के प्रकोष्ठ एक दूसरे से उत्पन्न होते हैं, उनके लिए और किसी प्रकार से उत्पन्न होना संभव नहीं है। प्रत्येक प्रकोष्ठ अपने कार्य प्रक्रिया के ठीक प्रकार से होने के लिए दूसरे प्रकोष्ठों की अंतःक्रिया पर निर्मर है। अर्थात प्रत्येक अवयव सम्पूर्ण में कार्यकर्ता है। सामाजिक अभिलाषा भी उसका अंग है। यह मनुष्य का मूल प्रवृत्यात्मक गुण है, जिसे उसने जैविकीय वृद्धि प्रक्रिया से तथा उसकी द्रढ़ता से प्राप्त किया है।

अतः सामूहिक जीवन व्यक्ति के लिए उतना ही महत्वपूर्ण है जितना उसकी भौतिक आवश्यकताएं महत्वपूर्ण है। जब सामूहिक जीवन में कोई व्यवधान उत्पन्न हो जाता है तो व्यक्ति अस्त व्यस्त तथा विघटित हो जाता है। सामूहिक कार्य इस प्रकार की समस्याओं के समाधान करने का प्रयत्न करती है।

1. सामूहिक कार्य प्रणाली के रूप में

जब हम कहते हैं कि सामाजिक सामूहिक कार्य एक प्रणाली है, तो इसका अभिप्राय केवल यह एक काम करने का तरीका ही नहीं है, बल्कि इसका अभिप्राय एक क्रमानुसार व्यवस्थित तथा नियोजित, समूह के साथ काम करने का तरीका है। प्रणाली, उद्देश्य प्राप्त करने का चेतन तरीका तथा अभिकल्पित साधन होती है। साधारण अर्थों में प्रणाली कोई भी कार्य करने का तरीका है। परन्तु यहां पर हम सदैव ज्ञान की संगठित व्यवस्था, ग्रहण शक्ति, सूझ तथा सिद्धान्तों की खोज करते हैं। सामाजिक सामूहिक कार्य, सामाजकार्य की एक प्रणाली है। जिसके द्वारा समाजकार्य के उद्देश्यों की पूर्ति अन्य प्रणालियों के समान की जाती है। अतः हम सामूहिक कार्य के अर्थ सिद्धान्त, दर्शन निपुणताओं तथा कार्य विधि का वर्णन करेंगे।

2. सामूहिक कार्य की परिभाषा

सामाजिक सामूहिक कार्य समूह के माध्यम से व्यक्ति की सहायता करता है। समूह द्वारा ही व्यक्ति में शारीरिक, बौद्धिक तथा सांस्कृतिक विशेषताओं को उत्पन्न कर समायोजन के योग्य बनाया जाता है। सामाजिक सामूहिक कार्य को व्यवस्थित ढंग से समझने के लिए हम यहां पर कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाओं का उल्लेख कर रहे हैं।

विल्सन एण्ड राइलैण्ड (1949) – ''सामाजिक सामूहिक सेवाकार्य एक प्रक्रिया और एक प्रणाली है। जिसके द्वारा सामूहिक जीवन एक कार्यकर्ता द्वारा प्रभावित होता है, जो समूह की परस्पर सम्बन्धी प्रक्रिया को उद्देश्य प्राप्ति के लिए सचेत रूप से निर्देशित करता है, जिससे प्रजा तांत्रिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।''

हैमिल्टन (1949) – ''सामाजिक सामूहिक कार्य एक मनोसामाजिक प्रक्रिया है, जो नेतृत्व को योग्यता और सहकारिता के विकास से उतनी ही सम्बंधित है। जितनी सामाजिक उद्देश्य के लिए समूह अभिरूचियों के निर्माण से है।''

कोनोप्का (1963) – ''सामाजिक सामूहिक कार्य समाजकार्य की एक ऐसी प्रणाली है, जो व्यक्तियों की सामाजिक कार्यात्मकता बढ़ाने में सहायता करती है। उद्देश्यपूर्ण सामूहिक अनुभव द्वारा व्यक्तिगत, सामूहिक और सामुदायिक समस्याओं की ओर प्रभावकारी ढंग से सुलझाने में सहायता प्रदान करती है।''

सामाजिक सामूहिक कार्य एक प्रणाली है

इसका तात्पर्य यह है कि सामूहिक कार्य के लिए विशेष ज्ञान की आवश्यकता होती है। कार्यकर्ता को जब तक समूह की विशेषताओं, दशाओं, मनोवृत्तियों आदि का ज्ञान नहीं होगा, जब तक वह कार्य नहीं कर सकता है, उसको व्यक्ति के व्यवहार का ज्ञान तथा समूह के व्यवहार का ज्ञान दोनों का होना आवश्यक है। कार्यकर्ता में वैज्ञानिक ज्ञान होता है। उससे कार्य कारण का सम्बन्ध ज्ञात होता है। उसमें समझ होती है। जिससे वह भिन्न–भिन्न स्थितियों तथा समूहों के साथ कार्य करने में समर्थ होता है। उसको समूह की गत्यातन का ज्ञान होता है, ट्रेकर का मत है कि सामूहिक कार्य के अपने कुछ सिद्धान्त है जो दूसरी प्रणालियों से भिन्न है। योजित समूह निर्माण का सिद्धान्त, विशिष्ट उद्देश्यों का

सिद्धान्त, उद्देश्यपूर्ण कार्यकर्ता सेवार्थी सम्बंध, निरन्तर वैयक्तिकरण, निर्देशित सामूहिक अन्तःक्रिया प्रजातांत्रिक सामूहिक आत्मनिश्चयीकरण, लोचदार कार्यात्मक संगठन, निरन्तर प्रगतिशील कार्यक्रम, स्त्रोतों का उपयोग तथा निरन्तर मूल्यांकन का सिद्धान्त एवं इसके अन्तर्गत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

सामूहिक कार्य की अपनी विशिष्ट निपुणताएं हैं, जिनको सामूहिक कार्यकर्ता व्यवहार में लाता है। कार्यकर्ता में उद्देश्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने की निपुणता होती है। वह सामूहिक स्थिति को विश्लेषित करने में दक्ष होता है। वह समूह के साथ भाग लेने में निपुण होता है। अपनी भूमिका की व्याख्या तथा उसकी आवश्यकता को समयानुसार निश्चित करने में समर्थ होता है। उसमें इस बात की निपुणता होती है कि प्रत्येक नई स्थिति का निश्पक्ष होकर अध्ययन करता है। समूह की सकारात्मकता, तथा नकारात्मकता भावनाओं को समझकर ही कार्यक्रम को आगे बढ़ाता है। वह समूह की संधियों एवं आवश्यकताओं के अनुसार ही कार्यक्रम सम्पन्न करता है। इसमें संस्था तथा समुदाय में स्त्रोतों को उपयोग में लाने की निपुणता होती है।

सामूहिक कार्य दर्शन

(1) सामूहिक कार्य की धारणा है कि सामाजिक संस्था के माध्यम से व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास एवं मनोवृत्तियों में परिवर्तन दूसरे लोगों के अनुभवों के द्वारा किया जा सकता है। व्यक्तियों के लिए सामाजिक संस्थायें एक यंत्र का कार्य करती है। इसके द्वारा ही वे अपनी मूलभत आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करते हैं तथा विकास की ओर बढ़ते है। संस्थाएं समूहों की कुछ सामान्य तथा कुछ विशिष्ट आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए संगठित की जाती है तथा उनका प्रतिनिधित्व करती है।

(2) जिन समूहों में सामूहिक कार्यकर्ता अपनी सेवाओं का सदुपयोग करता है। उनके सदस्यों में न केवल एक गुण का विकास होता है, वरन सम्पूर्ण प्रतिभा का विकास होता है। स्वतः व्यक्ति न केवल समूह में विकास करते है बल्कि समूहों द्वारा ही विकास सम्भव है।

(3) समूह द्वारा व्यक्तित्व का विकास, अभिरूचियों में परिवर्तन तथा आदतों का संग्रहण होता है। इसलिए यदि समूह का निर्माण सुनियोजित ढंग से किया जाता है। तो उद्देश्यपूर्ण की पूर्ति सुगमता से हो सकती है।

(4) परस्परिक स्वीकृति के बिना सामाजिक जीवन का कोई महत्व नहीं है। स्वीकृति–अस्वीकृति की घटना समूह में उस समय घटित होती है जब समूह में अंतः क्रिया होती है तथा विचारों, अभिरूचियों व इच्छाओं की अभिव्यक्ति होती हैं

(5)सामूहिक कार्य का विश्वास है कि जनतांत्रिक व्यवहार सीखा हुआ व्यवहार है, उसका विश्वास है कि प्रजातंत्र दो बातों पर निर्भर है–(1) व्यक्तियों को प्रजातंत्र समझने का अवसर मिले, (2) उन्हें प्रजातांत्रिक ढंग से रहने का अवसर प्राप्त हो।

(6)सामूहिक कार्य प्रणाली समूह द्वारा व्यक्तियों की आवश्यकताओं और रूचियों की अधिकतम पूर्ति की स्वतंत्रता देती है।

(7)सामाजिक सामूहिक कार्य लक्ष्य का साधन है और यह लक्ष्य है व्यक्ति का विकास।

सामाजिक सामूहिक कार्य

Social Group Work

सामाजिक कार्य में वैयक्तिक सामाजिक कार्य ही सब कुछ नहीं है। मनुष्य समूहों में रहते हैं। वे परिवार, जाति, संघ, समुदाय आदि में रहकर बड़े होते है। अतः मनुष्य मात्र के लिए समूहगत जीवन का बुनियादी महत्व है। समूह किसी भी ऐसे रागवाय को कहते हैं जिसमें सामाजिक प्राणी एक दूसरे से स्पष्ट सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करते हैं। समूह के सदस्यों में पारस्परिक आदान–प्रदान होता है। ऐसे व्यक्तियों के समयाय को समूह की संज्ञा दी जाती है जो समान कार्यों में रूचि रखते हैं। इसमें व्यक्ति को सहायता को सहायता किसी समूह के माध्यम से और उसके सदस्य के नाते दी जाती है। समूह कार्यकर्ता समाजसेवी संस्थाओं की प्रबन्धदृव्यवस्था में व्यक्तियों तथा समूहों की सहायता इस प्रकार करता है कि उनमें दूसरे लोगों से सार्थक सम्बन्ध स्थापित करने की क्षमता का विकास हो सके और वे अपनी–अपनी आवश्यकताओं और क्षमताओं के अनुरूप अवसरों का उपयोग और आत्मविकास कर सकें। समूह कार्य में व्यक्ति सामाजिक कार्यकर्ता की सहायता से अपने व्यक्तित्व के विकास, परिवर्तन और संवर्धन के लिए समूह को साधन के रूप में प्रयोग करता है। सामाजिक कार्यकर्ता समूहगत व्यक्तियों की पारस्परिक क्रिया–प्रतिक्रिया के संदर्भ में निर्देशन कार्य करते हुए व्यक्ति की प्रगति और पूरे समूह के उत्थान के लिए प्रयत्नशील होता है।

गुणात्मक एवं संख्यात्मक दोनों ही प्रकार के अध्ययनों के लिए समूह कार्य पद्धति काफी उपयुक्त है। सर्वप्रथम मोर्नियों ने अपनी "Who shall sruvive"नामक क पुस्तक में इस पद्धति पर प्रकाश डाला है।

हेलन जिनिंग्स ने इस पद्धति को समझाते हुए लिखा है "एक दिये हुए समूह के सदस्यों में एक दिये हुए समय में पाये जाने वाले सम्बन्धों के ढांचे को साधारण रूप से और ग्राफों के रूप में प्रस्तुत करने की यह विधि है।''

ब्रोनफेन ब्रैनर ने समूह कार्य को परिभाषित करते हुए लिखा है, ''समूह में व्यक्तियों के बीच स्वीकृति एवं अस्वीकृति की मात्रा के माप के द्वारा सामाजिक स्थिति, ढांचा एवं प्रगति का पता लगाने, विवरण देने तथा मूल्यांकन करने की विधि है।''

प्रो. राजाराम शास्त्री, "सामूहिक कार्य समाज कार्य की वह पद्धति है जिसमें अभिकरण के माध्यम से एक कुशल सामूहिक कार्यकर्ता समग्ररूप से समूह तथा उसके निर्माता अवयव व्यक्ति की ऐसी हितकारी शक्तियों के विकास और परिवर्तन का कार्य उन्हीं के द्वारा करता है जो कि उसमें निहित है।''

हेमिल्टन –''सामाजिक समूह कार्य एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य नेतृत्व की योग्यता और सलाहकार विकास करना और सामाजिक उद्देश्य के लिए सामूहिक अभिरूचि को प्रोत्साहन देना है।''

स्पष्ट है कि इस पद्धति की सहायता से किसी समूह विशेष के सदस्यों के आपसी सम्बंधों को मापा जाता है, उनके एक–दूसरे के लिए आकर्षण और विकर्षण का पता लगाया जाता तथा साथ ही समूह की सम्बंध व्यवस्था में व्यक्तियों की सामाजिक स्थिति को ज्ञात किया जाता है।

यह पद्धति इस दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है कि इसके द्वारा ऐसे स्केल्स (मापदण्ड) विकसित किये गये है, जिनकी सहायता से सामाजिक घटनाओं का गुणात्मक एवं परिणात्मक दृष्टिकोण से अध्ययन सम्भव हो पाता है। यह पद्धति व्यक्ति के मानसिक भावों को चित्रित करने में सहायक है। इस पद्धति की सहायता से प्राप्त तथ्यों के आधार पर किसी सामाजिक घटना या समस्या के विभिन्न कारणों का पता लगाना भी सम्भव है।

समाज में समूहों की भूमिका
Role of Groups in Society

व्यक्ति के विकास में समूह का योगदान सदा से महत्वपूर्ण रहा है। समूह के स्तर पर ही अन्तवैयक्तिक सम्बंधों का विकास होता है। इसका अभिप्राय दूसरे व्यक्तियों को स्वीकार करना और दूसरे व्यक्तियों द्वारा स्वयं को स्वीकार किया जाना है। इसे दूसरे शब्दों में सामाजिक वयस्कता का विकास समूह द्वारा सम्भव होता है।

इस विकास में पारिवारिक समूह का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। पारिवारिक सम्बंधों द्वारा उन सामाजिक उपकरणों का विकास होता है जो सामाजिक सहचार के लिए सहायक होते है। व्यक्ति को सामाजिक व्यस्कता के विकास के लिए जितना अधिक अवसर मिलेगा, समाज के साथ उसका समायोजन भी उतना ही अधिक शक्तिशाली होगा। नर्सरी स्कूल, किंडरगार्डन स्कूल, पड़ोस, समिति इत्यादि सामाजिक व्यस्कता के विकास में सहायक होती है। इनके सम्पर्क से मनुष्य में मुख्य रूप से दो प्रकार के अनुभव विकसित होते हैं। कुछ अनुभव व्यवस्थापन में सहायक होते हैं और कुछ हानिकारक। इस सामाजिक वयस्कता के विकास में व्यक्ति के सामाजिक और वैयक्तिक पक्ष को समान रूप से महत्व दिया जाना चाहिए। इन दोनों के समन्वय से ही व्यक्ति वास्तविक, सामाजिक व्यस्कता (Social Maturity) को प्राप्त करता है।

आधुनिक समाज ने अपने संगठन की प्रकृति के अनुसार समूहों के महत्व को एक नवीन दिशा प्रदान की है। आधुनिक समाज समूह की अनुभूति होना, व्यक्ति के लिए अत्यंत आवश्यक है। समूह के द्वारा व्यक्ति समाज को अपना योगदान देता है।

श्रम संगठन, व्यावसासिक संगठन, राजनीतिक संगठन– सब इस प्रकार के योगदान देने वाले संगठन हैंरू आधुनिक समाज में श्रम संगठन, व्यावसायिक संगठन, राजनीतिक संगठन – सब इस प्रकार के योगदान देने वाले संगठन हैंरू आधुनिक समाज में समूह को मान्यता दिये बिना, व्यक्ति की सम्पन्नता असम्भव है। इस तथ्य को मानसिक स्वास्थ्य की अन्तर्राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा भी स्वीकार किया गया है। इसके प्रतिवेदन (Report) के अनुसार– ‘‘समरूपव्यक्तियों के ऐसे छोटे समूह जिनमें लोग एक दूसरे को भली–भांति जानते हैं और प्रेम, विश्वास, परस्परं संचार और पारस्परिक जानकारी से युक्त हैं, वे अधिकांश मानव समाज की अर्थपूर्ण इकाई है।’’

समूह कार्य की उपयोगिता
Utility of Social Group Work

1.समूह कार्य में समूह के साथ कार्य किया जाता है, किन्तु इसका लक्ष्य बिन्दु व्यक्ति होता है और समाज–सम्मत प्रयोजनों की उपलब्धि के लिए स्वयं समूह का उपयोग साधन के रूप में होता है।

2. समूह कार्य के समूह ऐच्छिक होते है और यह कार्य किसी सामाजिक संस्था अथवा संगठन के तत्वाधान में होता है। यह सामाजिक संगठन विद्यालय, खेलकूद एवं मनोरंजन का क्लब अथवा कोई धार्मिक संघ हो सकता है।

3. समूहकार्य सहायता प्रदान करने की एक विधि और प्रक्रम है और व्यक्ति तथा समूह दोनों की प्रगति इसका लक्ष्य है।

4. समूह कार्य का निर्देशन सामाजिक कार्यकर्ता करता है जो सहायक की भूमिका अदा करता है।

इस प्रकार समूह कार्य के तीन मुख्य अंग है– समूहकर्मी, नेता और समाजसेवी संस्था अथवा एजेंसी।

अवकाशकाल, क्रियाकलाप, बालभवन, अवकाया– गृह, युवा – निवासगृह, अस्पताल, संस्थाएँ सामुदायिक कल्याण कार्य और विद्यालय आदि ऐसे स्थान और कार्यक्रम है, जिनमें समूह कार्य के प्रक्रम का उपयोग होता है।

समूह कार्य की विशेषताएँ
Characteristics of Group Work

(1) सामाजिक सामूहिक कार्य समाज कार्य की एक प्रजातांत्रिक प्रणाली है। इसमें समूह को विशेष लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बाध्य नहीं किया जाता है। समूह को पूरा अधिकार होता है कि वह अपने लक्ष्यों, कार्यक्रमों एवं क्रियाकलापों को अपनी रूचि के अनुसार व्यवस्थित एवं संगठित करें।

(2) सामाजिक सामूहिक कार्य व्यक्तियों में प्रजातांत्रिक जीवन के आदर्शों एवं नेतृत्व की योग्यता का विकास करता है।

(3) सामाजिक सामूहिक कार्य द्वारा समूह के सदस्यों में रचनात्मक सम्बंध स्थापित करने का प्रयत्न किया जाता है। कार्यकर्ता एवं विशेषज्ञ के रूप में कार्य करता है।

(4) सामाजिक सामूहिक कार्य समूह के सदस्यों में आत्म निर्देशन की योग्यता करता है। कार्यकर्ता समूह की सहायता उसी सीमा तक करता है जहां तक समूह आवश्यक समझता है।

(5)समूह का उपयोग सामूहिक जीवन को सुखमय बनाने के लिए किया जाता है।

(6)इस प्रणाली को अपनी विशिष्ट निपुणतायें, सिद्धांत एवं प्रविधियां है।

(7)सामाजिक सामूहिक कार्य एक संस्था के माध्यम से कार्य करता है।

(8) यह व्यक्तियों की समानता में विश्वास रखता है, और यह प्रत्येक व्यक्ति की सामाजिक जीवन में बराबर का भाग देने और अपने व्यक्तित्व का विकास करने का अवसर देता है।

(9) समूह सदस्यों के लिए सामूहिक कार्य एक नवीन अनुभव होता है।

(10) इसके माध्यम से व्यक्तियों की एक दूसरे के साथ काम करने रहने समस्याओं को समझाने तथा वास्तविकता को सात करने का अवसर मिलता है।

समूह कार्य के सिद्धांत
Principles of Group Work

1. समूह का निर्माण सुनियोजित होना चाहिए।

2. समूह के निश्चित उद्देश्य होने चाहिये।

3. समूह कर्मी और समूह के प्रयोजनात्मक संबंध होने चाहिए।

4. समूह में व्यक्तिमांवना बराबर होते रहना चाहिये।

5. दूसरे समूहों से सम्बन्ध का काम समूह कर्मी के निर्देशन में होना चाहिये।

6. समूह का संगठन लोकतंत्री सिद्धान्तों के अनुसार होना चाहिये।

7. समूह का कार्यिक संगठन लचीला होना चाहिए।

8. उत्तरोत्तर उन्नत कार्यक्रमों की दृष्टि से ही कार्यक्रम तैयार होने चाहिए।

9. समूह को अपने साधनों का उपयोग करना चाहिए।

10. समूह के कार्य का मूल्यांकन नियमित रूप से होते रहना चाहिये।

सामूहिक कार्य की मूल मान्यतायें
Fundamental Assuptions of Group Work

1. मनुष्य एक सामूहिक प्राणी है

2.सामाजिक अंतःक्रिया सामूहिक जीवन का परिणाम है।

3.व्यक्ति की उपलब्धियों में वृद्धि, उसमें परिवर्तन तथा विकास समूह के माध्यम से किया जा सकता है।

4.समस्याओं के समाधान करने की क्षमता में वृद्धि सामूहिक अनुभव द्वारा की जा सकती है।

5.सामूहिक अनुभव व्यक्ति की अभिलाषाओं तथा इच्छाओं का स्तर परिवर्तित करते हैं।

6.सामूहिक मनोरंजनात्मक क्रियायें व्यक्ति तथा समाज दोनों के लिए हितकर है।

7.सामूहिक अनुभव स्थायी प्रभाव डालता है।

8.सामूहिक कार्य सदैव समूह में दो प्रकार की क्रियाओं पर विशेष ध्यान आकर्षित करता है।

9.सामूहिक कार्य सम्पूर्ण व्यक्ति के सिद्धान्त में विश्वास रखता है।

10. कार्यक्रम क्रियाओं का मूल्यांकन व्यक्तियों पर प्रभाव के रूप में होता है।

11. समूह के साथ कार्य करने के लिए व्यावसायिक ज्ञान एवं निपुणतायें आवश्यक है।

12. व्यक्ति सदस्य को सामूहिक कार्यों में भली–भांति समझा जा सकता है तथा सहायता की जा सकती है।

पश्चिम में सामाजिक सामूहिक कार्य का विकास

Introduction

सामाजिक सामूहिक कार्य समाजकार्य की एक प्रणाली है, जिसका उद्देश्य व्यक्तियों को मनोरंजन प्रदान करना तथा सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक और सामन्जस्य संबंधी समस्याओं का निराकरण करके विकास एवं उन्नति करना है।

इसका स्वरूप पहले दान पद्धति थी, जिसके द्वारा व्यक्तियों व समूहों की सहायता की जाती थी। इस प्रकार के कार्यों का आधार धर्म था। इसके साथ ही साथ दूसरों की सहायता करने की मौलिक प्रकृति ने इसके विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। धार्मिक निष्ठा से परोपकार तथा दानशीलता को अत्यधिक प्रेरणा प्राप्त हुई।

गरीबों एवं असहायों की कठिनाइयों को दूर करना तथा अन्य समस्याओं का समाधान करना ईसाइयों का आवश्यक कर्तव्य माना जाने लगा। इसराइल के पैगम्बरों तथा ईसाई धार्मिक संस्थाओं में सेन्टपाल, सेंट अगस्टीन, सेंट फ्रान्सिस, सेंट थामस आदि के उपदेशों के फलस्वरूप एक ओर दान प्राप्त करने वालों को धार्मिक सम्मान प्राप्त हुआ।

प्रारंभ में क्लेश, दुःख, गरीबी तथा अन्य समस्याओं के लिए ईसाई लोग एक–दूसरे की सहायता करते थे परंतु मध्यकाल में यह कार्य पादरी करने लगे।

सोलहवीं शताब्दी में सुधारकाल में भिक्षावृत्ति को रोकने का प्रयास किया गया। जर्मनी में मार्टिन लूथर ने जर्मन राष्ट्र के कुलीन ईसाई लोगों से अपील की कि वे भिक्षावृत्ति को रोकें और सभी पैरिशों में सामान्य दान पेटियों की स्थापना करें। 16वीं शताब्दी में स्पेन के दार्शनिक जुआन लूइस बाइवेज ने पहली बार यह मत प्रकट किया कि निर्धन व्यक्तियों की परिस्थितियों की ओर ध्यान देना चाहिए।

सन् 1788 में हैम्बर्ग ने वृद्ध तथा अयोग्य व्यक्तियों को भिक्षागृह में रखने का सुझाव दिया।

सन् 1990 में म्यूनिख में इसी प्रकार का कार्य प्रारंभ हुआ। सन् 1853 में एल्वर फेल्ड शहर में भी इस प्रकार की योजना चलाई गयी। इन समितियों के कार्यकर्ता उन्हीं क्वार्टरों में रहते थे, जिनमें गरीब तथा असहाय रहते थे।

फ्रांस के श्रेष्ठ समाज सुधारक फादर विंसेन्ट डी पाल ने इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। उन्होंने सन् 1633 में भिक्षा की लड़कियों का सामान्य ढंग का संगठन बनाया।

भिक्षा की महिलायें संगठन का गठन किया, जो निर्धन परिवारों में खाद्य पदार्थ तथा वस्त्रों का वितरण करती थी।

फादर विन्सेन्ट के विचारों ने लोगों पर बहुत प्रभाव डाला और उससे प्रभावित होना फ्रांस में ही नहीं बल्कि अन्य देशों में भी निर्धनों की सहायता कार्यक्रम को वैज्ञानिक मोड़ मिला।

(I) इंग्लैण्ड में सामूहिक कार्य का विकास

(II) अमेरिका में सामूहिक कार्य का विकास

(I) इंग्लैण्ड में सामूहिक कार्य का विकास

इंग्लैण्ड में सामूहिक समाजकार्य के इतिहास को निम्न स्तरों में प्रदर्शित कर सकते हैं–

(1)जरूरत मंदों की सहायता

(2)सामुदायिक सेवायें

(3)श्रम कल्याण

(4) सुधारात्मक सेवायें

(1) जरूरत मंदों की सहायता

चौदहवीं शताब्दी तक गरीबों, अपंगों अशक्तों तथा अपाहिजों को भिक्षा देना पुण्य कार्य समझा जाता था। चर्च का प्रमुख कार्य गरीबों को दान देना तथा उसकी सहायता करना था। चर्च ने काफी प्रयत्न किये कि गरीबों की दशा में सुधार हो।

सन् 1349 में किंग इडवार्ड III ने यह आदेश दिया कि प्रत्येक पुष्ट शरीर वाला व्यक्ति कोई न कोई कार्य अवश्य करें। यह प्रथम प्रयास था, जिसमें गरीबी के लिए व्यक्ति को उत्तरदायी ठहराया गया।

सन् 1531 में हेनरी नियमावली ने भिक्षा मांगने वालों के लिए पंजीकरण आवश्यक कर दिया। इस कानून के अंतर्गत महापालिका अध्यक्ष तथा न्यायाधीशों के लिए यह आदेश शुरू हुआ। हेनरी VIII द्वारा चर्च की सम्पत्ति जब्त करने के कारण यह जरूरी हो गया कि गरीबों की सहायता अन्य प्रकार से की जाये।

सन् 1536 में गरीबों की सहायता के लिए सरकारी योजनाएं बनाई गयी।

सन् 1572 में एलिजाबेथ क्वीन ने गरीबों की सहायता देने के लिए एक सामान्य कर लगा दिया।

सन् 1576 में सुधार गृह बनाये गये जहां पर पुष्ट शरीर वाले व्यक्तियों, विशेषकर युवकों को काम करने के लिए बाध्य किया जाता था।

धनहीनों के लिए 1601 में कानून बना जो 43 एलिजाबेथश के नाम से जाना जाता था।

इस कानून द्वारा साधन विहीनों को 3 वर्गों में विभाजित किया गया– 1. पुष्ट शरीर वाले निर्धन, 2. शक्ति विहीन निर्धन एवं 3. आश्रित बच्चे।

1. पुष्ट शरीर वाले निर्धन

ऐसे लोगों से सुधार गृह अथवा कार्यशाला में काम लिया जाता था। नागरिक इनको भिक्षा नहीं दे सकते थे, जो भिक्षुक काम करने से इंकार कर देता था, उसे कारागार में डाल देते थे।

2. शक्ति विहीन निर्धन

ये लोग काम करने में असमर्थ थे, इस श्रेणी में रोगी, वृद्ध अंधे, बहरें, गूंगे, लंगड़े, पागल और वे मातायें जिनके पास छोटे–2 बच्चे थे, माने जाते थे, ये निर्धन यदि अपने घरों में रहना चाहते थे, तो बाह्य सहायता का प्रबंधन किया जाता था, जो सामान्यतः खाना, कपड़ा, ईधन के रूप में होता था।

3. आश्रित बच्चे

ये अनाथ पितृहीन तथा ऐसे बच्चे होते थे जिनको उनके माता–पिता ने त्याग दिया, अथवा वे इतने गरीब थे कि उनकी सहायता नहीं कर सकते थे। ऐसे बच्चे उन नागरिकों को दे दिये जाते थे, जो उनको रखना चाहते थे। 1601 का कानून अत्यंत महत्वपूर्ण था, क्योंकि इसने सरकार के लिए एक उत्तरदायित्व सौंप दिया कि उन लोगों की सहायता करना सरकार का उत्तरदायित्व है।

सन् 1662 में सेटेलमेन्ट कानून बनाया गया।

सन् 1795 में 1662 के कानून का पुनः संशोधन किया गया।

सन् 1996 में कर्मशाला कानून के बन जाने के बाद ब्रिस्टल एवं अन्य शहरों के कार्यशालाओं ने वहां के निवासी प्रौढ़ों एवं बच्चों को कताई, बुनाई सन से बने वस्त्र की बुनाई, गोटर किनारी की कला एवं जाती तथा पालों के उत्पादन की शिक्षा तथा प्रशिक्षण देना प्रारम्भ किया।

सन् 1767 में 6 वर्ष से कम आयु के सभी बच्चों को कार्य गृहों से हटा देने और उन्हें पोषक परिवारों में रखने की व्यवस्था की गयी।

सन् 1795 में स्पीनहम लैण्ड कानून बनाया गया।

सन् 1832 में निर्धन कानूनों के प्रशासन तथा व्यावहारिक कार्यविधि संबंधी जांच करने के लिये एक राजकीय आयोग बनाया गया।

इस आयोग में निम्न सिफारिशें की–

1.स्पीनहम लैण्ड तरीके के अंतर्गत दी जाने वाली ष्आंशिक सहायताष् को समाप्त किया जाय।

2.सहायता चाहने वाले समी प्रार्थियों को कार्यग्रहों में रखा जाय।

3. केवल रोगी, अशक्त एवं नवजात शिशुओं सहित विधवाओं को ही वाह्य सहायता दी जाय।

4. विमिन्न पैरिशों के सहायता संबंधी प्रशासन का एक श्निर्धन कानून संघ के रूप में समन्वय हो।

5. निर्धन सहायता प्राप्त करने वालों की स्थिति समुदाय में निम्न वेतन पाने वाले मजदूरों की तुलना में कम हो।

6. नियंत्रण के लिए केन्द्रीय परिषद की स्थापना की जाय।

इन्हीं सिफारिशों के आधार पर सन् 1834 में नवीन निर्धन कानून पास किया गया।

सन् 1834 के नवीन निर्धन कानून से भी आशातीत सफलता प्राप्त नहीं हुई।

सन् 1847 में निर्धन कानून कमीशन के स्थान पर निर्धन कानून बोर्ड गठित किया गया, जिसका कार्य निर्धनता के कारणों तथा सामाजिक सुधार के प्रभावशाली साधनों के लिए किये गये अन्वेषणों का निरीक्षण करना था।

सन् 1869 में हेनरी सोली ने वैयक्तिक एवं सार्वजनिक परोपकारी समितियों की कार्यविधियों के बीच समन्वय करने के लिए परोपकारी कल्याण संगठन एवं भिक्षावृत्ति उन्मूलन समिति की नींव डाली जिसे बाद में दान संगठन समिति (बिंतपजल व्तहंदपेंजपवद ैवबपमजल) के नाम से जाना जाने लगा। समिति ने स्वीकार किया कि व्यक्ति अपनी निर्धनता के लिए स्वयं जिम्मेदार है।

समिति का विचार था कि सभी निर्धनों को उनके निर्वाह के लिए पहले अपनी स्वयं की सभी सम्भव क्षमताओं को काम में लाने को कहा जाय । इस कार्य के लिए समिति ने एक जांच विभाग की स्थापना की, जो निर्धन कानून संरक्षकों, उपकारी समितियों तथा व्यक्तिगत मानव प्रेमियों को सहायता चाहने वाले प्रार्थियों के संबंध में जानकारी देते थे।

दान संगठन समितियों के दो मुख्य कार्य थे–

(1)व्यक्ति का वैयक्तीकरण तथा वैयक्तिक समाजकार्य का उपयोग

(2) व्यक्ति का सामाजीकरण तथा सामूहिक संस्थाओं तथा सामुदायिक संगठन का उपयोग

उस समय के सामाजिक दर्शन के अनुसार निर्धनता का कारण चरित्र दोष है, समिति का दृढ़ विश्वास था कि निर्धनता का उत्तरदायित्व सामाजिक व्यवस्था पर है, इसीलिये सी.एच. लोच ने ठववजी की वृद्धावस्था पेंशन 5 शिलिंग प्रति सप्ताह का विरोध किया उन्होंने अपना मत प्रगट किया कहा कि जिन्हें यह धन मिलेगा वे शीघ्र और ज्यादा निर्धन हो जायेंगे।

दान संगठन समिति के शमित्र अभ्यागत तथा सामाजिक कार्य कर्ताओं के विचार में भी यही आया कि इस समस्या का समाधान क्रमागत होना चाहिये।

प्रथम वार्षिक रिपोर्ट में यह कहा गया कि जिला कमेटियों को यह अनुभव हुआ कि सुधार स्वच्छता में सुधार, शिक्षा, प्रोवीडेन्ट, सोसाइटीज तथा निर्धनों के लिए आवास दशाओं में तथा अन्य कारकों पर ध्यान देना परम आवश्यक है।

कैनन वारनेट ने सन् 1873 में लंदन में निर्धनों के बीच रहकर यह अनुभव किया कि जीवन की निर्धनता को तभी दूर किया जा सकता है, जब जीवन की उच्च सुविधायें रखने वाले लोगों से इसका सम्पर्क हो। वारनेट ने हाइट चौपेल में विश्व का प्रथम व्यवस्था गृह बनाया। इसके तीन उद्देश्य थे–

1. निर्धनों का शैक्षिक एवं सांस्कृतिक विकास करना।

2. निर्धनों की दशाओं एवं सामाजिक सुधार की अत्यंत आवश्यकता के संबंध में छात्रों का व्यवस्था गृह के अन्य निवासियों को जानकारी देना।

3. सामाजिक तथा स्वास्थ्य समस्याओं का निराकरण।

कैनन वारनेट ने अनुभव किया कि व्यक्ति की शक्ति को अधिक शक्तिशाली समूह में ही बनाया जा सकता है।

(II) सामुदायिक सेवायें – दान संगठन समिति ने आवासीय सुधार पर ध्यान दिया स्वच्छता सहायक कमेटी बनायी गयी, इसके द्वारा रोगों को रोकने का प्रबंध किया गया। सन् 1886 में बीमार तथा अपंग बच्चों के लिए अपंग बालकों का सहायता संग (Invalid Children's Aid Association) बनाया गया।

सन् 1895 में मिस स्टेवार्ट को रॉयल फ्री हॉस्पिटल में अलमोनर के रूप में नियुक्त किया गया। इसी व्यवस्थायें चिकित्सीय सामाजिक कार्य को जन्म दिया।

सन् 1906 में भोजन का प्रावधान अधिनियम पास किया गया। इसके द्वारा विद्यालय में निःशुल्क स्वल्पाहार की सुविधा प्रदान की गयी।

सन् 1842 में औद्योगिक वर्गों की आवास व्यवस्था में सुधार लाने के लिए नगर क्षेत्र संघ, लंदन में स्थापित किया गया।

सन् 1864 में ओक्टाविया हिल ने लंदन में गंदी बस्तियों में पुनर्निर्माण की मानवतावादी योजना प्रारंभ किया।

सन् 1865 में श्कामन्स समाजश की स्थापना की गयीं। इस समाज ने लंदन के विभिन्न क्षेत्रों में मनोविनोद सुविधाओं पार्को तथा उद्यानों की व्यवस्था की।

सन् 1844 में चाटिस्टो ने रोचडेल में सबसे पहला सहकारी भंडार खोला जिसके मालिक स्वयं मजदूर ही थे।

सहकारी उपभोक्ता भंडारों का प्रारंभ कर मानवतावादी रावर्ट ओवेन ने अपने कपड़े की मिलों में एक उदाहरण प्रस्तुत किया। उन्होंने एक आदर्श औद्योगिक समुदाय की स्थापना की जहां पर कम कीमत वाटिकाओं, स्वच्छता एवं क्रीड़ास्थलों से सुसज्जित स्वास्थ्यप्रद आवास सुविधाओं मजदूरों तथा उनके परिवारों के लिए पुस्तकालय एवं मनोविनोद की सुविधाओं की व्यवस्था की थी।

(iii) श्रम कल्याण

19वीं शताब्दी के पूर्व जमींदारों, उत्पादकों तथा व्यापारियों द्वारा श्रमिक वर्ग का दमन एवं शोषण किया जाता था।

सन् 1802 में स्वास्थ्य एवं सदाचार कानून बनाया गया। इस कानून के अनुसार अकिंचन भिक्षुकों व प्रशिक्षार्थियों के काम करने के लिए 6 बजे प्रातः 9 बजे रात के बीच दिन भर में 12 घण्टे निश्चित कर दिये गये।

सन् 1833 में कारखाना अधिनियम पास किया, जिसमें कपड़े के कारखाने में 9 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को काम करना वर्जित कर दिया।

सन् 1847 में थ्बजवतल बज सुधार ने औरतों तथा 18 वर्ष से कम बच्चों के लिए प्रतिदिन अधिक से अधिक काम करने के 10 घण्टे का आदेश जारी किया गया। स्वच्छता, कम किराये वाली आवास योजना तथा बच्चों के लिए सामान्य शिक्षा व्यवस्था द्वारा स्वास्थ्य रक्षा का प्रयास किया गया।

(iv) सुधारात्मक कार्य

श्रीमती एलिजाबेथ फ्राई (Fry) जेल सुधार प्रयासों की श्रेणी में एक महत्वपूर्ण महिला थी, जिन्होंने जेल के अंदर ही बच्चों के लिए एक विद्यालय की शुरूआत कराने में सफलता प्राप्त की और अपराधी औरतों में से एक अध्यापिका को नियुक्त किया।

सन् 1912 में Children's Actपास हुआ जिसके अंतर्गत बाल अपराधियों के सुधार के उददेश्य से उनके प्रोवेशन सेवाओं का प्रावधान किया गया।

सन् 1950 में दूसरा बाल अधिनियम पास किया गया। सन् 1844 में जार्ज विलियम नामक वस्त्र विक्रेता ने युवकों तथा युवतियों को ईसाई जीवन पद्धति पर चलने की प्रेरणा दी और इस उद्देश्य पूर्ति के लिए युवक पुरूष ईसाई संघ की स्थापना की।

सन् 1860 में एक चर्च महिला समूह श्डैश अके क्लबश की स्थापना कनेक्टीकर में की गयी। इस प्रकार से बालकों के खेलकूद, संगीत, नृत्य, नाटकीय क्रियाओं तथा मनोविनोद का पूरा प्रबंधन था।

(अ) सामूहिक कार्य की स्थिति

उन्नीसवीं शताब्दी में सामूहिक कार्य उद्देश्य प्रारूप पर आधारित था, अर्थात् इसका मुख्यउद्देश्य सामाजिक चेतना तथा सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना का विकास करना था। सन् 1920 के बाद इसका उपयोग व्यक्ति में परिवर्तन तथा विकास के लिये किया जाने लगा, जिससे सामूहिक चिकित्सा पद्धतियों का विकास हुआ। इंग्लैण्ड में सामूहिक कार्य का विकास अमरीका के बाद में हुआ।

द्वितीय विश्वयुद्ध के समय पहली बार शिक्षा मंत्रालय द्वारा युवा सेवाओं के रूप में सामूहिक कार्य को मान्यता प्राप्त हुई जिसके द्वारा खाली समय की सेवायें तथा अनौपचारिक शिक्षा देने का काम प्रारम्भ हुआ। युवाओं के प्रशिक्षण में सामूहिक कार्य का ज्ञान कराया जाने लगा।

सन् 1960 तक सामूहिक कार्य विषय की शिक्षा अपर्याप्त थी लेकिन उसके बाद सभी समाज कार्य के विद्यालयों में इसकी शिक्षा दी जानी चाहिए।

(ii) अमेरिका में सामाजिक सामूहिक कार्य का विकास

इंग्लैण्ड के एलिजाबेथ कानून के आधार पर ही अमरीका में भी ओवरसियरों तथा सुपरवाइजरों की नियुक्ति सन् 1961 में पैरिशों अथवा टाउनशिप के लिए की गयी।

ये लोग वहां के निवासियों से निर्धानता कर वसूल करते थे तथा सहायता के लिए आवेदन पत्र देने वालों की जांच पड़ताल करते थे। निर्धन सहायता 2 प्रकार से की जाती थी।

1. निर्धनों के घर पर ही श्बाह्य सहायताश वस्तुओं के रूप में जैसे भोजन, वस्त्र ईंधन आदि।

2. उनके भरण–पोषण के लिए विक्रय। सशक्त व्यक्तियों के भरण–पोषण के लिए खेती के कार्य के लिए उन्हें बेच दिया जाता था।

अशक्त निर्धनों के लिए पहला भिक्षा गृह सन् 1657 में रेने ऐलयर्सवाइक न्यूयार्क में स्थापित किया गया। सन् 1658 में प्लाईमाउथ कालोनी में सशक्त निर्धनों के लिए एक ूवतीवनेम खोला गया। अन्य नगरों में भी इसी प्रकार मिक्षागृह तथा कार्यगृह खोले गये। मैसाचूसेट्स के विधान मण्डल ने सन् 1699 में आवारा भिखारी और अव्यवस्थित लोगों कोसुधार गृहों में रहने तथा काम करने से संबंधित कानून बनाया।

कनेक्टीकट में काउन्टी जेलों का संगठन सन् 1713 में सुधार गृहों की भांति किया गया। सन् 1713 में फिलेडेल्फिया में सबसे पहला निर्धन फार्म बनाया गया।

सन् 1821 में मैसाचूसेट्स के सामान्य न्यायालय ने निर्धन कानूनों के विषय में खोज करने की एक समिति बनायी। इस समिति के अध्यक्ष जोसियाह क्वेन्सी थे, उन्होंने निम्न सुझाव प्रस्तुत किये–

1. निर्धनों के घर पर ही बाह्य सहायता वस्तुओं के रूप में,जैसे– भोजन, वस्त्र, ईंधन इत्यादि।

2. उनके भरण–पोषण के लिए विक्रय।

3. 'अनाथालय' एक प्रकार से कल्याण का सर्वाधिक सस्ता तरीका था क्योंकि एक उद्योगगृह में प्रत्येक निर्धन को उसकी सामर्थ्य देखते हुये काम में लगाया जाता था।

4.निर्धनों को कृषि कार्य में भी लगाना आवश्यक था।

5.एक नागरिक परिषद द्वारा इन अनाथालयों का निरीक्षण आवश्यक होना चाहिये।

6.असंयम निर्धनता को बहुत ही प्रभावपूर्ण और सार्वभौमिक कारण माना जाना चाहिए।

सन् 1823 में न्यूयार्क में J.V.N.Yates को निर्धन कानून की कार्य प्रणाली और व्यय संबंधी एकत्र करने का निर्देश दिया गया।

Yates Report में निर्धनों को 2 वर्गों में विभक्त किया गया वे जिन्हें स्थायी सहायता प्राप्त हो रही थी और दूसरे अस्थायी निर्धन। येट्स रिपोर्ट ने निम्न संस्तुति की–

1. प्रत्येक काउन्टी में एक रोजगार गृह की स्थापना की जाय जो बच्चों की शिक्षा और कृषि कार्य के लिए भूमि प्रदान करें।

2. सशक्त निर्धनों तथा आवारा लोगों के लिए एक कार्यगृह (सुधारगृह) उपलब्ध किया जाय।

3. निर्धन कल्याण के लिए धनराशि प्राप्त करने के उद्देश्य से शराब कारखानों पर उत्पादन कर लगाया जाय।

4. न्यूयार्क के एक काउन्टी में एक वर्ष के निवास से वैधानिक वंदोबस्त करने का नियम बनाया जाय।

5. निष्कासन आदेशों और निर्धन कानून मुकदमों की अपील करने की व्यवस्था समाप्त की जाय।

6. 18–50 वर्ष के बीच की आयु दाले किसी भी दुष्ट–पुष्ट को निर्धनों की श्रेणी की सूची में न रखा जाय।

7. गलियों में भीख मांगने और राज्य के अंदर शारीरिक रूप में वांछित (destitute) को लाने पर दण्ड दिया जाय।

Yates की रिपोर्ट के आधार पर मैसाचूसेट्स, न्यूयार्क तथा संघ के कई राज्यों में अनाथालयों और कार्यग्रहों की स्थापना की गयी। इस रिपोर्ट के तुरंत बाद 1824 में न्यूयार्क ने काउन्टी निर्धन ग्रह कानून पास किया जिसके अनुसार अनाथालय का प्रबंधन कार्य टाउनशिप से काउन्टी को हस्तांतरित कर दिया गया।

19वीं शताब्दी में विकलांगों के लिए अनेक राजकीय संस्थाओं की स्थापना हुई।

सन् 1873 में आर्थिक संकट के समय लन्दन दान संगठन संस्था के कार्य के प्रति जनता में अपनी रूचि का प्रदर्शन किया 1877 में छनलंता में दान संगठन ैवबपमजल की स्थापना हुई, दान संगठन समिति के प्रमुख सिद्धांत निम्न थे–

1. सभी स्थानीय दान संस्थाओं में उनके ही प्रतिनिधियों के एक परिषद की देख–रेख में सहयोग स्थापित करना।

2. कार्य की पुनरावृत्ति छलकपट तथा धन की बर्बादी रोकने के लिए एक केन्द्रीय श्गुप्त रजिस्टर तैयार करना।

3. प्रत्येक व्यक्तिगत मामले में आवश्यकता एवं आवश्यक व्यक्तिक उपायों का निर्धारण करने के उद्देश्य के लिए एक– एक मित्र अभ्यागतों द्वारा प्रत्येक सेवार्थी का सामाजिक अनुसंधान करवाना।

दान संगठन समिति के निम्न कार्य थे–

1. परिवार जो आत्म–निर्भर नहीं थे उनका पुनःस्थापित करना।

2. सहायता के उचित सिद्धांतों के विषय में समुदाय को शिक्षित करना।

3. गरीबी के कारणों के उन्मूलन में सहायता करना।

युवाओं के साथ कार्य करने का युग

इंग्लैण्ड में जार्ज विलियम द्वारा स्थापित वाई.एम.सी.ए. (Young Men's Christian Association) की सफलता को देखते हुए अमेरिका में भी जे.वी. सुलीवान ने वास्टन में सन् 1851 में वाई.एम.सी.ए. की आधार शिला रखी। 1866 में लुक्रेटिया बोयड ने Young Women's Christian Association की नींव डाली।

सन् 1910 में American Boy Scout संगठित किया गया। सन् 1911 में Camfire Firls तथा सन् 1912 में Girls Guide को बनाया गया।

इन सभी युवा संगठनों का उद्देश्य युवाओं का सर्वोमुखी विकास करना था।

(ii) जरूरतमंद लोगों के साथ रहने तथा काम करने का युग

संयुक्त राज्य में पहुंचने वाले अप्रवासियों की स्थिति अत्यंत सोचनीय थी। ट्वायनवी हाल की स्थापना ने इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। इस सिफारिश पर स्टैग्लन क्वाइट तथा

चार्ल्स वी.स्टीवर पहले अमरीकी व्यक्ति थे जिन्होंने इस व्यवस्था को अमेरिका में लागू किया।

उन्होंने 1857 में न्यूयार्क सिटी में Neighbourhood Guid की स्थापना की तत्पश्चात इसने विश्वविद्यालय अन्दोवस्त आवास का रूप लिया।

शिकागो में hull house बनाया गया। इसकी Uhao Jane Adams तथा (Alien Gates) ने डाली।

Nuyark में सन् 1889 में महिलाओं के लिए कालेज सेटेलमेंट सन् 1892 में वोस्टन में तथा 1894 में शिकागो कामर्स की स्थापना हुई। 1894 में न्यूयार्क में हेनरी स्ट्रीट सेटेलमेंट की नींव डाली गयी।

सेटेलमेंट के निवासी सामाजिक सुधार तथा सामूहिक कार्य के क्षेत्र में अग्रगामी सिद्ध हुए। सेंटलमेंट हाउसेस द्वारा शिक्षा तथा रहने व कार्य करने की दशाओं में सुधार करने पर बल दिया गया।

उड्स तथा केनैडी (Woods & Kennedy) जिन्होंने कई वर्षों तक इंग्लैण्ड में सेटेलमेंट हाउस का अनुभव प्राप्त किया था, उन्होंने सेटेलमेंट को उद्देश्य दूसरे समूहों संस्थाओं से भिन्न है।

आज इन सेटेलमेंट हाउसों का उद्देश्य पड़ोस के सामाजिक विचारों में परिवर्तन करना है। सेटेलमेंट व्यवस्था ने सामूहिक कार्य के विश्राम में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

डॉ. जान इलियर ने 20 वर्षों से सेटेलमेन्ट हाउसेस के अनुभव के बाद सन् 1915 में सामाजिक चेतना पर बल दिया और कहा कि लोगों की सहायता केवल इसलिए ही नहीं करनी चाहिए कि वे स्वयं अपनी सहायता करने में समर्थ हों बल्कि इसलिए करनी चाहिए कि वे अपने लिए स्वतंत्रता प्राप्त कर सकें।

सेटेलमेंट के वही उद्देश्य है जो आज सामाजिक सामूहिक कार्य के उद्देश्य हैं–

1. पड़ोस के लोगों की इस प्रकार से सहायता करना जिससे वे ऐसा रहना सीखें कि उससे सामाजिक संबंधों में बढ़ोत्तरी एवं वृद्धि के लिए एक दूसरे की प्रोत्साहन प्राप्त हों।

2. ऐसे नेतृत्व की खोज एवं उसका विकास करना जो सभी जातियां धर्मों तथा सभी राष्ट्रीयता के लोगों की समान रूप से भलाई किए कार्य कर।

3. एक–दूसरे के प्रति नागरिकता के उत्तरदायित्व को पूरा करने में लोगों की सहायता करना।

सन् 1922 में रावर्ट वुड्स ने सेटेलमेंट के शिक्षा संबंधी उद्देश्यों को स्पष्ट किया। उन्होंने कहां कि सेटेलमेंट का पूरा कार्यक्रम शिक्षात्मक होना चाहिए।

सन् 1931 मे मिस्र हेलेन हार्ट जो किग्सले हाउस, पिग्सवर्ग की निदेशक थी उन्होंने कहा कि सेटेलमेंट का उद्देश्य सामूहिक संबंधों द्वारा व्यक्तित्व विकास होना चाहिये।

(iii) सामाजिक समूह कार्य के कार्यक्रम

अमेरिका में सा. सामूहिककार्य का विकास पिछले 50 वर्षों में हुआ। प्रारंभ में इसका स्वरूप केवल मनोरंजनात्मक था और उन्हीं क्रियाओं के फलस्वरूप उनसे परिवर्तन होकर सामूहिक कार्य का रूप प्रकट हुये तथा इसमें जो संगठन एवं संस्थायें कार्य करती थी उनके उद्देश्यों में धीरे–धीरे परिवर्तन आया।

आज इन संस्थाओं एवं संगठनों के कार्यक्रमों को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है–

(1) वे कार्यक्रम जिनके द्वारा पूर्णरूपेण मनोरंजन तथा शिक्षात्मक क्रियाओं को सम्पन्न किया जाता है, इनमें प्रौढ़ शिक्षा, विद्यालय तथा विश्वविद्यालय प्रसार इत्यादि प्रमुख है।

सन् 1866 में प्रथम बाल खेल मैदान बना। इसका महत्व इतना अधिक समझा गया कि सन् 1885 में राष्ट्रीय स्तर पर इस ओर प्रयास प्रारंभ हुआ।

19वीं शताब्दी के मध्य प्रौढ़ शिक्षा की आवश्यकता अनुभव हुई और सन् 1870 व 1880 के मध्य प्रौढ़ शिक्षा आंदोलन चलाया गया।

(2) दूसरे प्रकार के संगठनों का कार्य मनोरंजनात्मक तथा शिक्षा संबंधी क्रियाओं द्वारा व्यवहार को आशातीत प्रभावित करना है। यह दो रूपों में संभव होती है। किशोरी (9–17 years) के लिए कार्यक्रम को चरित्र निर्माण के रूप में तथा युवकों धार्मिक, सांस्कृतिक, सा. विकास करने के साधन के रूप में।

सन् 1875 में तथा 1895 के मध्य प्रत्येक बड़े प्रोटेस्टेन्ट समुदाय ने अपना युवक कार्यक्रम संगठित किया।

(3) तीसरे प्रकार के वे संगठन है, जिनका मनोरंजन तथा शिक्षा के अतिरिक्त अन्य उद्देश्यों की पूर्ति करनी है।

(4) चौथे प्रकार के वे संगठन है जिनमें मनोरंजन का उपयोग उपचार के रूप में किया जाता है, इन कार्यक्रमों को व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक तथा सांवेगिक व्याधियों से मुक्ति दिलाने व दर्जा बीमार हो गये।

(iv) व्यवसायिक सामूहिक कार्य का विकास

सन् 1935 में सा. कार्यकर्ताओं में व्यवसायिक चेतना जाग्रत हुई। 1935 में सामूहिक कार्य के उद्देश्यों को एक लेख के रूप में समाज कार्य की राष्ट्रीय कान्फ्रेंस में प्रस्तुत किया गया। सन् 1837 में ग्रेस क्वायल ने लिखा कि ष्सामाजिक सामूहिक कार्य का उद्देश्य सामूहिक स्थितियों में पारस्परिक किया द्वारा व्यक्तियों का विकास करना तथा ऐसी सामूहिक स्थितियों को उत्पन्न करना जिससे समान उद्देश्यों के लिए एकीकृत, सहयोगिक, सामूहिक किया हो सके।

(अ) सामूहिक कार्य के प्रत्यय

बीसवीं शताब्दी के प्रथम तीन दशकों में सामूहिक कार्य के अनेक प्रत्यय उभर कर सामने आये। समूहों के साथ काम करने के संबंध में रेवी, जैम्स, फूले लिंडमैन तथा फोलेट के विचार प्रमुख थे।

हाटफोर्ड का विचार हैकि सन् 1930 तक समूह कार्य के तीन प्रमुख क्षेत्र थे–

1. व्यक्ति का मनुष्य के रूप में विकास तथा सामाजिक समायोजन करना।

2. ज्ञान तथा निपुणता में वृद्धि द्वारा व्यक्तियों की रूचियों में बढ़ोत्तरी करना।

3. समुदाय के प्रति उत्तरदायित्व की भावना विकसित करना।

सन् 1940–1950 के मध्य फ्रायड के मनोविश्लेषण का प्रभाव समूह कार्य व्यवहार में आया। द्वितीय विश्वयुद्ध में चिकित्सकीय तथा मनोचिकित्सकीय समूह कार्य को जन्म दिया।

सन् 1950 के बाद से समूह कार्य की स्थिति में काफी परिवर्तन आये हैं। सामाजिक, बौद्धिक, आर्थिक, प्रौद्योगिक परिवर्तनों ने समूह कार्य व्यवहार को प्रभावित किया है।

इसलिये सामाजिक कार्यकर्ताओं ने समूह कार्य के 3 प्रारूप (Models) तैयार किये हैं– 1. उपचारात्मक प्रारूप (Remedial Model), 2. परस्परात्मक प्रारूप (Reciprocal Model) एवं 3. विकासात्मक प्रारूप (Developmental Model)।

प्रथम प्रारूप का विकास विंटर ने किया। दूसरे का स्कदारट तथा तीसरे का वेस्टीन ने किया है। ये तीनों प्रारूप आज उपयोग में लाये जाते हैं।

भारत में सामाजिक सामूहिक कार्य का ऐतिहासिक विकास

भारत में सामाजिक सामूहिक कार्य का विकास

सामाजिक सामूहिक कार्य समाज कार्य की एक प्रणाली है जिसका इतिहास समाज कार्य के इतिहास के साथ ही देखा जा सकता है। भारत में समाजकार्य के विकास तथा उसका एतिहासिक वर्णन मजूमदार मेहता, गोरे, राजाराम शास्त्री, पाठक आदि सामाजिक कार्यकर्ताओं ने अपने–अपने लेखों द्वारा किया है। भारतीय साहित्य में सामाजिक सुधार तथा सामाजिक सामूहिक कार्य का स्पष्ट चित्रण 19वीं शताब्दी में विशेषकर राजाराम मोहन राय के समय से प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त मुस्लिम तथा मराठों के समय का साहित्य भी यदा कदा प्राप्त होता है। लेकिन प्राचीन ग्रंथों के आधार पर उस समय की अवस्था को जानकर ज्ञात होता है कि भारत में सामूहिक कार्य की जड़ें बहुत मजबूत है।

(1) प्राचीनकाल – प्रो. शास्त्री ने वैदिक काल की सामुदायिक समाज की व्यवस्था का वर्णन करते हुये लिखा है कि इस अवस्था में समुदाय के प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताओं को पूरा करने का उत्तरदायित्व प्रत्येक व्यक्ति का था, व्यक्ति की आवश्यकताओं को सामूहिक रूप से पूरा किया जाता था। इस काल में विशिष्ट सहायता की आवश्यकता रखने वाले व्यक्तियों का उत्तरदायित्व शासक धनी तथा साधारण समुदाय के सदस्यों द्वारा आपस में बांट लिया जाता था। सहायता का कार्य धार्मिक माना जाता था। यह कार्य

मंदिरों और आश्रमों की स्थापना संत महात्माओं के लिए आवाज स्थलों का निर्माण, मंदिरों में रहने वालों के लिए भोजन, कपड़े तथा अन्य वस्तुओं की पूर्ति आदि द्वारा किया जाता था। गृहहीनों को मंदिरों में रहने की अवस्था थी। वृद्धों बीमारों तथा समुदाय के अन्य आश्रमहीन वर्गों की आवश्यकता पूरी करने के लिए सामाजिक संस्थाओं में व्यवस्था होती थी। सहायता की आवश्यकता रखने वाले व्यक्तियों का भार जाति और समुदाय परिषदों पर था। सामूहिक सहायता की परम्परा भी मठो तथा मन्दिरों में चलती थी संघ तथा गण शब्द ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में सामूहिकता के बोधक थे। संघ का नाम बौद्ध भिक्षुकों ने अपनाया जो अपने आपको सामूहिक रूप से भिक्षु संघ कहते हैं पौराणिक कथाओं से पता चलता है कि उस समय दो प्रकार की सन्यासी बस्तियां थीं (1) आवास, (2) आराम। बस्ती जो गांव के बाहर थी जिसे भिक्षु स्वयं बनाते थे उसकी मरम्मत करते थे उसे आवास कहा जाता था, जब कोई धनी व्यक्ति इन भिक्षुकों को दान में देता था तथा उसकी स्वयं देखभाल करता था उसे आराम कहते थे।

बोधिसत्व ने मगध में युवावस्था में ही गांव के तीस व्यक्तियों को एकत्रित किया और उनको जनता की भलाई के लिए कार्य करने की प्रेरणा दी। उन्होंने सड़कें बनवाई मार्ग समतल किये, बांध बनवाये तथा तालाब खुदवाये। मौर्यकाल में भी जनता की भलाई के लिए अनेक कार्य किए गए।

(2) सामाजिक सुधार कार्यक्रम रू अठारहवीं शताब्दी में सामाजिक सुधार में अनेक सामूहिक प्रयास किये, सन् 1780 में बंगाल में सेरामपुर मिशन की स्थापना हुई। धर्म प्रचारकों का दृढ़ विश्वास थाकि हिन्दू सामाजिक ढांचे में विशेषकर बालविवाह, बालिकाओं की हत्या, सतीप्रथा और विधवा विवाह के क्षेत्रों में सामाजिक सुधार लाना अति आवश्यक है।

राजाराममोहनराय ऐसे प्रथम भारतीय थे जिन्होंने सामाजिक बुराइयों के सुधार की ओर अपना ध्यान आकृष्ट किया, उन्होंने जाति बंधनों तथा सती प्रथा के उन्मूलन के लिये अनेक प्रयास किये। सामाजिक सुधार के लिए उन्होंने सन् 1828 में ब्रम्ह समाज की स्थापना की। ब्रम्ह समाज ने दुर्भिक्ष बालिकाओं के लिए शिक्षा, विधवाओं की स्थिति में सुधार जाति बंधनों के उन्मूलन और बुद्धि तथा संयम को उत्साहित करने के अनेक कार्य किये। इन सभी समाज सुधार के कार्यों में सामूहिक कार्य का प्रयोग किया जाता था। केशवचन्द्र सेन ने सन् 1883 में स्त्री शिक्षा पर विशेष बल दिया। ईश्वर चन्द्र विद्यासागर ने हिन्दू विधवा पुनर्विवाह के लिए आन्दोलन चलाया। न्यायाधीश रानाडे ने सन् 1861 में विधवा विवाह संघ की स्थापना की।

आर्य समाज जो एक महत्वपूर्ण समाज सुधार का आन्दोलन था उसकी नींव सन् 1877 में स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा बम्बई में डाली गई। इस आन्दोलन ने सामूहिक कार्य के सिद्धान्त तथा प्रविधियों का उपयोग करते हुए जाति प्रथा, बाल विवाह, धर्म परिवर्तित लोगों के लिए गृह प्रवेश निषेध नीति आदि के विरोध में आवाज उठायी। स्वामी विवेकानन्द ने सन् 1897 में रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। इस मिशन का उद्देश्य दलित व्यक्तियों की सेवा तथा सामजिक शैक्षिक विकास लाना था। सन् 1889 में मैडम बलास्की तथा कर्नल भालकाट ने मद्रास में ब्रम्हवाद समाज की स्थापना की श्रीमती एनीवेसेंट ने अपना सारा जीवन उसी में लगा दिया।

बम्बई में लोकाडे द्वारा श्रम कल्याण कार्य प्रारम्भ किया गया। सन् 1867 में प्रार्थना समाज की स्थापना की गयी। कार्वे भंडारकर चिन्तामणि, नरेन्द्रनाथ सेन आदि व्यक्तियों ने सामूहिक कार्य विधि का उपयोग करते हुए समाज सुधार कार्यक्रमों को आगे बढ़ाया। तिलक तथा गोखले ने भी इस दिशा में महत्व पूर्ण कार्य किया। सन् 1882 में रामबाई ने आर्य महिला समाज को स्थापना की। सन् 1887 में शशिपद बनर्जी द्वारा बंगाल में हिन्दू विधवाओं के लिए एक विधवा गृह की नींव डाली गयी कार्वे ने 1896 में पूना शहर में विधवा गृह की स्थापना की। सन् 1892 में युवा सुधारकों ने मद्रास में मद्रास हिन्दू समाज सुधार संघ की स्थापना की। सन् 1905 में गोखले द्वारा सर्वे आफ इंडिया सोसायटी की नींव डाली गयी।

सन् 1906 में वी.आर. शिन्दे द्वारा भारत दलित वर्ग मिशन समाज की स्थापना बम्बई में की गई। इस संस्था का उद्देश्य शिक्षा का प्रसार करना था । बम्बई संघ ने 1908 में सेवा सदन की स्थापना की। इस संगठन का उद्देश्य महिला कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करना चिकित्सा सम्बन्धी सहायता तथा कार्यशालायें चलाना था।

समाज सेवा सम्मेलन की पहली बैठक 1917 में हुई। 1917 में डा. एनी वेसेंट तथा मारगैरेट कासिव ने मद्रास में प्रांतीय महिला संघ की स्थापना की। सन् 1925 में राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं की राष्ट्रीय समीक्षा की गयी।

गांधी जी का स्वतंत्रता के लिए आन्दोलन केवल राज नैतिक न होकर समाज कल्याण से सम्बन्धित था। गांधी जी के आन्दोलन से समूह कार्य का आधुनिक प्रद्वय उभर कर सामने आया। सामूहिक कार्यकर्ता का उत्तरदायित्व है कि वह केवल सेवायें ही न प्रदान करे बल्कि संस्थागत संरचना में भी आवश्यक परिवर्तन करे। गांधी जी ने मानव महत्ता तथा गरिमा पर जोर दिया तथा विकास के लिए आत्म सम्मान को आवश्यक बताया। वे मूल्य सामूहिक कार्य के मूल्य हैं गांधी जी का दृढ़ विश्वास था कि दूसरों पर विचार थोपे नहीं जोड़ने चाहिये बल्कि स्वयं सहायता सबसे अच्छी सहायता है। गांधी जी ने चरखा तथा खादी का उपयोग आर्थिक आत्म निर्भरता के लिए किया। गांधी जी ने प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना की तथा आश्रम बनाये जहां पर लोगों को साथ–साथ काम करने का प्रशिक्षण दिया जाता था। गांधी जी स्वयं रोगियों, अछूतों ग्रामीणों आदि के बीच कार्य करते थे ये कार्य सामूहिक समाज कार्य तथा वैयक्तिक कार्य दोनों ही रूप में थे। गांधी जी सदैव दो मूल्यों में विश्वास रखते थे। व्यक्ति की महत्ता एवं समायोजन तथा उनमें परिवर्तन। यही दो सामूहिक कार्य के महत्वपूर्ण महत्व हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात मानसिक व शारीरिक विकास के लिए अनेक उपाय किये गये। बच्चों के चरित्र निर्माण के लिए एन.सी.सी., एन. एस. एस. गर्ल्स स्काउट आदि संगठन बने। युवकों से संबंधित राष्ट्रीय स्तर पर कार्य किये जाने लगे। समाज कल्याण निदेशालय एवं युवा कल्याण निदेशालय इस दिशा में प्रयत्नशील है नगरों में युवा कल्याण समितियां कार्य करती है। वाई.एम.सी.ए. तथा वाई.डब्ल्यू.सी.ए. वही भूमिका यहां निभा रही है जो अमेरिका तथा इंग्लैण्ड में अदा करती है। नौकरी करने वाली महिलाओं के रहने व मनोरंजन के लिए गृहों का निर्माण किया गया है। मानसिक मंद बालकों के लिए स्कूल खोले गये।

भारत स्काउट तथा गाइड्स आकिसालरी कैडेट कोर तथा नेशनल कैडेट कोर युवकों को . नेतृत्व का प्रशिक्षण देते हैं तथा उत्तरदाइत्व की भावनाओं का विकास करते है। राष्ट्रीय

सेवा योजना युवकों में व्यक्तित्व का समुचित विकास करने राष्ट्रीय पुनरुद्धार करने तथा श्रम के महत्व को समझाने के लिए चलाई गई है। श्रमिकों के लिए श्रम कल्याण केन्द्रों की स्थापना की गयी है। इन केन्द्रों परं स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन, सामाजिक शिक्षा मनोरंजनात्मक क्रियायें, क्राफ्ट शिक्षा आदि सेवायें प्रदाय की जाती है।

(iii) सामूहिक कार्य की शिक्षा

सामाजिक सामूहिक कार्य की शिक्षा समाज कार्य की शिक्षा के साथ ही प्रारम्भ हुई। सन् 1936 से सर दोरावजी टाटा ग्रेजुएट आफ सोसल वर्क बना। उसके उपरान्त सन् 1947–48 में डेलही आफ सोशल वर्क स्थापित हुआ। सन् 1949 में लखनऊ विश्वविद्यालय में समाज कार्य की शिक्षा प्रारम्भ हुई। उसके बाद लगातार समाजकार्य के विभाग खुलते गये आज 41 समाज कार्य के विभाग हैं जहां सामाजिक सामूहिक कार्य की शिक्षा दी जाती है। सन् 1960 में बड़ौदा स्कूल ने सामूहिक कार्य व्यवहार पर प्रथम अभिलेख तैयार किया। लेकिन भारत में सामाजिक सामूहिक कार्य अलग से शिक्षा नहीं दी जाती है। सामूहिक समाज कार्य को एक प्रणाली केरूप में समाजकार्य के कोर्स में ही पढ़ाया जाता है। इसमें अलग से विशेषीकरण नहीं है। सामूहिक कार्य का व्यवहारिक पक्ष अभी निर्बल है। यह व्यवसाय के रूप में अभी पनप नहीं पाया है। इसका अलग से अभी तक संगठन नही बन पाया है।

सामाजिक सामूहिक कार्य का अर्थ

सामाजिक सामूहिक कार्य समाज कार्य की एक प्रणाली है। जो सामूहिक क्रियाओं द्वारा रचनात्मक सम्बन्ध स्थापित करने की योग्यता का विकास करता है। विभिन्न सामाजिक विज्ञानों के विकास ने यह सिद्ध कर दिया है कि व्यक्तित्व के विकास के लिये व्यक्ति की सामूहिक जीवन सम्बन्धी इच्छाओं एवं आवश्यकताओं की सन्तुष्टि आवश्यक होती है। जहां एक ओर सामूहिक भागीकरण व्यक्ति के लिए आवश्यक होता है। वहीं दूसरी ओर भागीकरण से समुचित लाभ प्राप्त करने के लिए सामूहिक जीवन में भाग लेने, अपनत्व की भावना का अनुभव करने, अन्य व्यक्तियों से परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने, मतभेदों को निपटाने तथा अपने हितों तथा समूह के हितों को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नियोजित एवं संचालित करने की योग्यता होनी चाहिये। सामूहिक कार्य द्वारा इन विशेषताओं एवं योग्यताओं का विकास किया जाता है।

परिभाषा

हैमिल्स – ''सामाजिक सामूहिक कार्य एक मनो–सामाजिक प्रक्रिया है। जो नेतृत्व को योग्यता और सहकारिता के विकास से उतनी ही सम्बन्धित है, जितनी सामाजिक उद्देश्य के लिये सामूहिक अभिरूचियों के निर्माण से है।''

ट्रेकर–''सामाजिक सामूहिक कार्य एक प्रणाली है। जिसके द्वारा व्यक्तियों की सामाजिक संस्थाओं के अन्तर्गत समूहों में एक कार्यकर्ता द्वारा सहायता की जाती है। यह कार्यकर्ता कार्यक्रम सम्बन्धी क्रियाओं में व्यक्तियों के परस्पर सम्बन्ध प्रक्रिया का मार्गदर्शन करता है। जिससे वे एक दूसरे से सम्बन्ध स्थापित कर सकें और वैयक्तिक, सामूहिक एवं सामुदायिक

विकास की दृष्टि से अपनी आवश्यकताओं एवं क्षमताओं के अनुसार विकास के सुअवसरों को अनुभव कर सके।''

सामाजिक सामूहिक कार्य के सिद्धान्त

सामाजिक सामूहिक कार्य समाजकार्य की एक पद्धति है। इसीलिए समाज कार्य की भांति इसके भी कुछ सिद्धान्त है, जिनको पालन करना सामाजिक कार्यकर्ता के लिए आवश्यक होता है। इन सिद्धान्तों का अनुपालन ऐच्छिक नहीं होता, क्योंकि इन सिद्धान्तों को प्रयोग में लाये बिना लक्ष्यों को प्राप्त नहीं किया जा सकता है।

सामाजिक सामूहिक कार्य के निम्नलिखित आधारभूत सिद्धान्त हैं–

(1) नियोजन का सिद्धान्त नियोजन लक्ष्यों का आरोपण, उनकी पूर्ति के लिये साधनों की व्यवस्था और क्रियाओं के व्यवस्थित रूपों, जो सामान्य सामाजिक व्यवस्था से उत्पन्न है का प्रयोग है। नियोजन के अन्तर्गत विद्यमान स्थितियों तथा सम्भावित परिवर्तनों की उपयोगिता कोध्यान में रखकर एक व्यवस्थित तथा सुसंगटित रूपरेखा तैयार की जाती है। जिससे भविष्य के परिवर्तनों को अपेक्षित लक्ष्यों के अनुरूप नियंत्रित, निर्देशित तथा संशोधित किया जा सके।

(2) लक्ष्यों की स्पष्टता का सिद्धान्त

सामूहिक कार्यकर्ता के लिए स्पष्ट लक्ष्यों का ज्ञान कार्य पूर्णता के लिए आवश्यक होता है, क्योंकि लक्ष्य क्रिया के लिए सम्प्रेरक शक्ति है, जिनके आधार पर समूह आगे बढ़ता है तथा विकास की गति प्राप्त करता है।

लक्ष्यों की स्पष्टता निम्न कारणों से महत्वपूर्ण है–

(i) लक्ष्य की कार्यकर्ता का मार्गदर्शन करते हैं तथा अग्रसर होने के लिए प्रेरित करते हैं।

(ii) लक्ष्यों की स्पष्टता उपलब्ध साधनों का समुचित उपयोग करने पर बल देती है।

(iii) लक्ष्यों पर ही कार्यक्रम निर्भर होते हैं यदि वे स्पष्ट हैं तो कार्यक्रमों के चयन में परेशानी नहीं होती है।

(3) सोद्देश्य संबंध का सिद्धान्त

जीवन का आधार सम्बन्ध है। व्यक्ति सम्बन्ध स्थापित करके ही पशु स्तर की क्रियाओं से लेकर अति बुद्धिमता की क्रियायें करता हैं। वह आवश्यकताओं की संतुष्टि सम्बन्ध के माध्यम से करता है। अतः प्रत्येक सामाजिक स्थिति में सम्बन्धों का विशेष महत्व है। सामूहिक कार्य में कार्यकर्ता तथा समूह के बीच सम्बन्धों की घनिष्ठता होनी चाहिये तथा वे सम्बन्ध निश्चित उद्देश्यों पर आधारित हों। समूह के जो उद्देश्य निश्चित किये जाये उन्हीं के आधार पर संबंधों की स्थापना एवं विश्लेषण हो।

(4) निरंतर वैयक्तीकरण का सिद्धान्त

सामाजिक सामूहिक कार्य की यह मान्यता है कि समूह अनेक प्रकार के होते हैं और व्यक्ति उनका उपयोग विभिन्न तरीकों से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु करता है। परिणामस्वरूप कार्यकर्ता द्वारा वैयक्तीकरण का निरन्तर उपयोग करना आवश्यक होता है। समूह तथा समूहों में व्यक्तियों को विकास तथा परिवर्तन के रूप में सदैव समझा जाना चाहिए।

वैयक्तीकरण करने के लिए कार्यकर्ता में निम्नलिखित विशेषतायें होनी चाहिये–

1. अभिमत तथा पूर्वाग्रहों से स्वतंत्र

2. मानव व्यवहार का ज्ञान

3. सुनने तथा अवलोकन करने की क्षमता

4. सेवार्थी की भावनाओं को समझने की योग्यता

5. परिप्रेक्ष्य को बनाये रखने की योग्यता

(5) निर्देशित सामूहिक अंतःक्रिया का सिद्धान्त

सामाजिक सामूहिक कार्य में प्राथमिक शक्ति का स्त्रोत जो समूह की निपुणताओं में वृद्धि करती हैं तो व्यक्तियों को परिवर्तित हैं, अन्तःक्रिया या पारस्परिक प्रत्युत्तर ही है। सामूहिक कार्यकर्ता अपने भागीकरण द्वारा अन्तःक्रिया–प्रक्रिया को प्रभावित करता है। जिससे सदस्यों के व्यवहारों, विचारों एवं कार्य–विधियों में अन्तर आता है।

जब समूह में व्यक्ति एकत्र होते हैं तो अन्तःक्रिया का होना स्वाभाविक हो जाता है।

(6) जनतंत्रीय सामूहिक आत्म निश्चयीकरण का सिद्धान्त

सामाजिक सामूहिक कार्य में समूहों को अपना निर्णय लेने तथा क्रियाओं को निश्चित करने में सहायता करनी चाहिए। उसे अपनी क्षमताओं एवं योग्यताओं के अनुरूप अधिकतम उत्तरदायित्व ग्रहण करने के लिए तैयार करना कार्यकर्ता का कर्तव्य है। सामूहिक क्रियाओं के नियन्त्रण का मूल स्त्रोत समूह स्वयं है। यह सिद्धान्त इस तथ्य पर आधारित है कि समूह तथा व्यक्ति सामाजिक उत्तरदायित्वों का विकास तभी कर सकते हैं। जब उन्हें उत्तरदायित्व ग्रहण करने के अवसर उपलब्ध कराये जायें। लेकिन उत्तरदायित्व कितना और किस विधि से उन्हें दिया जाय, यह निश्चित करना कार्यकर्ता का उत्तरदायित्व होता है।

(7) लोचदार कार्यात्मक संगठन का सिद्धान्त

सामूहिक कार्य में कार्यकर्ता समूह का निर्देशन समूह संगठन के माध्यम से करता है, पहले वह समूह को संगठित करता है। तदुपरान्त उस संगठन के माध्यम से कार्यक्रम सम्पादित करता है, लेकिन उसका औपचारिक संगठन दूसरे प्रकार के समूह संगठनों से भिन्न होता है। कार्यकर्ता औपचारिकता को उतना ही महत्व देता है, जिससे आवश्यकताओं की पूर्ति होती है और कोई बाधा उत्पन्न नहीं होती अर्थात उसके संगठन में लचीलापन होता है। जिससे आवश्यकतानुसार परिवर्तन करना सम्भव होता है, इस सिद्धान्त के अनुसार समूह

का औपचारिक संगठन अनुकूलनात्मक होना चाहिये और समूह परिवर्तन के साथ उससे परिवर्तन होना चाहिये।

(8) प्रगतिशील कार्यक्रम अनुभवों का सिद्धान्त

सामाजिक सामूहिक कार्य में कार्यक्रम अनुभव उसी स्तर से प्रारम्भ होने चाहिये जिस स्तर की सदस्यों की रूचियां, आवश्यकतायें अनुभव निपुणता तथा दक्षता है। जैसे–जैसे इन शक्तियों में विकास हो वैसे–वैसे कार्यक्रमों में भी परिवर्तन लाना चाहिये तथा उसका रूख विकासात्मक हो। इस सिद्धान्त के अनुसार समूह कार्य में कार्यक्रम प्रारूप प्रारम्भ करने का एक बिन्दु होता है और उस बिन्दु को परिभाषित करना महत्वपूर्ण होता है। समूहों की रूचियों, आवश्यकताओं तथा योग्यताओं में भिन्नतायें कार्यक्रम विकास प्रक्रिया के प्रारम्भ करने के लिये आवश्यक होती है। कार्यकर्ता समूह के स्तर के अनुरूप ही कार्यक्रमों को संगठित करने की सलाह देता हैं। वह समूह की सहायता कार्यक्रम नियोजन तथा कार्यान्वयन में करता है। मूल्यांकन के द्वारा वह कार्यक्रम अनुभव बढ़ते हैं।

(9) साधनों के उपयोग का सिद्धान्त

सामाजिक सामूहिक कार्य में संस्था तथा समुदाय का सम्पूर्ण वातावरण साधनों पर निर्भर होता है। अतरू साधनों का उपयोग सामूहिक अनुभवों में वृद्धि करने के लिए कुशलता पूर्वक करना चाहिये। कार्यकर्ता के लिए आवश्यक होता है कि उसे संस्था व समुदाय के विभिन्न साधनों का ज्ञान हो, जिससे समूह के उद्देश्यों को पूरा कर सके। साधनों में व्यक्ति, सामाजिक, संस्थायें, उपकरण, सेवायें स्थान आदि आते हैं। समूह को जब जिस साधन की आवश्यकता हो तब कार्यकर्ता को इनसे लाभ उठाने में पूर्ण समर्थ होना चाहिये।

(10) मूल्यांकन का सिद्धांत

मूल्यांकन एक निर्णय करने वाली प्रक्रिया है जो निश्चित करती है कि समूह, कार्यकर्ता तथा संस्था का क्या उत्तरदायित्व है, उनको पूरा करने की कितनी क्षमता है। क्या–क्या शक्तियां है तथा क्या–क्या कमजोरियां हैं। कौन–कौन से कार्य रचनात्मक सहयोग प्रदान करते हैं। इस प्रकार मूल्यांकन का उद्देश्य दार्शनिक एवं नैतिक ज्ञान है। यह कार्यकर्ता को निर्णय पर पहुंचने के लिये नकारात्मक कारकों के विरूद्ध सकारात्मक कारकों का संतुलन बनाये रखता है। मूल्यांकन से समूह में होने वाली अन्तःक्रिया, प्रक्रिया तथा क्रिया का स्पष्टीकरण होता है। इसके द्वारा समूह की स्थिति, सदस्यों के अनुभव एवं उनकी क्षमतायें तथा कमियां ज्ञात होती हैं। सामूहिक कार्यकर्ता निम्न स्थितियों का मूल्यांकन करता है–1. कार्यक्रम का मूल्यांकन, 2. सदस्यों के भागीकरण तथा अनुभव का मूल्यांकन एवं 3. कार्यकर्ता स्वयं अपनी भूमिका का मूल्यांकन।

समूह निर्माण रू समूह के विकास के चरण

उद्देश्य – इस इकाई का लक्ष्य आपको समाज कार्य समूह की समझ प्रदान करता है। इस इकाई में समूह निर्माण के कारकों और समाज कार्य समूह के प्रकारों की चर्चा की गई है। इसमें समूह निर्माण के विभिन्न चरणों और प्रत्येक चरण के उपायों की व्याख्या की गई है जिसमें समूह निर्माण की तैयारियां, प्रारंभिक बैठकों का संचालन, समूह सत्रों की निरंतरता

समूह का मूल्यांकन और समूह का समापन शामिल है। इस इकाई में समूह निर्माण में समूह कार्यकर्ता की भूमिका का भी विहंगावलोकन किया गया है। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप–

1. समाज कार्य समूहों के निर्माण के कारकों को समझ सके।

2. विभिन्न प्रकार के समाज कार्य समूह जिनका निर्माण किया जा सकता है उन्हें जान सकेंगे।

3. समाज कार्य समूह निर्माण के विभिन्न चरणों की पहचान कर सकेंगे, और

4. समाज कार्य समूह निर्माण के विभिन्न चरणों में समाज समूह कार्यकर्ता की भूमिका को स्पष्ट कर सकेंगे।

प्रस्तावना – समाज कार्य अभ्यासकर्ता मुवक्किल ६ मुवक्किलों की समस्याओं का समाधान मुवक्किल कार्यकर्ता के आधार पर नहीं करते तो वे इसके विकल्प के रूप में समूह दृ ष्टिकोण अथवा समाज समूह कार्य को आजमाते हैं। किसी समूह के माध्यम से विवादग्रस्त लोगों की सहायता करने की आवश्यकता है या नहीं, इसका निर्धारण कई कारकों के आधार पर होता है। प्रत्येक व्यक्ति समूह जीवन से परिचित है, समूह जीवन का प्रारंग परिवार से हो जाता है और यह स्कूल, कार्यस्थल और समाज क्लबों जैसे विभिन्न सामाजिक परिवेशों के माध्यम से जीवन भर चलता रहता है। लोग अकेले न रहकर समूह में रहना पसंद करते हैं। समाज कार्य समूह अन्य समूहों से भिन्न होते हैं। समाज समूह कार्य समूह बुनियादी तौर पर निर्मित समूह होते हैं समाज कार्यकर्ता एक नए समूह का निर्माण कर सकता है अथवा कभी पहले से विद्यमान किसी समूह के साथ कार्य कर सकता है। इनसे सदस्यों की सलिप्तता एक साझा स्थान और सामूहिक समय में हो जाती है। इनमें व्यक्तियों को सदस्यों में बदलने की शक्ति होती है, जो एक दूसरे के लाभ के लिए सचेत होकर कार्य करते हैं। इनके दायरे में पूरा मानव व्यवहार आ जाता है। ये लोकतांत्रिक अभिवृत्तियों का पोषण करते हैं और समूह को एक आत्म–निर्धारण इकाई के रूप में विकसित करते हैं। इनका गठन समाज समूह कार्यकर्ता और सदस्य व्यक्तियों बीच एक अनुबंध के आधार पर होता है।

समाज कार्य समूह के प्रकार समाज समूह कार्य समूह का वर्गीकरण उस उद्देश्य के आधार पर किया जा सकता है, जिसके लिए उस समूह की अवधारणा हुई है। ये उद्देश्य हो सकते है रू सदस्य व्यक्तियों की सामाजिक भावनात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति करना अथवा किसी सदस्य व्यक्ति या समूचे समूह के किसी विशिष्ट कार्य अथवा कार्यों को पूरा करना, जिससे उसकी वृद्धि और विकास हो कोनोप्का (1983) ने समाज कार्य समूहों को विकास समूह और सामाजिक किया समूहों के वर्गों में रखा है। दूसरा वर्गीकरण उपचार और कृ त्यक समूहों के रूप में टोसलैंड और रिवास (1984) ने किया है और कृव्यक समूहों को समितियों दलों प्रतिनिधि परिषदों उपचार सम्मेलन और सामाजिक किया समूहों में वर्गीकृत किया है। समूहों के इस वर्गीकरण में लचीलापन है और वे एक–दूसरे का स्थान ले सकते हैं, इसलिये समूहों के विभिन्न प्रकारों को इस प्रकार वर्गीकृत किया है–क. उपचारात्मक समूह, ख. वृद्धि समूह एवं ग. कृत्यक समूह।

उपचारात्मक समूह अधिकतम सदस्यों को उनके परिवर्तित व्यवहार को बनाए रखने और जीवन में नई स्थितियों के साथ तालमेल करने की सामर्थ्य देने के लिए होते हैं। इसका ध्यान बिन्दु सामाजिक भावनात्मक आवश्यकताओं पर अधिक होता है। इस प्रकार के समूह का गठनउन लोगों के साथ है जिनका किसी व्याधि के लिए उपचार हो चुका है। वृद्धि समूह लोगों को उनके कार्य जीवन और अन्य स्थितियों में वृद्धि और विकास करने के अवसरों के बारे में जागरूक करने के लिए होते हैं।

कृत्यक समूह उस काम अथवा कार्यकलाप पर ध्यान केन्द्रित करते हैं जिसे समूह स्वयं अपने विकास के लिए निष्पादित करता है।

समाज कार्य समूह के निर्माण के चरण

अपने उद्देश्य के लिए हम समाज समूह कार्य अभ्यास के चरणों का विवेचन निम्नलिखित पांच शीर्षकों के अंतर्गत कर सकते हैं–

1. पूर्व समूह (समूह निर्माण) चरण,

2. प्रारंभिक (प्रारंभिक बैठक) चरण,

3. मध्य (सक्रिय क्रिया) चरण,

4. समूह का मूल्यांकन और

5. समूह चरण का समापन (अंत)

पूर्व समूह चरण में कार्यकर्ता एक समूह के निर्माण की आवश्यकता की पहचान करता है और समूह के निर्माण के लिए पहल करता है, प्रारंभिक बैठक चरण में कार्यकर्ता और समूह सदस्य पहले से निर्धारित स्थान पर मिलता है – यह स्थान अभिकरण या ऐसी ही कोई और जगह हो सकती है, जहां समूह के सत्र होते हैं और समूह के उद्देश्य की प्रारंभिक उन्मुखता और अन्य विषयों की जानकारी दी जाती है और उसमें साझेदारी की जाती है, मध्य अर्थात सक्रिय क्रिया चरण में समूह अपने अपने लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु अपने विचार–विमर्शों और कार्यकलापों को जारी रखता है और मूल्यांकन चरण में समूह के कार्य निष्पादन को समूह के उद्देश्य और सदस्यों के लक्ष्यों की तुलना में जांचा जाता है। अंत में समापन अथवा अंतिम चरण में समूह को भंग कर दिया जाता है, और कार्यकर्ता यह सुनिश्चित करता है कि सदस्य सद्भावना के साथ एक–दूसरे से विदा लें।

चरण

(1) समूह का नियोजन और निर्माण

आवासीय सुविधा, दैनिक देखभाल और समुद्यय कार्य जैसी सेवाएं उपलब्ध कराने वाली अभिकरण का प्रतिनिधित्व करने वाला समाज समूह कार्यकर्ता ऐसी स्थितियों से दो चार हो सकता है, जब कार्यकर्ता समाज कार्य सह के निर्माण की आवश्यकता की पहचान कर लेता है तो वह समूह के निर्माण की योजना बनाना शुरू कर देता है। इसके लिए

कार्यकर्ता को अपनी व्यवसायिक पृष्ठभूमि के साथ कुछ प्रश्नों के उत्तर अत्यंत सावधानीपूर्वक और क्रमबद्ध ढंग से देने पड़ते हैं।

समूह के सदस्यों की संलिप्तता को कैसे सुनिश्चित किया जाए– समूह सदस्य और कार्यकर्ता समूह प्रक्रमों को सुनिश्चित करने के लिए जो आपसी सहमति बनाते हैं, वह समूह के उद्देश्य की प्राप्ति तक चलती रहती है।

समूह के उद्देश्य का निर्धारणरू यहां कार्यकर्ता के मस्तिष्क में यह स्पष्ट होना चाहिए कि समूह की संकल्पना क्यों की जा रही है और इसका उद्देश्य क्या होगा। उद्देश्य को एक सुस्पष्ट व्यवस्था में व्यक्त किया जाना चाहिए। इसे भ्रामक नहीं होना चाहिए और इसमें इस बारे में कोई गंजाइश नहीं छोड़नी चाहिए कि समूह का व्यापक लक्ष्य जरूरतमंद सदस्यों की सहायता करना है इसमें संभावित सदस्यों के इन प्रश्नों का उत्तर होना चाहिए कि वे समूह में क्या अपेक्षा कर सकते हैं और इसमें भागीदारी करने से उन्हें किस हद तक लाभ होगा।

1. समूह नशे के आदी कालेज स्तर के युवा छात्रों के माता–पिताध्अभिभावकों के लिए एक मंच बनाने जा रहा है, जिसमें उनकी समस्याओं में साझेदारी की जाएगी और उनके बच्चों को संभालने के कौशल का विकास किया जाए।

2. समूह समुदाय की स्त्रियों को इस योग्य बनाने जा रहा है कि वे अपनी खाली समय का सदुपयोग कर सके।

समूह की बनावट– जब समूह उद्देश्यों का निर्धारण हो जाता है तो फिर कार्यकर्ता को यह देखना होता है कि समूह की बनावट क्या होगी समूह सदस्यों के बीच आयु शैक्षिक पृष्ठभूमि, सामाजिक वर्ग तथा अन्य हितों जैसे साझा करकों में साझेदारी करना है। समूह कार्यकर्ता के लिए यह एक महत्वपूर्ण कार्य होता है कि वह सदस्य व्यक्तियों की आवश्यकताओं और लक्ष्यों को और समूह के व्यापकं उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए समूह की बनावट तय करें। किसी व्यक्ति को समूह की अवधी के दौरान किसी भी समय समूह का सदस्य बनाया जा सकता है।

समूह का आकार– समूह को कितने सदस्य बनाएंगे? उसका आदर्श आकार क्या होगा? यह तय करने का क्या मापदंड होगा कि समूह का आकार अतिशय बड़ा है दृ अथवा अतिशय छोटा? ये सारे प्रश्न कार्यकर्ता के मस्तिष्क में रहते हैं। समूह का आकार तय करने के लिये कोई कठोर नियम नहीं है। बुनियादी तौर पर यह समूह के उद्देश्य उसकी प्रबंधनीयता समय सीमा, स्थान, धन और आवश्यक नियंत्रणों पर निर्भर करता है। छोटे आकार के समूह का प्रबंधन आसान होता है, इसमें अधिक जुड़ाव होता है, उच्च स्तर की अंतः क्रिया होती है, किन्तु यह विविध अनुभव प्रदान नहीं कर सकता, आवश्यक संसाधन नहीं जुटा सकता और यदि इसके एक या दो सदस्य निकल गये तो संतुलन बिगड़ जाता है। वही बड़े आकार का समूह विविध अनुभव प्रदान करता है और कुछ सदस्यों के निकल जाने पर भी इसके उद्देश्य की प्राप्ति और समूह चर्चा पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता, यह अधिक संसाधन जुटा सकता है और काम में साझेदारी के लिए पर्याप्त समय नहीं मिले। इस उपसमूह में टकराव पैदा होने की संभावना रहती है। समूह कार्यकर्ता का व्यवसायिक अनुभव और उसकी विशिष्ट दक्षता समूह का आकारतय करने में सहायता होती

है, आठ से पंद्रह सदस्यों वाले समूह को आकार की दृष्टि से एक आदर्श समूह कहा जाता है।

सदस्यों का नामांकन – समूह सदस्यों की भर्ती करना इस संदर्भ में कार्यकर्ता को काम होता है संभावित सदस्यों को समूह के गठन के विषय में सूचित करना । यह सूचना संभावित सदस्यों को सीधे ही अथवा अभिकरण के सूचनापटल पर यसूचना चिपकाकर, कर्मचारियों और अन्य संबंधित अभिकरणों में परिपत्र घुमाकर और समाचार पत्रों, रेडियो, टी. वी. आदि संचार माध्य से विज्ञापन के माध्यम से दी जा सकती है और रूचिशील सदस्यों से आवेदन आमंत्रित किए जा सकते हैं।

अनुबंधन – सदस्यों की भर्ती करते समय कार्यकर्ता और सदस्यों को कुछ शर्तों पर सहमति व्यक्त करनी होती है जिनका पालन समूह प्रकृम के दौरान किया जाता है। इसमें समूह की अवधि के दौरान सदस्यों और कार्यकर्ता के सामान्य उत्तरदायित्वों के विषय में एक विवरण होता है। इसमें से कुछ है समूह सत्रों में नियमित रूप में और समय पर उपस्थित रहना किसी भी अनुबंधित कृत्य अथवा कार्य को पूरा करना, समूह की चर्चाओं की गोपनीयता को बनाए रखना और ऐसा कोई भी व्यवहार न करना समूह की भलाई के विरूद्ध जाता हो और यह भी स्पष्ट किया जाता है कि अनुबंध की शर्तों का उल्लंघन हुआ तो उसके लिए सदस्यों को दंड अथवा जुर्माना सदस्यों को भुगतना होगा।

(2) प्रारम्भिक बैठक

समूह की शुरूआत करने के लिए कार्यकर्ता और सदस्यों को क्या उपक्रम करने होते है। यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण चरण है क्योंकि समूह की सफलता अथवा विफलता इस बात पर निर्भर करती है कि कार्यकर्ता प्रारंभिक बैठकों को कितनी अच्छी तरह से संचालित करता है, सदस्यगण बहुत सारी अपेक्षाएं लेकर बैठकों में उपस्थित होते हैं। वे इस आशा के साथ बैठक में आते हैं कि अब उस समस्या से मुक्ति पाने का समय आ गया है जो उन्हें लम्बे समय से परेशान करती आ रही है। वह दूसरी ओर सदस्यों में कार्यकर्ता की क्षमता को लेकर भी अनेक संदेह होते हैं, उन्हें यह नहीं पता होता है कि कार्यकर्ता और अन्य सदस्य किस प्रकार के व्यक्ति है क्या कार्यकर्ता और अन्य सदस्य मित्रवत स्वभाव के समझदार और संवेदनशील है और वे समूह में कही गई सदस्यों की गोपनीय बातों का दुरूपयोंग तो नहीं करेंगे? क्या समूह के विचार विमर्शों में से सार्थक भागीदारी कर सकता हूँ? क्या मेरी स्थिति और भी खराब हो जाएगी? सदस्यों की ऐसी ही कुछ आशंकाए होती है।

कार्यकर्ता और सदस्यों की आत्म–प्रस्तुतियां

जैसे ही समूह की पहली बैठक होती है, कार्यकर्ता स्वयं पहल करके प्रत्येक सदस्य के साथ मैत्रीपूर्ण अभिवादन करता है और इस प्रकार समूह के सदस्यों को अनौपचारिकता का अहसास कराता है। जब सदस्य हो जाते और खुल जाते है तो कार्यकर्ता अपना परिचय देता है।

समूह–दृविषयक उन्मुखता

आत्म प्रस्तुतियों के बाद कार्यकर्ता सदस्यों को समूह के व्यापक उद्देश्य के विषय में उन्मुख करता है। यहां कार्यकर्ता उन परिस्थितियों के विषय में बताता है, जिनसे समूह के गठन का मार्ग प्रशस्त हुआ है, बाद के समूह प्रक्रमों में यह तय होता है कि उनकी अलामकारी स्थितियों अथवा समस्यायों का समाधान किस प्रकार संभव होगा।

लक्ष्य निर्माण

इस चरण में समूह के लक्ष्यों का निर्धारण किया जाता है। लक्ष्य तो व्यवहार अथवा सामाजिक स्थिति अथवा भौतिक दशाओं में परिवर्तन के उन वांछित स्तरों के विवरण होते हैं जिन्हें भविष्य में कभी प्राप्त करना होता है। समूह के उद्देश्य, अभिकरण के उद्देश्य सदस्य व्यक्तियों की आवश्यकताओं और समूह के संचालन के तरीकों और व्यवहार के प्रति मानो से लक्ष्यों का निर्धारण होता है। कार्यकर्ता तो सदस्यों की पृथक आवश्यकताओं का आंकलन करता है और उनके परामर्श से लक्ष्यों का निर्धारण करता है।

(3) मध्य (सक्रिय कार्य) चरण

समूह के कार्य जीवन का यह प्रमुख चरण होता है। सदस्यगण नियमित रूप में सत्रों में आते हैं और उनके उद्देश्य और लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में सक्रियता से कार्य करते हैं।

1. समूह सत्रों के संचालन हेतु व्यवस्था करना।

2. समय का प्रबन्धन।

3. समूह की बैठकों को सुगम बनाना।

4. समूह की प्रगति का आंकलन।

समूह सत्रों के लिए व्यवस्था करना

समूह अपने विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु स्वयं को तैयार करता है। कार्यकर्ता और सदस्य मिलकर समूह की बैठकों की योजना बनाते और उसके लिए तैयारी करते हैं। कार्यकर्ता को समूह की बैठकों के संचालन के लिए गतिविधियों और प्रक्रियाओं की तैयारी में बहुत समय देना होता है।

समय का प्रबंधन

कार्यकर्ता समूह सत्रो और उन व्यक्तिगत कामों के लिए समय–सीमा का निर्धारण करना जारी रखता है, क्योंकि समूह का जीवन एक निर्धारित समय के लिए होता है। सदस्यों और कार्यकर्ता को समय के उपयोग के विषय में बहुत सचेत रहना होता है। समूह की बैठकों का अधिकतम लाभ उठाया जा सकता है। सदस्यगण अपने समय का सही प्रबंधन करें।

समूह सत्रों को सुगम बनाना

केवल समूह सत्रों की योजना बना लेना और उनकी तैयारी कर लेना ही पर्याप्तनहीं होता समूह के गठन का मूल कारण ही यह होता है, कि सदस्यों को उनकी समस्याओं के समाधान की दिशा में कार्य करने हेतु एक मंच पर आने योग्य बनाना ये वही समस्याएं होती है जिनका समाधान वे व्यक्तिगत स्तर पर नहीं कर पाते।

समूह के कार्य निष्पादन का आंकलन

समूह प्रक्रमों का आंकलन यह सुनिश्चित करने की दृष्टि से किया जाता अपने लक्ष्यों को प्राप्त करे, यह समूह को उचित दिशा और मार्गदर्शन प्रदान करता है। इसमें ये बातें शामिल होती हैं समूह की गतिविधियों में समूह सदस्यों की संलिप्तता और भागीदारी के स्तरों का आंकलन, सदस्यों के दृष्टिकोण अभिवृत्तियों और व्यवहारों में हो रहे परिवर्तन।

समूह की बैठक का अभिलेखन

लिखित प्रतिवेदन आडियो और वीडियो कैसेट, व्यवहार के माप पैमाने और समाज इत्यादि अंतःक्रिया के प्रतिरूप, व्यवहार की अभिव्यक्ति, समूह आकर्षण टकरावों की ओर ले जाने वाली स्थिति उप समूह गठन नेतृत्व की शैलिया आदि कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जिनका आंकलन उपर्युक्त उपकरणों के माध्यम से किया जाता है. आंकलन की क्रिया और प्रक्रिया सदस्यों को पूर्व सूचना देकर अथवा नहीं देकर पूरी की जाती है।

(4) मूल्यांकन

मूल्यांकन शब्द का सीधा साधा अर्थ होता है रू मूल्य आंकना, ट्रेकर के अनुसार (1955) इसमें अभिकरण के उद्देश्यों और कार्यों के संदर्भ में समूह के अनुभव के स्तर को मापने का प्रयास किया जाता है। मूल्यांकन हमें समूह के कार्य संपादन के विषय में आवश्यक जानकारी देता है। मूल्यांकन का काम समूह कार्य की गतिविधि के बाद और समूह के समापन के पहले अथवा कभी–कभी समूह के समापन के बाद भी किया जाता है और यह मूल्यांकन के उद्देश्य पर निर्भर करता है। कार्यकर्ता के कार्य निष्पादन अभिकर के संबल समूह प्रक्रम और सदस्यों के विकास पर ध्यान केन्द्रित करता है, मूल्यांकन का काम कार्यकर्ता को अथवा अभिकरण के किसी व्यक्ति को अथवा किसी बाहरी विशेषज्ञ को सौंपा जाता है।

मूल्यांकन एक प्रकार का अनुसंधान प्रक्रम है, इसमें आंकड़ों का संकलन और विश्लेषण होता है। मूल्यांकन के प्रथम चरण में लक्ष्यों और उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। इस कवायद में मूल्यांकन के क्षेत्र की सीमाएं खींच जाती है, उदाहरण के लिए मूल्यांकन का ध्येय कार्यकर्ता की क्षमताओं और योग्यताओं का पता लगाना है।

(5) समूह का समापन

चाहे कोईचाहे या न चाहे किन्तु प्रत्येक वस्तु का अंत होता है, समाज कार्य समूह भी इसका अपवाद नहीं है, समूह का अंत तब हो जाता है जब उसने अपना उद्देश्य अथवा लक्ष्य प्राप्त कर लिया होता है अथवा जब उसका समय पूरा हो जाता है या इसलिए भी हो सकता है, क्योंकि वह और आगे जारी रहने में असमर्थ होता है, इस प्रकार समूह का समापन पूर्व निर्धारण भी हो सकता है।

समूह निर्माण चरणों में समूह कार्यकर्ता की भूमिका

समूह निर्माण में समूह कार्यकर्ता की निर्णायक भूमिका होती है। वह अनेक कार्य करता है, वह सामान्य रूप से समाज कार्यकर्ता की अत्यधिक व्यापक साझेदारी वाली भूमिका निभाता है अर्थात् वह सामर्थ्य दाता, मध्यस्थ, हिमायती, शिक्षक और (स्थितियों को) सुगम बनाने की भूमिका निभाता है। समाज कार्य समूह की विशिष्ट भूमिकाएं एक नेता और निर्णयकर्ता की भूमिकाएं होती है।

सारांश

इस इकाई में हमने उन विभिन्न कारकों का अध्ययन किया जिसके कारण समाज कार्यकर्ता को एक समाज कार्य समूह की योजना बनाने की आवश्यकता होती है, लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करने में समूह का महत्वपूर्ण स्थान होता है, हमने पढ़ा कि समाज कार्य समूह अन्य समूहों से इस अर्थ में भिन्न होते हैं। क्योंकि इनका गठन जरूरतमंद लोगों को उनकी आवश्यकताओं के समाधान के विशिष्ट उद्देश्य से होता है और यह काम वह समूह अनुभव के माध्य से और एक व्यावसायिक प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ता की निरंतर निगरानी में होता है, इस इकाई में हमने समाज कार्य समूहों के प्रकारों की भी जानकारी प्राप्त की जिसकी संकल्पना समूह कार्यकर्ता सदस्यों की आवश्यकताओं अथवा समस्याओं अभिकरण के हितों और संसाधनों की उपलब्धियों को ध्यान में रखकर करता है।

सामूहिक कार्य का समाजकार्य की अन्य प्रणालियों से सम्बन्ध

समाजकार्य एक व्यावसायिक सेवा है, जो वैज्ञानिक ज्ञान और मानव संबंधों की निपुणता पर आधारित है, यह व्यक्ति को अकेले या समूह में सहायता करता है जिससे वे सामाजिक एवं वैयक्तिक संतुष्टि एवं स्वतंत्रता प्राप्त कर सके।

Social work is a professional service based on scientific knowledge and skill in human relations, which assists Individual, alone or in group to obtain social and personal satisfication and Indepandence,

समाजकार्य का उद्देश्य व्यक्ति को इस योग्य बनाना कि वह अपनी सहायता स्वयं कर सके और आत्मनिर्भर बने।

समाज कार्य की प्रणालियां (Method of Social work)

समाज कार्य की 6 प्रणालियां है–

1. सामाजिक वैयक्तिक सेवाकार्य

2. सामाजिक सामूहिक कार्य

3. सामुदायिक संगठन

4. समाजकल्याण प्रशासन

5. सामाजिक अनुसंधान

6. सामाजिक क्रिया

सामाजिक सामूहिक कार्य

सामूहिक कार्य समाज कार्य की एक प्रणाली है जिसका तात्पर्य एक क्रमानुगत व्यवस्थित तथा नियोजित रूप में समूह के साथ कार्य करने का तरीका है। बाह्य रूप में प्रणाली का अर्थ कोई कार्य करने का तरीका है परन्तु इसके अन्तर्गत हम सदैव ज्ञान को संगठित व्यवस्था, ग्रहण शक्ति सूझ तथा सिद्धांतों की खोज करते हैं।

सामूहिक कार्य का समाज कार्य की अन्य विधियों से सम्बन्ध

समाज– कार्य की विभिन्न विधियां आपस में एक दूसरे से निम्न प्रकार संबंधित हैं–

1. उद्देश्य के आधार पर सम्बन्ध

2. सिद्धान्त के आधार पर सम्बन्ध

3. प्रक्रिया के आधार पर सम्बन्ध

4. प्रत्यय के आधार पर सम्बन्ध

5. व्यक्ति के ज्ञान पर सम्बन्ध

6. कार्य की रूपरेखा निश्चित करने के आधार पर सम्बन्ध

7. कार्यक्रम के विकास के आधार पर सम्बन्ध

1. उद्देश्य के आधार पर सम्बन्ध

समाज कार्य की सभी विधियों का उद्देश्य लगभग समान है, सभी विषयों का उद्देश्य व्यक्ति की अधिक से अधिक सहायता करना है, जिससे वह अपनी समस्याओं का समाधान करने तथा विकास की गति में विकास ला सकें। वैयक्तिक सेवा कार्य का उद्देश्य सेवार्थी या एक व्यक्ति की इस प्रकार से सहायता करना होता है, जिससे स्वयं सहायता करने की शक्ति का विकास हो सके और बिना विशेष बाह्य सहायता के वह अपनी समस्या के लिए कदम उठा सके।

सामूहिक कार्य में कार्यकर्ता व्यक्ति की सहायता समूह के माध्यम से करता है, समूह की अन्तनिर्हित शक्तियों का विकास वह अपनी निपुणता एवं योग्यता के आधार पर करके समस्या को स्पष्ट करता है, व्यक्ति में सामूहिक कार्य के माध्यम से शारीरिक, मानसिक, सामाजिक आदि गुणों का विकास करना है। यद्यपि सामूहिक कार्य में केन्द्रबिन्दु समूह होता है, परन्तु व्यक्ति के हित का पूरा पूरा ध्यान रखा जाता है। आवश्यकता पड़ने पर वैयक्तिक सेवाकार्य की सहायता ली जाती है। सामुदायिक संगठन का उद्देश्य व्यक्ति की इस प्रकार सहायता करना है जिससे वह स्वयं विकास एवं उन्नति कर सके।

सामाजिक कार्य की एक अन्य पद्धति सामाजिक कार्य प्रशासन है यह वह प्रक्रम है जिसके माध्यम से हम कतिपय लक्ष्यों की पूर्ति और सामाजिक नीति की चरितार्थता के लिए सामाजिक कार्य की व्यवसायिक क्षमता को उपयोग में लाते हैं।

सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य न केवल ज्ञान प्राप्त करना है अपितु उस ज्ञान का प्रयोग समस्याओं के निदान के लिए भी करना है।

सामाजिक क्रिया के अन्तर्गत राजनीतिक सुधार, औद्योगिक लोकतंत्र, सामाजिक विधान, जातिगत तथा सामाजिक न्याय, धार्मिक स्वतंत्रता एवं नागरिक स्वतंत्रता के लिए आन्दोलन आते हैं। इन प्रविधियों में प्रचार, अनुसंधान और समर्थन प्रचार करना शामिल है।

इस प्रकार से सभी प्रणालियों के उद्देश्य समान है। सभी प्रणालियां व्यक्ति के विकास में आने वाली बाधाओं को दूर करने का प्रयास करती है।

(2) सिद्धान्त के आधार पर सम्बन्ध

समाजकार्य की प्रणालियों में लगभग समान सिद्धांतों का उपयोग होता है, मूलरूप से इनमें मानवतावादी सिद्धान्त कार्य करता है, सभी सम्बन्ध स्थापन पर जोर देता है और उसी के माध्यम से उपचार योजना तैयार करता है, सामूहिक कार्य में भी समूह की इच्छा से कार्य किया जाता है, समूह सदस्य प्रथम चरण से लेकर अन्तिम चरण तक महत्वपूर्ण होते हैं। सामुदायिक संगठन में भी लगभग इन्हीं सिद्धान्तों का प्रयोग किया जाता है, जोकि वैयक्तिक सेवाकार्य तथा सामूहिक कार्य में महत्वपूर्ण है।

इस प्रकार समाज कार्य के सामान्य सिद्धांत सभी प्रणालियों पर लागू होते हैं अर्थात प्रत्येक प्रणाली के अभ्यास के दौरान समाज कार्य के दर्शन के अनुरूप ही क्रियाओं का आयोजन किया जाता है।

(3) प्रक्रिया के आधार पर सम्बन्ध

वैयक्तिक सेवादृकार्य सामूहिक कार्य तथा सामुदायिक संगठन प्रणालियों किया जाता है, कि व्यक्ति, समूह तथा समुदाय स्वयं अपनी समस्याओं के निराकरण में समर्थ हो सके, आत्मदृ विश्वास की भावना का विकास हो तथा उचित वृद्धि हो। परन्तु इनकी प्रक्रिया में अन्तर है। वैयक्तिक कार्य में व्यक्ति विशेष पर बल दिया जाता है। सेवार्थी स्वयं कार्यकर्ता के पास आता है और अपनी परेशानियों को उसके सामने स्पष्ट करता है तथा सहायता की इच्छा प्रकट करता है। कार्यकर्ता वार्तालाप के माध्यम से समस्या के कारणों को ढूंढ़ता है तथा निदान करता है, इसके साथ ही साथ उपचार क्रिया भी चलती है, अर्थात् वैयक्तिक सेवा कार्य में प्रक्रिया आवश्यकता मूलक व रोग निवारक होता है। सेवार्थी में अहम् शक्ति का विकास होता है और वह समस्या का अपनी बुद्धि एवं क्षमता द्वारा समाधान की चेष्टा करता है।

सामूहिक कार्य में कार्यकर्ता या तो समूह का निर्माण स्वयं करता है या पूर्व संगठित समूह के साथ कार्य करता है। समूह का उद्देश्य उन्नति एवं विकास करना या समस्या का समाधान करना होता है, कार्यकर्ता सामंजस्य संबंधी समस्याओं को भी हल करता है।

सामुदायिक संगठन में पूरे सदस्य के हित के लिए कार्य करता है, व्यक्ति इसमें गौण होता है। समुदाय की इच्छा सर्वोपरि होती है और उसका कल्याण करना मुख्य कार्य होता है। समुदाय को समझने के लिए सामाजिक संस्थाओं के रीति–रिवाजों, मान्यताओं आदि का अध्ययन किया जाता है। कार्यकर्ता का उद्देश्य समुदाय में परिवर्तन लाना होता है। पूरा समुदाय उसका कार्य क्षेत्र होता है तथा वह सामुदायिक संरचना में परिवर्तन लाने का प्रयास करता है।

(4) प्रत्यय के आधार पर

वैयक्तिक सेवा कार्य तथा सामुदायिक संगठन में लगभग समान प्रत्यय होते हैं। कार्यकर्ता इन विधियों में विभिन्न रूपों से कार्य करता है जब वह देखता है कि व्यक्ति, समूह या समुदाय स्वयं उचित कदम नहीं उठा सकते हैं, तब वह अधिनायक या सत्तावादी हो ऐसी स्थिति में वह आदेश देता है और अन्य उसकी आज्ञा का पालन करते हैं, कभी–कभी वह स्वयं आदर्श बन जाता है और व्यक्ति साधनों को पहचान नहीं पाते। वह समर्थकारी तरीका भी अपनाता है, वह समूह में भाग लेने तथा कुशलताओं एवं अभिवृत्तियों के विकास में सहायता करता है तथा सामंजस्य स्थापित करने में सहयोग प्रदान करता है। समूह या समुदाय के साथ कार्य करता है, समूह या समुदाय के साथ कार्य करते हुए वैयक्तिक सम्पर्क भी बनाएं रखता है। वह उसी स्तर से कार्य करता है जहां से व्यक्ति आसानी से कार्य करते हैं।

(5) व्यक्ति के ज्ञान के आधार पर सम्बन्ध

समाज कार्य के सिद्धांतों में व्यक्ति के ज्ञान पर विशेष बल दिया जाता है। सबसे पहले उसके विषय में सम्पूर्ण इतिहास प्राप्त किया जाता है तथा समस्या का निदान वैयक्तिक अध्ययन के आधार पर किया जाता है। सामूहिक कार्य में यद्यपि कार्यकर्ता का ध्यान समूहपर केन्द्रित

होता है, परन्तु यह वैयक्तिकरण का सिद्धांत अवश्य अपनाता है। प्रत्येक सदस्यों की रूचियों, आदतों, मनोवृत्तियों आदि का ज्ञान रखता है। सामुदायिक संगठन में व्यक्ति विशेष के विषय में ज्ञान रखना सम्भव नहीं होता है। परन्तु कार्यकर्ता समूह के माध्यम से प्रयत्न करता है। वह समुदाय की आवश्यकता का पता लगाता है, आवश्यक साधनों की खोज करता है, उन समूहों का पता लगाता है, जिनका समुदाय में विशेष महत्व होता है और उन्हें अपनी समस्याओं के विषय में ज्ञान रहता है तथा उन्हें हल करने के लिए उत्सुक रहता है। वह वैयक्तिक सम्पर्क भी रखता है।

(6) कार्य कीरूपरेखा निश्चित करने के आधार पर सम्बन्ध

समाज कार्य की तरह इसमें यह विशेषता है कि कोई भी कार्य सेवार्थी पर दबाव डाल कर नहीं कराया जाता। वे जिस प्रकार जैसे कार्य करने के लिए इच्छा करते हैं वैसे ही कार्य किया जाता है। वैयक्तिक सेवा कार्य में सेवार्थी को अपना रास्ता उपाय या उपचार के तरीकों का चुनाव करने की पूरी छूट होती है। यद्यपि कार्यकर्ता सम्पूर्ण विवरण तथा उपचार प्रक्रिया प्रस्तुत करता है, परन्तु यह सेवार्थी की इच्छा पर निर्भर होता है कि वह उसको माने या न माने। सामूहिक कार्यकर्ता में भी समूह–सदस्य स्वयं कार्यक्रम का चुनाव

करते तथा निर्णय में भाग लेते है। सामुदायिक संगठन में कार्यकर्ता केवल छिपी समस्याओं को प्रस्तुत करता और सम्भव उपायों को स्पष्ट करता है। वह इसे समुदाय की इच्छा पर छोड़ देता है कि कौन सा तरीका समस्या को सुलझाने का उसे पसन्द है।

(7) कार्यक्रम के विकास के आधार पर सम्बन्ध

समाज कार्य में कोई भी कार्यक्रम पहले से निश्चित नहीं किया जाता है। जब समूह में अतःक्रिया का संचार होता है तो कार्यक्रम स्वतः उत्पन्न हो जाते हैं। वैयक्तिक सेवा कार्य में कार्यकर्ता और सेवार्थी के बीच पहले मानसिक सम्बन्ध स्थापित होते हैं, फिर अन्तक्रिया का संचार होता है और तब कार्यात्मक उपचार का पथ निर्धारित होता है। सामूहिक कार्य में जब कार्यात्मक सम्बन्ध स्थापित होता है तब कार्यक्रम का विकास होता है।

निष्कर्ष

सामूहिक कार्य की विभिन्न प्रणालियों के अध्ययन के आधार पर निष्कर्षता हम कह सकते है कि प्रथम तीन प्रणालियों के माध्यम से व्यक्ति समूह तथा समुदाय को सहायता प्रदान की जाती है तथा शेष तीन प्रणालियों की सहायता ली जाती है। इस प्रकार अभ्यास के लिए सभी प्रणालियों की समान उपयोगिता है, इनमें पारस्परिक सम्बन्ध है, प्रणालियां व्यक्तियों को सहायता प्रदान करने के विभिन्न माध्यम हैं जिनका प्रयोग एक सामान्य लक्ष्य मानवता के कष्टों को कम करने के लिए लिया जाता है। सभी प्रणालियों के अभ्यास में समाज कार्य की मौलिक मूल्यों का ध्यान कार्यकर्ताओं द्वारा रखा जाता है। इसलिये यह कथन सत्य है कि वैयक्तिक सेवाकार्य, सामूहिक सेवाकार्य और सामुदायिक संगठन समाज कार्य की विशेषताएं नहीं है बल्कि व्यक्तियों, समूहों और समुदायों के सन्दर्भ में व्यवसायिक कुशलताओं का प्रयोग है।

सामाजिक सामूहिक कार्य की प्रक्रिया एवं निपुणताएं
Introduction of Social Group Work

सामाजिक सामूहिक कार्य समाजकार्य की एक प्रणाली है जो सामूहिक क्रिया द्वारा रचनात्मक सम्बन्ध स्थापित करने की योग्यता का विकास करता है, समूह कार्य में व्यक्ति सामाजिक कार्यकर्ता की सहायता से अपने व्यक्तित्व का विकास परिवर्तन और संवर्धन के लिए समूह को साधन के रूप में प्रयोग करता है। सामाजिक कार्यकर्ता समूहगत व्यक्तियों की पारस्परिक क्रियादृप्रतिक्रिया के सन्दर्भ में निर्देशन कार्य करते हुए व्यक्ति की प्रगति और पूरे समूह के उत्थान के लिए प्रयत्नशील होता है।

सामूहिक कार्य की परिभाषा

कोक्सले ग्रेस के अनुसार – ''सामाजिक सामूहिक कार्य का उद्देश्य सामूहिक स्थितियों में व्यक्तियों की अन्तःक्रिया द्वारा व्यक्तियों का विकास करना तथा ऐसी सामूहिक स्थितियों को उत्पन्न करना जिससे समान उद्देश्यों के लिए एकीकृत सहयोगिक सामूहिक क्रिया हो सके।''

हैमिल्टन के अनुसार – ''सामाजिक सामूहिक सेवाकार्य एक मनोसामाजिक प्रक्रिया है जो नेतृत्व को योग्यता और सहकारिता के उतनी ही सम्बंधित है, जितनी सामाजिक उद्देश्य के लिए सामूहिक अभिरूचियों के निर्माण से है।" इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि सामूहिक सेवाकार्य समाजकार्य की एक प्रणाली है इसका उद्देश्य समूह में रहकर व्यक्तियों की अन्तःक्रिया द्वारा उनके व्यक्तित्व के विकास, उनकी आवश्यकतानुसार उसमें नेतृत्व की क्षमता का विकास करना है।''

सामाजिक सामूहिक कार्य की प्रक्रिया

सामाजिक सामूहिक कार्य की प्रक्रिया के अन्तर्गत सबसे पहले सामूहिक कार्यकर्ता समूह निर्माण का कार्य करता है, समूह का निर्माण कुछ विशेष कारकों से होता है जोकि निम्न हैं–

(1) भौतिक निकटता –एक स्थान एक क्षेत्र, एक प्रदेश या एक ही जलवायु में रहने वाले लोगों में भौतिक निकटता होती है यह भौतिक निकटता जितनी अधिक होती है, उनके सम्पर्क में आने और घनिष्ठता स्थापित होने की उतनी ही अधिक सम्भावना होती है, इस स्थिति में समूह का निर्माण शीघ्र और सरलता से ही जाता है, स्थानीय समीपता के कारण ही समूहों का निर्माण हो जाता है।

(2) मूल्यों एवं अभिवृत्तियों में समानता – लोगों के मूल्यों और अभिवृत्तियों में जितनी अधिक समानता होती है, समूह निर्माण की संभावनायें उतनी ही अधिक होती है।

(3) पारस्परिक सहयोग – व्यसक्ति अपने दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए एक–दूसरे को सहयोग देते हैं और लेते हैं, तब ग्रुप फार्मेशन हो जाता है।

(4) भाषा की समानता – प्रायः भाषा में समानता होने के कारण भी ग्रुप तैयार हो जाता है।

(5) बाहरी धमकी – व्यक्ति बाहरी खतरों से बचने के लिए लोगों में आपसी भेदभाव की मिटाकर एक हो जाने की प्रवृत्ति अधिक तीव्र हो जाती है, जैसे–साम्प्रदायिक ढंगों के समय यह अक्सर देखा जाता है कि व्यक्तियों में अपने समुदाय के व्यक्तित्वों के साथ मिलकर विशेष समूह गठित करने की प्रवृत्ति अधिक तीव्र हो जाती है।

(6) समान व्यवसाय – व्यवसाय में समानता के आधार पर भी हतवनच वितउंजपवद हो जाता है।

(7)धर्म की समानता रू समान धर्म के व्यक्तियों के आधार पर भी group formedकर सकते हैं।

(8)रीति–रिवाज रू एक समान रीति–रिवाज के आधार पर भी group formationकर सकते।

समूह निर्माण के पश्चात सामूहिक कार्यकर्ता कार्यक्रम चलाने के लिये समूह को कार्यात्मक संगठन बनाने के लिए सहायता करता है वह समूह की विषयवस्तु का क्षेत्र तथा प्रयत्न का

माध्यम चुनने में सहायता प्रदान करता है, परन्तु इससे पहले वह समूह की रूचियों की खोज करता है, वह समूह की सहायता इस प्रकार से करता है जिससे वह अपने ही स्त्रोतों का उपयोग अधिकाधिक कर सके, कार्यकर्ता का सम्बन्ध मुख्यतः तीन बातों से होता है–1. कार्यक्रम क्या है (विषयवस्तु), 2. माध्यम तथा 3. पद्धति।

1. विषयवस्तु का क्षेत्र –विषयवस्तु से तात्पर्य है कि कार्यक्रम के अन्तर्गत हम किन–किन क्रियाओं का समावेश करते हैं समूह क्या अनुभव प्राप्त कर रहा है, उसका विकास किस दिशा में हो रहा है, कार्यक्रम की विषयवस्तु मनोरंजन, शिक्षा मनोवैज्ञानिक सहायता, शारीरिक विकास इत्यादि हो सकती है, कार्यकर्ता विषयवस्तु को निर्धारित करने के पश्चात ही क्रियाओं को सम्पन्न करने के माध्यमों का चुनाव करता है।

2. माध्यम रू कार्यकर्ता जब क्षेत्र तथा विषयवस्तु का चुनाव कर लेता है तो कार्यक्रम के कार्यान्वयन के लिए माध्यम निर्धारित करता है वह साधनों एवं तरीकों को उपयोग में अपने अनुभव लाकर समूह द्वारा क्रियायों को सम्पन्न कराता है, जिनका उपयोग समूह लिए करता है, कार्यक्रम में बहुत से माध्यम प्रयोग किये जाते है, जैसे– नांच, गाना, कहानी, ड्रामा, खेल इत्यादि। ये क्रियाएँ समूह को अपनी भावनाओं को समझने तथा व्यक्त करने का अवसर देती हैं।

उदारहण के लिए यदि स्वास्थ्य की समस्याओं को दूर करने के उपायों के किया गया है तो समूह के सदस्य न केवल स्वास्थ्य के विषय में ज्ञान प्राप्त करते हैं बल्कि उनकी सामुदायिक स्वास्थ्य स्तर की भी जानकारी हो जाती है।

3. पद्धति – सामूहिक कार्य में पद्धति का तात्पर्य समूह की सम्पूर्ण चतवबमे से सबसे पहले समूह की आवश्यकताओं एवं इच्छाओं की खोज करता है तथा समूह को कार्यात्मक संगठन के रूप में संगठित करता है जिससे वह उत्तरदायित्व निर्णय ले सकने में समर्थ हो।

वह कार्यक्रम की विषयवस्तु का चुनाव करता है और माध्यम निर्धारित कार्यक्रम के तथ्यों का निरूपण करता है तथा समस्या का निदान करता है अन्त में उपचार की प्रक्रिया आती है, उपचार होने के बाद समूह को स्थगित कर दिया जाता है।

समूह कार्यात्मक संगठन के पश्चात सामाजिक सामूहिक कार्यकर्ता समूह में गति निरन्तर गति बनी रहे उसके लिए समय–समय पर समूह में अन्तःक्रिया कराता रहता है, इसके साथ–साथ समूह के प्रत्येक सदस्य में समंकमतीपच भी कमअमसवच कराता है। 12303

इस प्रकार से हतवनच चतवबमे के अन्तर्गत हतवनच वितउंजपवद, समंकमतीपच, द्वारा समूहों के प्रति प्रतिक्रियायें, decision making etc,आता है जोकि एक समूह को गति प्रदान करता है।

सामाजिक सामूहिक कार्य की निपुणतायें

सामान्यतः निपुणता का अर्थ कार्य करने की क्षमता से है निपुणता का तात्पर्य कार्य के क्रियान्वयन व उसे पूर्ण करने के ज्ञान एवं दक्षता से है, ट्रेकर के अनुसार निपुणता कार्यकर्ता की विशेष परिस्थितिओं में ज्ञान एवं समय के उपयोग की क्षमता है अर्थात व्यक्ति

निपुणताओं की प्राप्ति ज्ञान वृद्धि एवं कार्य अनुभव से करता है जब वह किसी कार्य में लगा रहता है तो निपुणता स्वतः ही आ जाती है। कार्यकर्ता के अन्दर समूह संवेदना को जानने की क्षमता होनी चाहिए। साथ ही साथ समूह प्रक्रिया को प्रारम्भ करने, आगे बढ़ाने तथा नियंत्रण करने की भी क्षमता होनी चाहिए। निपुणता के तीन प्रमुख अंग है– ज्ञान, भावना एवं क्रिया।

कार्यकर्ता के लिए आवश्यक है कि वह अपने में उन निपुणताओं का विकास करे जो सामूहिक कार्य करने के लिए आवश्यक होती है। समूह के विचारों एवं अनुभवों को समझने तथा उनसे निपटने की क्षमता होनी चाहिए। वह समूह सदस्यों के विचारों एवं अनुभवों को समझने तथा स्पष्ट करने में समर्थ हो तथा उसी के अनुरूप कार्यक्रम को कार्यान्वित रखने की क्षमता रखता होइन गुणों के होने पर ही कोई कार्यकर्ता निपुण कहा जायेगा। उस संस्था, जिसकेअन्तर्गत वह कार्य करता है, उसके विषय में तथा समुदाय जिसके लिए वह कार्य करता है, उसके विषय में सम्पूर्ण जानकारी होनी चाहिए।

ट्रैकर के अनुसार –

1. उद्देश्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापन में निपुणता–सामूहिक कार्यकर्ता में समूह द्वारा स्वीकृति प्राप्त करने तथा साकारात्मक व्यवसायिक सम्बन्ध स्थापन की निपुणता होनी चाहिए।सामूहिक कार्यकर्ता में समूह के सदस्यों में एक दूसरे को स्वीकार करने तथा सामान्य लक्ष्य की प्राप्ति में सहायता प्रदान करने की निपुणता होनी चाहिए।

2. समूह के साथ सहभागिता की निपुणता–समूह में अपनी भूमिका निश्चित करने, उसका अर्थ निरूपत करने, ग्रहण करने व परिमार्जित करने की निपुणता होनी चाहिए। सामूहिक कार्यकर्ता को समूह के सदस्यों में सहभागिता विकसित करने, नेतृत्व का चयन करने और अपनी क्रियाओं के सम्बन्ध में उत्तरदायित्व स्वीकार करने में सहायता प्रदान करने की निपुणता होनी चाहिये ।

3. समूह की भावनाओं से निपटने का कौशल–समूह के प्रति अपनी भावनाओं को नियंत्रण करने तथा उच्च कोटि की विषयनिष्ठता सम्बन्धी प्रत्येक नवीन परिस्थिति की अध्ययन करने की निपुणता होनी चाहिए। समूह को अपनी नकारात्मक तथा सकारात्मक भावना को प्रकट करने में सहायता प्रदान करने की कुशलता होनी चाहिए।

4. कार्यक्रम विकास की निपुणता –सामूहिक कार्यकर्ता में सामूहिक चिंतन को निर्देशित करने की निपुणता होनी चाहिए, ताकि अभिरूचियों एवं आवश्यकतायें प्रकट हो और उन्हें समझा जा सके।सामूहिक कार्यकर्ता में ऐसे कार्यक्रम को विकसित करने की कुशलता होनी चाहिए जिसके माध्यम से समूह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके।

5. सामूहिक परिस्थिति के विश्लेषण की निपुणता–सामूहिक कार्यकर्ता में समूह के स्तर व इसकी आवश्यकता को जानने, समूह के विकास की व रूचि को निर्धारित करने की कुशलता होनी चाहिए।सामूहिक कार्यकर्ता में इस प्रकार सहायता करने का कौशल अपने विचारों कार्य के उद्देश्यों निकटतम लक्ष्यों का स्पष्टीकरण कर सके तथा अपनी क्षमताओं और सीमाओं को समझ सके।

6. अभिकरण व सामुदायिक साधनों के उपयोग की निपुणता –कार्यक्रम में सामूदायिक साधनों का ज्ञान व उनकी जानकारी समूह को देने की कुशलता होनी चाहिए, जिनका प्रयोग समूह के कार्यक्रमों में उपयोगी हो सके।

7. मूल्यांकन में कौशल –सामूहिक कार्यकर्ता में समूह की विकासात्मक गतिविधियों या प्रगतिआख्या के लेखन की आवश्यकता होनी चाहिए। अभिलेखों का प्रयोग करने अनुभवों में सहायता प्रदान करने की निपुणता होनी चाहिए।

संक्षेप में कहां जाए तो निपुणता से तात्पर्य व्यक्ति व समूह की सहायता करने में कार्यकर्ता को अपने ज्ञान, स्वविवेक, प्रविधियों तथा सिद्धान्तों का प्रयोग इस प्रकार करना चाहिए कि व्यक्ति व समूह के व्यवहारों में उचित परिवर्तन हो सके।

कार्यक्रम की विचारधारा ने समाज कार्य में महत्वपूर्ण योगदान किया है। परन्तु इसकी उत्पत्ति आधुनिक ही है, इसको पहले क्रियाओं तथा घटनाओं से सम्बन्धित किया जाता था। समूह इन क्रियाओं को सम्पन्न करता था जो समूह के सदस्यों एवं संस्थाओं को परिलक्षित होती थी । परन्तु समय के साथ–साथ परिवर्तन हुए और कार्यक्रम शब्द ने सामूहिक कार्य में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया। आज सामूहिक कार्य की लगभग प्रत्येक क्रिया कार्यक्रम के अन्तर्गत सम्मिलित की जाने लगी है।

कार्यक्रम (Programme) का अर्थ –ट्रैकर के अनुसार– साधारण भाषा में सामाजिक सामूहिक कार्य के अन्तर्गत कार्यक्रम का अर्थ कोई वस्तु तथा प्रत्येक वस्तु हो गया है जो समूह अपनी अमिरूचियों की संतुष्टि के लिये करता है । वृद्ध रूप में कार्यक्रम एक प्रत्यय है, जिसके अन्तर्गत वे समी क्रियायें, सम्बन्ध अन्तःक्रिया, अनुभव, व्याप्ति समूह जो जान–बूझकर नियोजित किये जाते हैं और कार्यकर्ता की सहायता से व्यक्तियों और समूहों की आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है, आती हैं। कार्यक्रम कार्यकर्ता के लिये एक यन्त्र (Tool) होता है जिसके द्वारा वह उद्देश्य की प्राप्ति करता है।

केलिन ने कार्यक्रम को परिभाषित करते हुये कहा है कि इसके अन्तर्गत वह सभी आता है। जिसे के सदस्य करते हैं उन्होंने क्रियाओं तथा कार्यक्रमों में अन्तर स्पष्ट करते हुये कहा है कि कार्यक्रम के अन्तर्गत शिरू अमिनय तथा रोल आदि आते हैं।

मिडिलमैन के अनुसार कार्यक्रम शब्द उन क्रियाओं में प्रयुक्त किया जाता है, जो वार्तालाप के स्थान पर करने पर अधिक महत्व देती है।

विंटर के अनुसार कार्यक्रम एक सामान्य प्रकार की क्रियायें हैं जिसमें सामाजिक व्यवहारों की कड़ी होती है। ये व्यवहार विस्तृत संस्कृति के अर्थों तथा उपलब्धि स्तर से निर्देशित होते हैं। इन कार्यक्रम क्रियाओं में एक अनोखे प्रकार का तरीका, एक तारतम्यता तथा निष्कर्ष होता है। कार्यक्रम में भौतिक पदार्थों के साथ अन्तःक्रिया का उपयोग होता है तथा अन्तःक्रिया होती है।

सामूहिक कार्य में कार्यक्रम एक प्रक्रिया के रूप में कार्यक्रम में –व्यक्तीकरण (Expression) के माध्यम वे चिशिष्ट साधन होते हैं जिनके द्वारा समूह किसी विशेष क्षेत्र में क्रियायें सम्पन्न करता है। मनोरंजन, ड्रामों, नृत्य, संगीत, वाद–विवाद, वार्तालाप, खेलकूद,

कला, शिल्प आदि कार्यक्रम के माध्यम हैं। कार्यकर्ता सबसे पहले कार्यक्रम चलाने के लिये समूह को Functional organizationबनाने के लिये सहायता करता है। वह समूह की विषयवस्तु का क्षेत्र तथा प्रगटन का माध्यम चुनने में सहायता करता है। परन्तु इससे पहले वह समूह की रूचियों की खोज करता है। वह समूह की सहायता इस प्रकार से करता है जिससे वह अपने ही स्त्रोतों का उपयोग अधिकाधिक कर सके। कार्यकर्ता का संबंध मुख्यतः तीन बातों से होता है (1) क्या कार्यक्रम है (विषय वस्तु), (2) कार्यक्रम किस प्रकार चलेगा (How) माध्यम से कार्यक्रम क्यों चलाया जायेगा (Why) – उद्देश्य। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि कार्यक्रम के 3 आवश्यक अंग हैं–

(1) विषयवस्तु का क्षेत्र– विषयवस्तु का तात्पर्य है कि कार्यक्रम के अन्तर्गत हम किनदृ किन क्रियाओं का समावेश करते हैं, समूह क्या अनुभव प्राप्त कर रहा है और उसका विकास किस दिशा में हो रहा है। साधारणतया इसका अर्थ उस क्षेत्र से समझा जाता है जिसको कि कार्यक्रम पूरा कर रहा है।

(2) माध्यम – माध्यम का मतलब उन साधनों से है जिनका उपयोग समूह अपने अनुभव के लिये करता है।

(3) पद्धति – सामूहिक कार्य में पद्धति का तात्पर्य समूह की संपूर्ण प्रक्रिया से है। कार्यकर्ता सबसे पहले समूह की आवश्यकताओं एवं इच्छाओं की खोज करता है तथा समूह को कार्यात्मक संगठन के रूप में संगठित करता है, जिससे वह उत्तरदायित्वपूर्ण निर्णय ले सकने में समर्थ हो। वह कार्यक्रम की विषयवस्तु का चुनाव करता है और माध्यम निर्धारित करता है, कार्यक्रम के तथ्यों का निरूपण करता है तथा समस्या का निदान करता है। अन्त में उपचार की प्रक्रिया आती है। उपचार होने के बाद समूह को स्थगित कर दिया जाता है।

कार्यक्रम प्रक्रिया के तत्व रू कार्यक्रम प्रक्रिया के तीन आवश्यक तत्व हैं–(1) सदस्य, (2)सामूहिक कार्यकर्ता और (3) कार्यक्रम की विषयवस्तु।

इन तीनों तत्वों की अपनी अलग–अलग विशेषतायें होती है और इनमें सम्मिश्रण से सामूहिक कार्य क्रियाओं का सम्पादन होता है।

कार्यक्रम के सिद्धान्त

1.कार्यक्रम का उपयोग समूह चिकित्सा के रूप में किया जाना चाहिये अर्थात् किसी भी कार्यक्रम का उद्देश्य लघु–कालीन (साधारण मनोरंजन) न होकर दीर्घकालीन और स्थायी प्रभावकारी होना चाहिये।

2. कार्यक्रम क्रियाओं के चलाने का निर्णय समूह का होना चाहिये अर्थात अपनी समस्या का समाधान वे किस प्रकार करना चाहते हैं, उन्हें निर्णय लेने का अधिकार होना चाहिये।

3. कार्यक्रम का उपयोग समूह प्रक्रिया को परिवर्तित करने के लिये किया जाना चाहिये।

4. सदस्यों की आवश्यकताओं, निपुणताओं और रूचियों के अनुरूप ही कार्यक्रम होने चाहिए।

5. कार्यक्रम के प्रभाव का मूल्यांकन निरन्तर होना चाहिये।

6. कार्यक्रम का उपयोग समुह कार्य के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये किया जाना चाहिये।

समूह के लिये कार्यक्रम का महत्व – समूह के लिये कार्यक्रम अत्यन्त उपयोगी है क्योंकि कार्यक्रमों के माध्यम से ही विभिन्न क्रियाओं को सम्पन्न किया जाता है, जिसके कारण समूह किसी क्रिया को मनोरंजन प्राप्त करते हैं। इसके द्वारा संवेगों की अभिव्यक्ति होती है, परिणामस्वरूप शारीरिक एवं मानसिक विकास संभव होता है। पारस्परिक अन्तःक्रिया के कारण सदस्य एक–दूसरे के निकट आते हैं और एक–दूसरे के विषय में जानकारी प्राप्त करते हैं तथा साथ ही समान आवश्यकताओं का पता चलता है। कार्यक्रम क्रियायें समूह को प्रेम, सौहार्द्र मिन्नातायें तथा उग्रतायें आदि मनोभावों को व्यक्त करने का अवसर देता है। इससे उमें पररूपर महत्व की इच्छा पूरी होती है। कार्यक्रम के नियोजन से समूह को निर्णय लेने तथा उत्तरदायित्व को स्वीकार करने का अवसर प्राप्त होता है।

संघर्ष का निवारण भी कार्यक्रम द्वारा ही होता है। कार्यक्रमों के कारण ही लोग एक स्थान पर एकत्रित होते हैं, जिससे एक दूसरे को समझने तथा समस्याओं पर विचार विमर्श करने का अवसर मिलता है। कार्यक्रम से मानसिक स्वास्थ्य का विकास होता है। समूह – क्रियाओं में भाग लेकर अपनी संघर्षमयी भावनाओं को व्यक्त करता है, जिससे उसे राहत मिलती है। यह सामूहिक परिवर्तन का आकरण यंत्र भी है।

नियोजन का अर्थ – कार्यक्रम का अर्थ समझ लेने के बाद यह आवश्यक हो जाता है कि नियोजन का अर्थ समझें, क्योंकि काम नियोजन द्वारा ही उद्देश्य पूर्ति के लिये वास्तविक प्रयास करते हैं। किसी कार्य को निश्चित लक्ष्य प्राप्त करने के लिये व्यवस्थित रूप से सम्पन्न करना ही नियोजन होता है।

नियोजन के अन्तर्गत विद्यमान स्थितियों तथा सम्भावित परिवर्तनों की उपयोगिता को ध्यान में रखकर एक नियमित व्यवस्थित तथा सुसंगठित रूपरेखा तैयार की जाती है, जिससे भविष्य में परिवर्तनों को अपेक्षित लक्ष्यों के अनुरूप नियंत्रित, निर्देशित तथा संशोधित किया जा सके। नियोजन भौतिक पर्यावरण का कुशलतापूर्वक उपयोग करने की प्रक्रिया है।

समाजशास्त्रीय शब्दकोश में नियोजन की धारणा को निम्न प्रकार से स्पष्ट किया गया है रू नियोजन लक्ष्यों का आरोपण, उनकी पूर्ति के लिये साधनों की व्यवस्था और क्रियाओं के व्यवस्थित रूपों, जोकि सामान्य सामाजिक व्यवस्था से उत्पन्न होते हैं, का प्रयोग है।

जब हम समूह द्वारा विकास एवं उन्नति का प्रयास करते हैं तो हमें उसके अनुकूल कार्य की पद्धतियों का निश्चय करना होता है। हम नियोजन द्वारा समूह की समस्त क्रियाओं को इस प्रकार व्यवस्थित करते हैं कि समस्त प्रक्रिया को समन्वित रूप से चलाया जा सके तथा समूह में परिवर्तन सम्भव हो सके।

सामूहिक कार्य में नियोजन का महत्व

यदि सामूहिक कार्य सेवायें आवश्यक हैं तो उनका नियोजन करना कार्यकर्ता का आवश्यक कार्य है। वर्तमान समय में नियोजन पर बहुत अधिक ध्यान दिया जाने लगा है। यद्यपि सेवाओं का विस्तार हुआ है। लेकिन अभी भी बहुत से लोग सामाजिक सेवाओं से वंचित

हैं। अतः सेवाओं को नियोजित आधार पर व्यवहार में लाना आवश्यक है। नियोजन करना समूह कार्य में आवश्यक है, क्योंकि ये सेवायें उनकी उपलब्ध कराई जाती है जो इससे वंचित हैं परन्तु उनके लिये आवश्यक है। उपलब्ध सेवाओं में सुधार केवल योजनाबद्ध तरीके से ही किया जा सकता है। यह कार्यकर्ता का उत्तरदायित्व है कि वह नियोजन प्रक्रिया में नेतृत्व ग्रहण करे, जिससे समूह को उच्चकोटि की सेवायें उपलब्ध करा सकें।

कार्यक्रम नियोजन

अपनी संस्था / समूह के बाह्य परिवेश में अपेक्षित बदलाव लाने हेतु कार्यनीति के अनुरूप कार्यनैतिक नियोजन एक अति महत्वपूर्ण मुद्दा है। अपनी निर्धारित कार्यनीति के अनुरूप मुद्दों, विषयों, समस्याओं व सामुदायिक आवश्यकताओं की प्राथमिकतायें निश्चित कर उनके आधार पर सांगठनिक गतिविधियों का विस्तृत नियोजन ही कार्यक्रम नियोजन है।

प्रत्येक संस्था / समूह में अन्तिम लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु कुछ कार्यनीति बनाई जाती है। साथ ही साथ जब बाह्य परिवेश के निर्णायक अंगों के संबंध में अपेक्षित परिवर्तन करने के लिये कार्ययोजना बनाई जाती है तब कुछ आवश्यकतायें निकलती हैं तथा इसी के साथ संस्था के लक्ष्य समूह की भी कुछ आवश्यकतायें होती हैं। कार्यक्रम नियोजन के पहले चरण में इन सभी प्रकार की आवश्यकताओं में तालमेल बैठाना आवश्यक हो जाता है। इस तालमेल के फलस्वरूप कार्यक्रम का ठोस स्वरूप निकल पाता है। अतः इसकी व्याख्या एक आवश्यक कदम हो जाती है।

उपरोक्त व्याख्या के आधार पर जो कार्यक्रम उभरते हैं उनके लिये छोटे–छोटेउद्देश्य तय करने पड़ते हैं। अर्थात कुछ ऐसी चीजें तय करनी पड़ती हैं जिनकी प्राप्ति कार्यक्रम होने पर हो सके। उदाहरण स्वरूप यदि हमने एक कार्यक्रम तय किया है, कि महिलाओं के लिये आर्थिक विकास। तब इसके उद्देश्य निम्नवत् होंगे–

1. महिलाओं के बीच आर्थिक विकास हेतु चेतना जागृत करना।

2. आर्थिक विकास के सन्दर्भ में प्रशिक्षण शिविर आयोजित करना।

3. बाजार इत्यादि की व्यवस्था।

इसके बाद कार्यक्रम क्रियान्वयन की कार्यनीति विकसित करनी पड़ती है। दूसरे शब्दों में तय किये गये कार्यक्रमों एवं उनके उद्देश्यों की प्राप्ति करने के लिये एक दिशा तय करनी पड़ती है कि कैसे हम इन उद्देश्यों की प्राप्ति कर सकेंगे। इसके लिये एक चरणबद्ध योजना बनानी पड़ती है कि सर्वप्रथम क्या–क्या करेंगे, उसके बाद क्या–क्या होगा एवं अन्त में क्या होगा, आदि।

चरणबद्ध योजना बना लेने के उपरान्त यह तय करना पड़ता है, कि प्रत्येक चरण के लिये क्या–क्या गतिविधियों होंगी? इन गतिविधियों की सूक्ष्म एवं विस्तृत सूची तैयार की जाती है। इस कार्य को काफी विस्तार पूर्वक किया जाना चाहिए क्योंकि यह जितना विस्तृत होगा, गल्तियां होने की सम्भावनायें उतनी ही कम होंगी।

यहां पर छोटी से छोटी चीजों पर भी ध्यान देना आवश्यक होता है। यहां पर कल्पनाशीलता का अत्यधिक उपयोग करना पड़ता है।

समय के गतिविधियों का विस्तृत रूप से निरूपण कर लेने के उपरान्त बारी आती है, नियोजन की। प्रत्येक गतिविधियों के अनुरूप उनके लिये लगने वाले समय की योजना बनानी पड़ती है। क्योंकि हमारे पास संसाधनों की सीमायें होती हैं। जिसके परिणामस्वरूप हमारे लिये यह संभव नहीं है कि जब तक चाहें जिस किसी गतिविधि को करते रहा जाये । अतः समय है बजट बनाना कार्यक्रम नियोजन का एक प्रमुख अंग है। इससे हमें यह भी पता चलता रहता कि कौन सी गतिविधि कब प्रारम्भ होगी तथा कब समाप्त होगी, फिर उसके पश्चात क्या–क्या किया जायेगा, इत्यादि ।

उदाहरणस्वरूप जैसे पुनः हम महिला आर्थिक विकास कार्यक्रम को ही लें तो यह तय करना कि चेतना जागृति के लिये कब से कब तक कार्य किया जायेगा? इसके पश्चात यदि प्रशिक्षणं रखने हों तो कितने दिनों का प्रशिक्षण होगा? कब से कब तक चलेगा। प्रशिक्षण के बाद कच्चा माल कब खरीदा जायेगा, इत्यादि।

इसके बाद यह आवश्यक होता है कि संस्था में ६ समूह में उपलब्ध वर्तमान मानव संसाधन (संख्या एवं क्षमता) एवं वित्तीय संसाधनों का आंकलन किया जाये तथा जिस कार्यक्रम का नियोजन किया जा रहा है, उसकी आवश्यकताओं से इनकी तुलना की जाये। इससे यह पताचल जाता है कि और कितने तथा किस प्रकार की क्षमता वाले व्यक्तियों की आवश्यकता होगी तथा और किन–किन गतिविधियों के लिये वित्तीय संसाधन की आवश्यकता होगी।

इसके बाद के चरण में कार्यक्रम की आवश्यकताओं को देखते हुए मानव संसाधन का (संख्या के साथ–साथ क्षमताओं का भी) एवं वित्तीय तथा अन्य साधनों का अनुमान किया जाता है। यहां भी इसको विस्तृत रूप से तथा छोटे–छोटे टुकड़ों में बांटकर करना आवश्यक हो जाता है। इस पूरे अभ्यास से कार्यक्रम नियोजन का हमारा चक्रपूर्ण हो जाता है। अब यह देखना जरूरी है कि कार्यक्रम नियोजन के लिये हमारे पास कौन–कौन सी जानकारियां होनी चाहिए। इसके लिये हमारे पास–

– संस्था के विजन / मिशन की जानकारी होना चाहिये

– कार्यनीति की जानकारी

–कार्यनैतिक आवश्यकताओं की जानकारी

– समुदाय की आवश्यकताओं की जानकारी

–परिवेश में उपलब्ध अवसरों की समझ का होना आवश्यक होता है।

विकास का अर्थ

सामूहिक कार्य में विकास शब्द का विशेष महत्व है। कार्यक्रम का नियोजन ही पर्याप्त नहीं है, उसका विकास करना उतना ही आवश्यक है। सामूहिक कार्य में हम विश्वास रखते हैं कि सामूहिक अनुभव के लिये कार्यक्रम का विकास अत्यन्त आवश्यक होता है।

समूह में सदैव परिवर्तन होता है, क्योंकि परिवर्तन एक सामाजिक प्रक्रिया है। अतएव विकास भी निरन्तर गति से चलता रहता है। कार्यक्रमों का विकास भी इसी कारण अनिवार्य होता है। इसमें विकास के एक स्तर से दूसरे स्तर के साथ सम्बन्ध होता है तथा उसकी एक निश्चित दिशा होती है। यह परिवर्तन सरल स्तर से जटिल स्तर की ओर होता है।

कार्यक्रम नियोजन तथा विकास में अभिकरण (Agency) का महत्व

अभिकरण के लिये कार्यक्रम का तात्पर्य उन क्रियाओं और सेवाओं से हैं जो उद्देश्य की प्राप्ति के लिये तरीके के रूप में उपयोग की जाती है। कार्यक्रम सदैव अभिकरण के माध्यम से ही किये जाते हैं। कार्यक्रम के नियोजन तथा विकास में अभिकरण का ध्यान रखना आवश्यक है।

कार्यक्रम नियोजन तथा विकास में कार्यकर्ता की भूमिका

कार्यकर्ता कार्यक्रम नियोजन एवं विकास में निम्न प्रकार से सहायता करता है–

1. सदस्यों को कार्यक्रम नियोजित करने में सहायता
2. समूह की रूचियों की खोज करना तथा उनको उत्पन्न करना
3. पर्यावरण का उपयोग
4. सीमाओं का उपयोग
5. सुनना, अवलोकन करना तथा कार्य करना
6. विश्लेषण एवं अभिलेखन
7. निरीक्षण तथा परामर्श
8. शिक्षा तथा नेतृत्व
9. निपुणता प्राप्त करने में सहायता
10. नेतृत्व में सहायता
11. विशेषज्ञ का उपयोग
12. वृद्ध समूह तथा सामाजिक सामूहिक कार्य

सामूहिक कार्य में अभिलेखन का अर्थ

सामूहिक कार्यकर्ता के कार्यों में प्रतिवेदन तथा अभिलेखन भी एक महत्वपूर्ण कार्य है। अभिलेखन में व्यक्ति की क्रियाओं, सम्बन्धों तथा अन्तःक्रिया को लिखा जाता है। कार्यकर्ता यह लिखता है कि सामूहिक स्थिति में एक विशेष व्यक्ति क्या कर रहा है। उसका क्या योगदान है तथा वह किस इच्छा से कार्य कर रहा है। वह किस प्रकार से भाग ले रहा है। समूह से कैसे सम्बन्ध रख रहा है तथा सदस्यों में अन्तःक्रिया का क्या रूख है। समूह की उन्नति और विकास के लिए कार्य कर्ता एक सहायक के रूप में क्या सहायता देता है, उसका समूह के प्रति क्या दृष्टिकोण है, उसमें कितनी क्षमता एवं योग्यता समूह को सही दिशा में संचालित करने की है, इत्यादि बातों को लिखते हैं।

सामूहिक कार्य अभिलेखन का तात्पर्य निम्न घटनाओं को क्रमबद्ध रूप से अंकित करना है–

1. समूह के सदस्यों के व्यवहारों का वर्णन

2. सदस्यों के भाग लेने के प्रकार का विस्तार

3. सदस्यों के परस्पर एक–दूसरे के प्रति सम्बन्धित होकर कार्य प्रक्रिया।

4. सदस्यों के विचारों की उत्पत्ति तथा विकास

5. विचारों की स्वीकृति तथा अस्वीकृति

6. परस्पर उत्तेजनात्मक कार्य तथा मनोवैज्ञानिक रूप से कार्य करने की दिशा

7. कार्यकर्ता द्वारा समूह की सहायता के प्रयत्न

8. कार्यकर्ता द्वारा समूह की स्थिति के विषय में विचार एवं अनुभव

9. कार्यकर्ता उद्देश्य तथा उनकी उपलब्धियां

10. व्यक्तियों तथा समूहों में परिवर्तन

11. समूह और अभिकरण के बीच सम्बन्ध

12. कार्यक्रम की उपयोगिता

अभिलेखों का उद्देश्य

1.सामूहिक कार्य अभिलेखखन का सर्वप्रथम उद्देश्य समूह सदस्यों की इच्छाओं एवं रूचियों को समझना है।

2. अभिलेखन के माध्यम से कार्यकर्ता को अपनी भूमिका का ज्ञान।

3. अभिलेखों से समूह में होने वाले परिवर्तन का ज्ञान होता है।

4. अभिलेखों की सहायता से समूह में होने वाले विकास तथा उन्नति का ज्ञान होता है।

5. अभिलेखों से समूह के सम्बन्धों का ज्ञान होता है।

6. जब कार्यकर्ता पिछले अभिलेखों का अवलोकन करता है तो उसे पता चलता है कि समूह किस प्रकार की सेवाएं प्रदान कर चुका है और उसे अब किस प्रकार की सेवाएं आवश्यक हैं।

7. अभिलेखकों की सहायता से सुपरवाइजर कार्यकर्ता की शक्तियों, क्षमताओं, कला कौशल तथा निपुणताओं का ज्ञान प्राप्त करता है, जिसके आधार पर वह कार्यकर्ता की सहायता करता है।

8. अभिलेखों द्वारा मूल्यांकन का कार्य सम्भव होता है।

निम्नलिखित बातों को कार्यकर्ता अपने अभिलेखन में शामिल करता है–

1– समूह की परिचय सम्बन्धी सूचनायें

1. समूह का नाम

2. मिलने का दिन तथा दिनांक

3. मिलने का स्थान

4. सदस्यों की उपस्थिति तथा अनुपस्थिति की संख्या का नाम

5. यदि कोई नया सदस्य सम्मिलित हुआ है तो उसकी प्राथमिक सूचना

6. संस्था की भौतिक सूचनाएं

7. मौसम अन्य दशायें जिनमें सदस्यों की उपस्थिति पर असर पड़ता है

8. महत्वपूर्ण अवलोकन

2– सदस्यों के विषय में जानकारी

1. सदस्यों के भाग लेने की दशा

2. बातचीत करने का ढंग

3. परस्पर सम्बन्धों का रूप

4. प्रत्येक सदस्य की भाग लेने की क्षमता तथा सीमा भाग लेने का अनुक्रम

5. सदस्यों के योगदान का महत्व

6. समूह सदस्यों की अन्तः क्रियाएं

7. सदस्यों में क्रियाएं तथा प्रतिक्रियाएं

8. सदस्यों की भाग लेने के कारण सांकेतिक मनोवैज्ञानिक स्थिति

9. सदस्यों का व्यवहार

10. समूह का व्यवहार

3–कार्यक्रम क्रियाओं में भागीकरण

1. कार्यक्रम में क्रियाओं का रूप

2. कार्यक्रम क्रियाओं में भाग लेने की दशा

3. सदस्यों की सकरात्मक तथा नकारात्मक प्रत्युत्तर

4. कार्यक्रम क्रियाओं से अनुभव की सीमा

4– विचारों की उत्पत्ति एवं विकास

1. सदस्यों के विचार

2. विचारों में परिवर्तन

3. परिवर्तित विचार तथा उनकी स्वीकृति

4.सदस्यों का एक दूसरे के प्रति लगाव

5.संदस्यों की रूचियां

6.सदस्यों के अनेक मसलों पर विचार

7. उत्तेजनात्मक शक्तियां

5– सामूहिक कार्यकर्ता की भूमिका तथा सम्बन्ध

1.कार्यकर्ता द्वारा दी जाने वाली सुविधायें

2.कार्यक्रम के कार्य द्वारा दी जाने वाली सुविधायें

3.सलाह का रूप

4.सुझाव का रूप

5. वार्तालाप में भागीकरण

6. क्रियाओं का निर्देशन

7. अभिकरण के हितों तथा कार्यों व सुविधाओं का अनुमान

8. सामूहिक स्थिति के प्रति विचार तथा कार्य सारणी

6– समूह के व्यक्तियों के साथ कार्यकर्ता की भूमिका का वर्णन रू व्यक्ति की समस्या

1. समस्या का रूप

2. समस्या समाधान के उपाय

3. समाधान करने का अपनाया गया तरीका स्त्रोतों का उपयोग

7– प्रत्येक मीटिंग का मूल्यांकन

1. समूह की क्रियाओं का मूल्यांकन

2. सम्पूर्ण कार्य का निष्कर्ष

3. प्रत्येक सदस्य का आलोचनात्मक वर्णन

4. सफलता, असफलता के कारण

5. कार्यकर्ता की भूमिका की आलोचना

अनिलेखन के सिद्धांत

लिन्डसे ने अभिलेखन के पांच सिद्धान्त बताये हैं–

1– लोच का सिद्धान्त–इसके अनुसार अभिलेखन अभिकरण के उद्देश्यों के अनुरूप हो, क्योंकि अभिकरण के उद्देश्य और समूह के उद्देश्य एक–दूसरे से सम्बन्धित होते हैं।

2– चुनाव का सिद्धान्त –इसका तात्पर्य यह है कि कार्यकर्ता अभिलेख में सब कुछ नहीं लिखता है, वरन महत्वपूर्ण स्थितियों जैसे– व्यक्ति के विकास तथा समूह की उन्नति पर प्रकाश डालता है।

3– पठनीय सिद्धान्त –अभिलेखों के भावों की स्पष्टता होती है तथा ढंग उचित रहता है।

4–विश्वसनीयता का सिद्धान्त–अभिलेखों को सदैव गुप्त रखना चाहिए तथा केवल व्यवसायिक रूप में उनका प्रयोग करना चाहिए।

5– कार्यकर्ता की स्वीकृति का सिद्धान्त –कार्यकर्ता यह उत्तरदायित्व महसूस करे कि उसके अन्य कार्यों में से अभिलेख तैयार करना भी एक आवश्यक कार्य है। इन गुणों के होने पर ही एवं व्यवसायिक मनोवृत्ति हो सकती है।

इकाई – पंचम

5.1 वैयक्तिक एवं सामूदायिक विकास में सामूहिक कार्य की भूमिका

5.2. सामूहिक कार्यक्रम सम्बन्ध में भूमिका

व्यक्तिगत और सामुदायिक विकास हेतु समूह की भूमिका रू प्रस्तावना

सामाजिक कार्य की एक अन्य महत्वपूर्ण विधि समूह कार्य है। इसमें व्यक्ति को सहायता के माध्यम से और उसके सदस्य के नाते दी जाती है। समूह कार्यकर्ता समाजसेवी किसी समूह संस्थाओं की प्रबन्ध व्यवस्था में व्यक्तियों तथा समूहों की सहायता इस प्रकार करता है कि उनमें दूसरे लोगों से सार्थक सम्बन्ध स्थापित करने की क्षमता का विकास हो सके और वे अपनी–अपनी आवश्यकताओं और क्षमताओं के अनुरूप अवसरों का उपयोग और आत्मविकास कर सकें।

समूह कार्य में व्यक्ति सामाजिक कार्यकर्ता की सहायता से अपने व्यक्तित्व के विकास, परिवर्तन और संवर्धन के लिए समूह को साधन के रूप में प्रयोग करता है। सामाजिक कार्यकर्ता व्यक्तियों की पारस्परिक क्रिया–प्रतिक्रिया के संदर्भ में निर्देशन कार्य करते हुए व्यक्तिसमूहगत की प्रगति और पूरे समूह के उत्थान के लिए प्रयत्नशील होता है।

साधारणतः समुदाय शब्द का अभिप्राय किसी समुदाय की आवश्यकताओं तथा साधनों के बीच समन्वय स्थापित कर समस्याओं का समाधान करने से है। सामुदायिक संगठन एक प्रक्रिया है। इस रूप में सामूदायिक संगठन का तात्पर्य किसी समुदाय या समूह में लोगों द्वारा आपस में मिलकर कल्याण कार्यों की योजना बनाना, उसके लिए उपाय तथा साधनों को निश्चित करना है। सामुदायिक संगठन में सेवार्थी समुदाय होता है।

इसका प्रमुख उद्देश्य समुदाय की ऐसे सहायता करना है जिससे वह अपनी सहायता स्वयं करने में समर्थ हो सके। इसकी प्रक्रिया उद्देश्य मूलक होती है।

वैयक्तिक एवं सामुदायिक विकास हेतु समूह की भूमिका

व्यक्ति के विकास में समूह का योगदान सदा से महत्वपूर्ण रहा है। समूह के स्तर पर ही अन्तर्वैयक्ति सम्बन्धों का विकास होता है। इसका अभिप्राय दूसरे व्यक्तियों को स्वीकार करना और दूसरे व्यक्तियों द्वारा स्वयं को स्वीकार किया जाना है। इसे दूसरे शब्दों में सामाजिक व्यस्कता का विकास समूह द्वारा सम्भव होता है।

इस विकास में पारिवारिक समूह का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। पारिवारिक सम्बन्धों द्वारा उन सामाजिक उपकरणों का योगदान सदा से विकास होता है जो सामाजिक सहचार के लिए सहायक होते हैं। व्यक्ति को सामाजिक व्यस्कता के विकास के लिए जितना अधिक अवसर मिलेगा, समाज के साथ उसका समायोजन भी उतना ही अधिक शक्तिशाली होगा।

नर्सरी स्कूल, किंडरगार्डन स्कूल, पड़ोस, समिति इत्यादि सामाजिक व्यस्कता के विकास सहायक होती है। इनके.सम्पर्क से मनुष्य में दो प्रकार के अनुभव विकसित होते हैं। कुछ अनुभव व्यवस्थापन में सहायक होते हैं और कुछ हानिकारक। इस सामाजिक व्यस्कता

केविकास में व्यक्ति के सामाजिक और वैयक्तिक पक्ष को समान रूप से महत्व दिया जाना चाहिए। इन दोनों सम्बन्ध से ही व्यक्ति वास्तविक सामाजिक व्यस्कता को प्राप्त करता है।

आधुनिक समाज ने अपने संगठन की प्रकृति के अनुसार समूहों के महत्व को एक नवीन दिशा प्रदान की है। आधुनिक समाज समूह की अनुभूति होना, व्यक्ति के लिए अत्यन्त आवश्यक है। समूह के द्वारा व्यक्ति समाज को अपना योगदान देता है। श्रम संगठन, व्यवसायिक संगठन, राजनीतिक संगठन –सब इस प्रकार के योगदान देने वाले संगठन हैं।

यदि व्यक्ति की सेवा व्यक्ति के रूप में की जाती है तो वैयक्तिक सेवा कार्य प्रणाली का प्रयोग किया जाता है। यदि व्यक्ति की सेवा समूह कोई कार्य मानकर की जाती है तो समूह सेवा कार्य प्रणाली का उपयोग किया जाता है।

यदि व्यक्ति की सेवासमुदाय के रूप में की जाती है तो सामुदायिक संगठन का प्रयोग किया जाता है। चूंकि तीनों प्रणालियों द्वारा व्यक्ति की ही सेवा की जाती है। इसलिये तीनों के उद्देश्य (मानव कल्याण) सिद्धान्त, उददेश्य तथा सेवा के चरण (अध्ययन, निदान तथा उपचार) समान होते हैं।

वैयक्तिक सेवाकार्य व्यक्ति की प्राथमिक रूप से मनो सामाजिक व संवेगात्मक समस्या का निवारण कर रहा है। वहीं समूह कार्य समूह के रूप में कार्यक्रम के द्वारा व्यक्ति में नेतृत्व विकास करने में मदद करता है और सामुदायिक संगठन में व्यक्ति को समुदाय के रूप में उनके आवश्यकता तथा साधन के बीच प्रगतिशील संयोजन स्थापित करके करता है।

सामुदायिक संगठन शब्द उतना ही प्राचीन है, जितना कि सामुदायिक जीवन । ऐसा इसलिये है क्योंकि जहां कहीं भी लोग साथ रहते हैं वहां संगठन आवश्यक हो जाता है लेकिन जब जीवन अधिकजटिल हो जाता है तो ऐसी दशा में समुदाय के कल्याण के लिए कुछ औपचारिक संगठनों की आवश्यक होती है।

सेवाकार्य के व्यापक उद्देश्य

1. सामूहिक सामान्य रूप से सामूहिक सेवाकार्य का उद्देश्य व्यक्तियों के सामाजिक सामंजस्य में उन्नति करना और समूह की सामाजिक चेतना को बढ़ाना है।

2.सामूहिक सेवा व्यक्तित्व के विकास के लिये व्यक्तियों को पारस्परिक रूप से संतोषजनक अनुभव उपलब्ध करता है।

3. सामूहिक सेवाकार्य यह चाहता है कि उन्नति एवं विकास के सर्वोच्च स्तर पर पहुंचने के लिए समूह एक इकाई के रूप में अपनी संस्था और समुदाय के अन्य समूहों से उत्तरदाई और सहकारी सम्बन्ध स्थापित करें।

4. सामूहिक सेवाकार्य का उद्देश्य है कि व्यक्तियों की सहायता की जाये, जिस समूह या समुदाय के वे सदस्य हैं, उसकी क्रियाओं में बुद्धिमान रूप से भाग ले सकें।

5. आवश्यक है कि व्यक्तियों को इस बात का अवसर मिले कि वे समूह के प्रति एकता की भावना उत्पन्न कर सके दूसरे व्यक्तियों की स्वीकृति प्राप्त कर सकें और समूह में अपने को सुरक्षित समझ सके।

6. सामूहिक सेवाकार्य एक दूसरे से भी कार्य करता है यह व्यक्तियों को ऐसे अनुभव उपलब्ध करता है कि जो उन्हें शिथिलता प्रदान करते हैं और रचनात्मक शक्ति विकसित करने, सामूहिक जीवन में भाग लेने और आत्म प्रकटन करने के अवसर उपलब्ध करते हैं।

7. सामाजिक सामूहिक सेवाकार्य व्यक्तियों में इस बात की योग्यता उत्पन्न करता है कि वे अपने व्यवहार के लिये स्वयं उत्तरदायी समझे और सामाजिक जीवन में सहयोग करें।

इस प्रकार सामूहिक सेवाकार्य सामुदायिक जीवन की उन्नति में सहायता करता है। जो व्यक्ति संतोषजनक सामूहिक सम्बन्ध स्थापित करने में सफल हो जाते हैं वे सामाजिक रूप से परिपक्व हो जाते हैं और उन्हें इस बात का ज्ञान हो जाता है कि आधुनिक जीवन की सामूहिक मांगों को किस प्रकार पूरा करना चाहिए।

समूहकार्य के प्रयोजन

1. व्यक्तियों को मिल–जुल कर रहने और काम करने का और अपने बौद्धिक, सांवेगिक और शारीरिक उत्कर्ष के लिए सदस्यों के रूप में समूह कार्यों में भाग लेने का शिक्षण देना।

2. व्यक्ति के व्यक्तित्व को सामूहिक प्रक्रम के माध्यम से विकसित करके समायोजन सम्बंधी समस्याओं को हल करना।

3. व्यक्तियों को इस प्रकार शिक्षित करना कि उनमें लोकतांत्रीय व्यवस्था में सक्रिय तथा दायित्वपूर्ण नागरिकों की हैसियत से काम करने की क्षमता पैदा हो जाये।

4. नेतृत्व की क्षमता वाले व्यक्तियों को विकास के अवसर प्रदान करना।

5. श्रम विभाजन तथा श्रम विभाजन द्वारा निर्दिष्ट द्वारा अपने विशिष्ट कार्यों को करने की क्षमता का विकास करना।

6. संस्थाओं तथा औद्योगिक नगरों में सुरक्षा प्रदान करने के लिए परिवार की स्थानापूर्ति करना और द्वितीयक समूहों (Secondary Groups) के साथ समायोजन स्थापित करने की क्षमता पैदा करन। करने, शगल

7. अपनी परिधि तथा सामाजिक चेतना को व्यापक बनाने, मित्रता कायम करने, Hobbyजारी रखने और कौशल सीखने में व्यक्तियों की सहायता करना।

8. व्यक्तियों के शारीरिक, मानसिक और सांवेगिक असमायोजन की स्थिति में समायोजन स्थापित करना।

उपरोक्त बिन्दुओं के आधार पर वैयक्तिक विकास में समूह की भागीदारी होती है। समूह द्वारा व्यक्ति के विकास में उपरोक्त उपाय किये जाते हैं।

इसी प्रकार से समुदाय में भी व्यक्ति का विकास करके समुदाय की उन्नति की जाती है ताकि सामुदायिक जीवन उन्नत हो सके।

एक बड़े समुदाय में कई प्रकार के समूह बनाये जा सकते हैं और उन समूहों का विकास करके ही समुदाय का विकास संभव है।

समुदाय एक ऐसा सामाजिक समूह है जिसमें कुछ अंशों में श्हम की भावना पाई जाती है तथा जो एक निश्चित क्षेत्र में रहता है। एक मानव जनसंख्या जो एक निश्चित गौगोलिक क्षेत्र में निवास करती है और जो सामान्य एवं अन्योन्याश्रित जीवन व्यतीत करती है।

जैन समुदाय आदि जैसे– ब्राम्हण समुदा, ईसाई समुदाय, हिन्दु समुदाय, सिक्ख समुदाय, सामान्यतः श्समुदायश शब्द का प्रयोग इन अर्थों में नहीं किया जाता। किसी गांव, कस्बे, नगर, महानगर तथा देश को समुदाय माना जाता है। इन सभी समूहों के साथ एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र जुड़ा हुआ है।

उपसंहार

वैयक्तिक एवं सामुदायिक विकास में समूह की महत्वपूर्ण भूमिका है। समूह में विभिन्न कार्यक्रम चलाकर व्यक्ति एवं समुदाय दोनों का विकास किया जाता है। व्यक्ति के विकास द्वारा ही समूह का विकास संभव है और समूह के विकास से ही समुदाय विकसित होता है।

सामूहिक कार्यकर्ता समूह के सदस्यों के बीच होने वाली अन्तक्रियाओं की प्रक्रिया के माध्यम से कार्य करता है। समूह का प्रत्येक सदस्य दूसरे सदस्य को कई माध्यमों से प्रभावित करता है। कार्यकर्ता समूह की इन अन्तर्क्रियाओं की विषय वस्तु को समझता है। क्योंकि समूह में सदस्यों द्वारा भाग लेने की कई चरम सीमाएं हो सकती हैं।

जब एक सदस्य दूसरे की मदद दोस्ती या स्वीकृति पाने के लिये करता है तो दोनों ही सदस्य लाभान्वित होते हैं और इस प्रकार सम्पूर्ण समूह प्रभावित होता है, साथ ही साथ समुदाय भी ।

सामाजिक सामूहिक कार्यकर्ता की भूमिका

प्रस्तावना

मनुष्य एक सामूहिक प्राणी है। वह समूह से पृथक किसी भी स्थिति में नहीं रह सकता। समूह का निर्माण वह सुरक्षा, शिक्षा, साहसिक कार्य एवं अन्वेषण, उपचार, उन्नति, सलाह, प्रशासन, सहयोग, एकीकरण तथा नियोजन के लिये करता है। परन्तु इन कार्यों में कभी–कभी उसे कठिनाई का अनुभव होता है और जब तक इन कठिनाइयों को दूर नहीं किया जाता है, तब तक समूह ठीक प्रकार से कार्य नहीं कर सकता है। सामाजिक सामूहिक कार्यप्रणाली का विकास इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया जाता है। कार्यकर्ता सामूहिक कार्यप्रणाली द्वारा समूह सदस्यों के विकास उन्नति, शिक्षा एवं सांस्कृतिक प्रगति पर जोर देता है। सामूहिक कार्य व्यक्ति के सामाजिक विकास का एक मौलिक ढंग है। इसका स्वरूप मनोरंजनात्मक एवं विकासात्मक है। कार्यकर्ता सदस्यों के साथ चाहे

जिस स्तर से कार्य करना चाहे। उसका उद्देश्य निरंतर विकास करना होता है। अपनी क्रियाओं खेलकूद, संगीत, नृत्य, सिलाई, पेंटिंग इत्यादि द्वारा वह शारीरिक तथा मानसिक निपुणताओं का विकास करता है। वार्तालाप शिक्षण एवं विचार–विमर्श द्वारा वह आदान–प्रदान की भावना का विकास करता है। इन सभी क्रियाओं में कार्यकर्ता का उद्देश्य व्यक्ति का सामूहिक चिंतन (Group thinking) तथा सामूहिक क्रिया (group action) करने की योग्यता का विकास करना है।

सामूहिक कार्यकर्ता की भूमिका

सामूहिक कार्यकर्ता समूह की आवश्यकता एवं सामूहिक स्थितियों की मांग के अनुरूप अनेक प्रकार की भूमिका पूरी करता है। सामूहिक सामाजिक कार्यकर्ता की प्रमुख भूमिका निम्नलिखित है–

(अ) समूह के साथ

(1) सार्थकता की भूमिका –कार्यकर्ता समूह सदस्यों को अपनी आवश्यकताओं एवं समस्याओं को समझने में सहायता करता है। वह उन श्रोतों को बतलाता है, जिनसे आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकती है तथा सदस्य सहयोग ले सकते है। वह समूह निर्माण के लिये व्यक्तियों में अपनी वर्तमान स्थिति के प्रति असंतोष उत्पन्न करता है। जिससे वे परस्पर सहयोग एवं संयुक्त प्रयास के लिए एकत्रित होता है। वह सर्व सम्मति के आधार पर समूह का निर्माण करता है। वह सदस्यों में अपनी समस्याओं के समाधान करने की व्यक्ति विकसित करता है तथा कार्यक्रमों के चयन की योग्यता का विकास करता है। वह सभी सदस्यों के भागीकरण को बढ़ावा देता है।

(2) पथ प्रदर्शक के रूप में –वह सदस्यों को संस्था व समुदाय की सुविधाओं एवं अन्य श्रोतों से अवगत करता है। जिनकी उन्हें आवश्यकता तो है, परन्तु वे जानते नहीं है। वह सदस्यों की अपनी भूमिका का एहसास कराता है तथा आवश्यकता मुद्दों को स्पष्ट करता है। आवश्यकता पड़ने पर प्रत्यक्ष रूप से समूह को सहायता करता है। वह सामूहिक अन्तःक्रिया का निर्देशन करता है।

(3) अधिवक्ता के रूप में –कार्यकर्ता सदस्यों की समस्याओं को उच्च अधिकारियों के समक्ष रखता है तथा आवश्यक सेवायें प्रदान करने की सिफारिश करता है। वह संस्था की नीतियों कार्यक्रमों व योजनाओं में परिवर्तन करने की भी सिफारिश करता है।

(4) विशेषज्ञ के रूप में –कार्यकर्ता सदस्यों को आवश्यकता पड़ने पर विशेष सलाह देता है। वह समूह समस्या का विश्लेषण करता है तथा उसका निदान करता है। समूह को विधिवत तथा अधिक प्रभावकारी होने के लिए उपयुक्त तरीके बतलाता है वह संस्था व समूह के कार्यक्रमों का मूल्यांकन करता है।

(5) चिकित्सक के रूप में – कार्यकर्ता समूह की कुछ समस्याओं का प्रयास पहले करता है, जो आत्यधिक महत्वपूर्ण है और जिनकी जड़ें काफी गहरी है। वह समूह को उन शक्तियों से परिचय करवाता है। जो विघनात्मक है तथा जिनका प्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ता

है वह के समूह को इस प्रकार से प्रेरित करता है, जिससे सदस्य स्वयं परिवर्तन की मांग करते हैं। वह सदस्यों के अंत को सुदृढ़ करता है।

(6) परिवर्तक के रूप में –कार्यकर्ता सदस्यों की आदतों में परिवर्तन लाने के लिए अनेक

कार्यक्रम करता है, क्योंकि कभी–कभी आदतों के कारण ही समस्या उठ खड़ी होती है और परिवार व समाज में विघटन उत्पन्न कर देती है। कार्यकर्ता सदस्यों के कार्य करने के तरीकों में भी परिवर्तन लाने का प्रयास करता है, कार्यकर्ता सदस्यों के कार्यों में भी परिवर्तन लाने का प्रयास करता है।

(7) सूचनादाता के रूप में –कार्यकर्ता समूह सदस्यों को संस्था से क्या–क्या सुविधा प्राप्त हो सकती है और वे उनसे क्या लाभ उठा सकते हैं, परन्तु संस्था की आवश्यक शर्तों को पूरा करना होगा, अतः उन्हें भी विस्तार से समझाता है।

(8) सहायक के रूप में –कार्यकर्ता समूह की सहायता लक्ष्य निर्धारण तथा लक्ष्यों को प्राप्त करने के तरीकों को निश्चित करने के तरीकों को निश्चित करने में करता है, वह संस्था से सहायता लेने में समूह की मदद करता है। समूह में सामूहिक चेतना तथा सामूहिक भावना विकसित होने के लिए समूह की सहायता करता है।

(ब) प्राथमिक कार्यकर्ताओं का अधीक्षण

सामूहिक कार्यकर्ता समूह की सहायता करने के पश्चात कार्यकर्ताओं की ओर अपना ध्यान आकृष्ट करता है। वह यहां अधीक्षण की भूमिका अदा करता है। जिसके द्वारा समूह की अप्रत्यक्ष ढंग से सहायता करता है। वह उनमें ज्ञान एवं अनुभव की वृद्धि करता है तथा नये–नये तरीकों को समझाता है और निपुणताओं का विकास करता है। अधीक्षक अपने तथा दूसरे व्यक्तियों के संबंध में और सामाजिक स्थिति तथा संस्था के कार्यों के विषय में अपने ज्ञान एवं सूझ के आधार पर कार्यकर्ताओं की सहायता कार्य को पूर्ण करने तथा उन उद्देश्यों को प्राप्त करने में करता है जिसके लिए संस्था संगठित की गयी है।

वह कार्यकर्ताओं में सामूहिक कार्य के दर्शन का विकास करता है वह उनको अपनी सीमाओं को समझने में मदद करता है। वह उनकी सहायता करता है जो सहायता चाहते हैं तथा उनकी भी जो कार्य को समझ नहीं पाते हैं और विफलता और भाग्यवश की स्थिति उत्पन्न कर लेते हैं। इस प्रकार से वह कार्यकर्ताओं की चारों तरफ से सहायता करता है।

(स) सामूहिक कार्य प्रदान करने वाली संस्थाओं एवं विभागों का प्रशासन

सामाजिक सामूहिक कार्य का तीसरा महत्वपूर्ण क्षेत्र प्रशासन है। इसके अन्तर्गत वह सामाजिक संस्थाओं का संगठन इस आधार पर करता है जिससे सेवार्थियों को अधिक से अधिक लाभ पहुंचा सके। उसका उद्देश्य सामूहिक क्रियाओं को उचित प्रकार से सम्पन्न करनातथा रूकावटों को दूर करना है, प्रशासकीय सेवाओं का सम्बन्ध सामाजिक सेवा को लाभप्रद तरीकों द्वारा समूहों तक पहुंचाना है। कार्यकर्ता यहां पर नियोजन संगठन कर्मचारियों के चयन तथा उनके नियंत्रण निर्देशन सहयोग अभिलेखन सहयोग तथा बजट क्रियाओं मेंभाग लेता है।

नियोजन के द्वारा वह भविष्य की योजनाओं को निर्धारित करता है तथा अपनी सीमाओं को ध्यान रखकर उद्देश्य निर्धारित करता है, जिससे समय पड़ने पर परिवर्तन हो सके तथा सभी सदस्य एवं कर्मचारी उसको समझ सकें। संगठन के कार्यों में वह औपचारिक संरचना का निर्माण करता है। जिससे संस्था के सभी सदस्य एक दूसरे से भावात्मक रूप से सम्बन्ध स्थापित कर सके। प्रत्येक कर्मचारी का कार्य स्पष्ट होता है तथा कार्यक्रम की प्रक्रिया व्यवस्थित रूप से संचालित होती है।

(द) सामाजिक सामूहिक कार्यसेवाओं को प्रदान करने वाली संस्थाओं के लिए सामुदायिक नियोजन

कार्यकर्ता संस्था के लिए सामुदायिक नियोजन करता है, जिससे उसकी उपयोगिता बढ़ती है तथा उसकी आवश्यकता का भान होता है, वह समुदाय की अवस्थाओं जैसे शिक्षा आर्थिक स्थिति व्यवसाय, सांस्कृतिक तथा अन्य विभिन्नताओं के आधार पर कार्यक्रम का नियोजन करता है, वह समुदाय के रीति रिवाजों का भी ध्यान रखता है वह समुदाय में समूह निर्माण की आवश्यकता एवं उपादेयता संबंधी जनजाति को बढ़ावा देता है। वह समुदाय के विशिष्ट व्यक्तियों का समूह से सम्पर्क कराता है और इस प्रकार उनका सहयोग प्राप्त करता है, समूह के हित में वह सांस्कृतिक एवं सामाजिक मूल्यों का परिमार्जन करता है। कार्यकर्ता के लिए सामुदायिक नियोजन वह साधन है। जिसके द्वारा संस्थाएं व्यक्ति समूह तथा संगठन ऐच्छिक रूप से समुदाय के स्वास्थ तथा कल्याणकारी कार्यों में भाग लेते हैं वह समुदाय की समस्याओं का अध्ययन करता है और उन पर शोधकार्य करता है। तत्पश्चात सेवाओं की उपयोगिता तथा उपयुक्तता का पता लगाकर संस्था को अवगत कराता है और नवीन सेवाओं का विकास करता है।

सारांश – सामूहिक कार्यकर्ता अपनी सेवाओं द्वारा सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करता है। व्यक्ति को स्वतंत्र विकास तथा उन्नति के लिए अवसर प्रदान करता है तथा व्यक्तित्व के सामान्य निर्माण के लिए अनुकूल परिस्थितियां उत्पन्न करता है, वह सामाजिक संबंधों को आधार मानकर विकासात्मक एवं शिात्मक क्रियाओं का आयोजन व्यक्ति की समस्याओं के समाधान के लिए करता है और इस प्रकार उसके सर्वांगीण विकास के लिए प्रयत्नशील रहता है।

मनुष्य एक सामूहिक प्राणी है । वह समूह से पृथक किसी भी स्थिति में नहीं रह सकता। समूह का निर्माण वह सुरक्षा, शिक्षा, साहसिक कार्य एवं अन्वेषण, उपचार, उन्नति सामा. प्रशासन सहयोग, एकीकरण तथा नियोजन के लिए करता है। परन्तु इन कार्यों में उसे कभी–कभी कठिनाई अनुभव होती है और जब तक इन कठिनाइयों को दूर नहीं किया जाता है तब तकउसका समूह ठीक प्रकार से कार्य नहीं कर सकता है। सामाजिक सामूहिक कार्य–प्रणाली का विकास इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया गया है। कार्यकर्ता सामूहिक कार्य–प्रणाली द्वारा समूह सदस्यों के विकास, उन्नति, शिक्षा एवं सांस्कृतिक प्रगति पर जोर देता है। सामूहिक कार्य व्यक्ति के सामाजिक विकास का एक मौलिक ढंग है। इसका स्वरूप मनोरंजनात्मक तथा विकासात्मक है। कार्यकर्ता सदस्यों के साथ चाहे जिस स्तर से कार्य करना प्रारम्भ करे, उद्देश्य निरन्तर विकास करना होता है। अपनी क्रियाओं (खेलकूद, संगीत, नृत्य, सिलाई, पेंटिंग इत्यादि) द्वारा यह शारीरिक तथा मानसिक निपुणताओं का विकास करता है। वार्तालाप शिक्षण एवं विचार विमर्श द्वारा वह

आदान–प्रदान की भावना का विकास करता है। इन सभी क्रियाओं में कार्यकर्ता का उद्देश्य व्यक्ति में सामूहिक चिंतन तथा सामूहिक क्रिया करने की योग्यता का विकास करना है।

विल्सस एण्ड राइलैण्ड रू सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य एक प्रक्रिया और एक प्रणाली है। जिसके द्वारा सामूहिक जीवन एक कार्यकर्ता द्वारा प्रभावित होता है जो समूह की परस्पर सम्बन्धी प्रक्रिया को उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये सचेत रूप से निर्देशित करता है। जिससे प्रजातांत्रिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।

कार्यक्रमों में भूमिका का निर्वाहन

(अ) समूह से सम्बन्धित कार्य

1. समूह निर्माण रू कार्यकर्ता व्यक्तियों की रुचियों, इच्छाओं, मनोवृत्तियों आदि का अध्ययन करता है और कुछ सामान्य नियमों के आधार पर एक समूह के रूप में उन्हें स्वीकार करता है। वह समूह का निर्माण प्रेरणा तथा सामाजिक अभिकरण की आवश्यकतानुसार करता है। वह साक्षात्कार के उपरान्त एक ऐसी मान्य शर्त का निश्चय एवं विकास करता है। जो व्यक्तियों को एक सूत्र में बांधती है। कार्यकर्ता व्यक्तियों की अन्तर्निहित बौद्धिक शक्तियों का ज्ञान प्राप्त करना है। वह उनकी आर्थिक, सामाजिक, सांवेगिक तथा मनोविज्ञानिक परिस्थितियों का अध्ययन करता है। टाम डगलस ने निम्न कार्य सूची का उल्लेख किया है–

1. कार्यकर्ता निश्चित करता है कि किस प्रकार के समूह का निर्माण करने जा रहा मनोरंजनात्मक, शिक्षात्मक, सामाजिक उपचार के लिए अथवा मिश्रित।

2. कार्य–प्रणाली क्या होगी खेल, ड्रामा, भूमिका अभिनय, वार्तालाप, कार्य अनुभव आदि।

3. स्थान कौन सा उपयुक्त होगा।

4. प्रत्येक सेसन कितने समय का होगा।

5. समूह एकत्रित होने की बारम्बार क्या होगा।

6. समूह की अवधि क्या होगी।

7. मिलने का समय क्या होगा।

8. आवागमन की सुविधा क्या है और सदस्य किस प्रकार संस्था में आयेंगे।

9. सैद्धान्तिक आधार क्या होगा अर्थात समूह संचार का माध्यमक्या होगा।

10. समूह का मुख्य उद्देश्य क्या है।

11. क्या प्रस्तावित समूह संस्था की नीतियों के अनुकूल है।

2– कार्यक्रम नियोजित करने में सहायता करना

यद्यपि समूह सदस्य स्वयं अपने कार्य को संगठित एवं नियोजित करते हैं परन्तु कार्यकर्ता का कार्य महत्वपूर्ण होता है। वह समूह की सहायता कार्यक्रम को अधिक प्रभावशाली एवं रचनात्मक बनाने में करता है। जिससे अधिक से अधिक समूह की आवश्यकतायें पूरी हो सकें। वह कार्यक्रम नियोजित करने के लिए आवश्यक दिशा–निर्देश देता है। क्योंकि यह कार्य आयु अथवा बौद्धिक स्तर पर निर्भर नहीं होता है। बल्कि अनुभव पर निर्भर होता है। बच्चों के समूहों के साथ वह अधिकाधिक कार्यक्रमों का सुझाव कराता है और वे उनमें से किसी एक का चयन करते हैं, जब वह ऐसे समूहों के साथ कार्य करता है। जिनमें सामाजिक बौद्धिक या मानसिक मंदित लोग होते हैं, तो उसकी भूमिका कार्यक्रम के निर्धारण एवं विकास में अधिक रहती है। इस प्रकार की सहायता उन समूहों के लिए भी आवश्कता होती है।

जिनमें सामूहिक कार्य एक उपचार क्रिया के रूप में उपयोग किया जाता है।

कार्यकर्ता सदस्यों के सम्बन्धों को दृढ़ करता है। वह देखता है कि कार्यक्रम में सभी सदस्य भाग ले रहे हैं अथवा नहीं जो नहीं भाग ले रहे हैं उन व्यक्तियों को भाग लेने में सहायता करता है। कभी–कभी समूह में कार्यक्रम को लेकर दो वर्ग बन जाते हैं। एक पक्ष में तथा दूसरा विपक्ष में कार्यकर्ता इस स्थिति में अपनी व्यावसायिक निपुणता द्वारा ऐसे कार्यक्रम को स्वीकार करने की सलाह देता है। उनको अधिक से अधिक लाभ पहुंचा सकते हैं। अधिकतर कार्यक्रम वार्तालाप के माध्यम से नियोजित किये जाते हैं। कार्यकर्ता वार्तालाप को इस प्रकार निर्देशित करता है कि समूह सदस्य किसी प्रकार का बाहरी दबाव नहीं महसूस करते हैं।

3– समूह की रूचियों की खोज करना

व्यक्तियों की आयु, शिक्षा, आर्थिक स्थिति, व्यवसाय, संस्कृति तथा अन्य भिन्नताओं के कारण उनकी रुचियों में भिन्नता होती है। अतः कार्यक्रमों को निश्चित करना अत्यन्त कठिन होता है। कार्यकर्ता व्यक्तियों के साक्षात्कार के द्वारा उनकी सामान्य रुचियों की सूची तैयार करता है। इसके साथ ही साथ अपने सामान्य ज्ञान से रुचियों एवं आवश्यकताओं का पता लगाकर उनके स्तर का निर्धारण करता है।

4– उत्तरदायी भागीकरण का विकास करना

समूह सामूहिक कार्य का यह दृढ़ विश्वास है कि जब सदस्य वास्तव में हैं तथा उत्तरदायी ढंग से व्यवहार करते हैं तो व्यक्ति पर समूह का प्रभाव अधिक शक्तिशाली होता है। ऐसा समूह सामाजिक परिवर्तन के लिये अत्यन्त उपयोग एवं उपयुक्त होता है। अतः कार्यकर्ता सदैव इस प्रयास में रहता है कि जहां तक सम्भव हो सदस्य समूह को अपना समूहसमझे तथा कार्यों के प्रति स्वतः स्फूर्ति आये, सदस्यों में जब समूह के प्रति तो उनमें पारस्परिकता भी बढ़ जाती है। सम्बद्धता की स्थिति की निम्न दर्शाये हैं।

1. जो सदस्य अपनी सम्बद्धता समूह से वास्तविक रूप में रखता है, वह समूह के उद्देश्यों को स्वीकार करता है। उनकी व्याख्या करता है तथा उनकी प्राप्ति के लिए कार्य करता है।

2. जब उद्देश्यों के बदलने की आवश्यकता होती है तो वह सभी तथ्यों को समूह के सामनेरखता है।

3. करने की वह अपनी क्षमता एवं शक्ति के अनुरूप अपनी भूमिका पूरी करने का प्रयत्न करता है वहअपनी शक्ति का समुचित उपयोग करता है।

4. समूह का आधारस्तम्भ बनता है तथा दूसरों को उसी प्रकार बनने व अनुभव सलाह देता है, आवश्यकतानुसार उनकी मदद करता है।

5. कार्यकर्ता किसी भी सदस्य को आंवश्यकता से अधिक प्रभावकारी नहीं होने देता।

5– अन्तः क्रिया का निर्देशन

समूह के सदस्यों के बीच कुछ न कुछ प्रतिक्रिया अवश्य होती है, जिसे सामूहिक कार्य में अन्तःक्रिया कहते है। यद्यपि कार्यक्रम की विषयवस्तु संगठन, रूचियों व आवश्यकताओं महत्वपूर्ण होती है परन्तु सबसे महत्वपूर्ण है। सदस्यों के संवेग एवं भावनायें हैं जिनको समझना कार्यकर्ता के लिए नितान्त आवश्यक है। कार्यकर्ता का प्राथमिक कार्य अन्तः क्रिया का निर्देशन करना होता है। क्योंकि समूह स्वयं व्यक्तित्व के विकास का मुख्य मन्त्र है। कार्यकर्ता सदस्यों की अन्तःक्रियाओं का अवलोकन करता है अन्तःक्रिया उस समय होती है जब सदस्य एक–दूसरे के व्यवहार में भाग लेते हैं। कार्यकर्ता देखता है कि कौन सदस्य क्या कर रहा है, कितनी बार प्रयास कर रहा है। कार्य करने में कितना समय ले रहा है। विषयवस्तु का तारतम्य क्या है, किसतरह प्रयास कर रहा है। कार्य करने तथा प्रतिक्रिया करने का तात्पर्य क्या है? इत्यादि।

ट्रेकर ने निम्नलिखित क्षेत्रों का ज्ञान कार्यकर्ता को बताया–1. कार्य का विवरण, 2. बारम्बारता, 3 अवधि, 4. भाग लेने का क्रम5. अन्तःक्रिया की दिशा 6 अन्तःक्रिया की विषयवस्तु

6– नेतृत्व का विकास करना

समूह सदस्य योग्यताओं तथा क्षमताओं में भिन्न–भिन्न होते हैं, उनमें नेतृत्व की क्षमता भी भिन्न भिन्न होती है। अतः कार्यकर्ता का उत्तरदायित्व होता है कि वह सदस्यों का पता लगाये जिनमें सकारात्मक नेतृत्व के गुण विद्यमान है और वे उत्तरदायित्व को ग्रहण कर सकते हैं। यदि समूह को अपना कार्यक्रम चलाना है तो यह आवश्यक है कि नेतृत्व भी उन्हीं सदस्यों में से हो अन्यथा कार्यकर्ता को यह कार्य करना होगा जो कि न तो समूह के लिए हितकर है और न ही समूह – सिद्धान्तों के अनुकूल है। कार्यकर्ता पहले उन सदस्यों की सहायता करता है। जो नेतृत्व का कार्य करते हैं तथा कार्यक्रम क्रियाओं को पूरा करने में अगुवाई करते है। जिससे वे अधिक सक्रियता से अपनी भूमिका का निर्वाह कर सके। तदुपरान्त प्रत्येक सदस्य को ऐसे अवसर देने का प्रयत्न करता है, जहां पर वे अपनी इस शक्ति का मूल्यांकन कर सकें और अनुभव प्राप्त कर सके।

कार्यकर्ता समूह द्वारा चुने हुये नेता को अपने कर्तव्यों को पूरा करने में सहायता करता है, वह इसके साथ निरन्तर सम्पर्क बनाये रखता है तथा इस प्रकार से निर्देशित करता है। जिससे समूह का प्रिय सदस्य हो जाता है, वह समूह के प्रत्येक सदस्य को किसी न किसी समूह नेता कार्य के नेतृत्व का उत्तर दायित्व देता है। जिससे एक ओर समूह में श्रेष्ठता निम्नता की भावना नहीं भातीं और दूसरी ओर नेतृत्व का अनुभव प्राप्त होता है। जिससे अपने सामाजिक जीवन में दुर्बलतापूर्वक समस्या का समाधान कर लेता है।

7– वैयक्तीकरण करना

1. कार्यकर्ता समूह को संस्था के बारे में बतलाता है, लेकिन प्रत्येक सदस्य की अपनी रूचि के अनुकूल उपलब्ध साधनों के उपयोग करने की सलाह देता है। संस्था में सेवार्थी माता है। वह संस्था के विषय में सम्पूर्ण जानकारी चाहता है तथा यह भी चाहता है कि कार्यकर्ता उसकी भी समस्या समझे और उसके अनुरूप सलाह दें।

2. कार्यकर्ता प्रत्येक सदस्य की विशेषताओं, रूचियों तथा आवश्यकताओं को पृथक–पृथक समझता है तथा समूह से उसका परिचय करवाता है।

3. वह प्रत्येक सदस्य को उनके उत्तरदायित्व को पूरा करने की सलाह देता है । आवश्यक ज्ञान प्रदान करता है। कार्य का स्तर निश्चित करता है तथा अपने कार्य का मूल्यांकन करने के तरीके बतलाता है।

4. जब सदस्य अति उग्रात्मक व्यवहार अथवा प्रत्याहार के कारण समूह में समायोजित नहीं हो पाता है। ऐसी स्थिति में कार्यकर्ता उसके व्यवहार में परिवर्तन लाता है।

5. प्रत्येक सदस्य को अधिकाधिक उत्तरदायित्व ग्रहण करने के लिये प्रोत्साहित करता है।

6. जिन सदस्यों का समूह से लाभ नहीं हो रहा है, उन्हें समूह से पृथक करने की सलाह देता है।

7. जब सदस्य को विशेष प्रकार की सेवा की आवश्यकता होती और वह उस संस्था में उपलब्ध नहीं होती है तो कार्यकर्ता उस सदस्य को दूसरी संस्था में संदर्भित कर देता है।

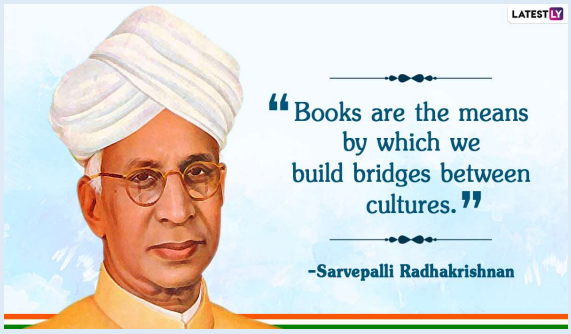

Center for Distance Learning & Continuing Education
MAHATMA GANDHI CHITRAKOOT GRAMODAYA VISHWAVIDYALAYA
Chitrakoot, Satna (M.P.) 485334
E-mail : directordistancemgcgv@gmail.com